बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 242

नीतिगत ढांचा

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) की विभिन्न देशों की रिपोर्ट, जो बुधवार को जारी की गई, भारत की वृहद आर्थिक स्थिरता को दर्शाती है और नीतिगत चर्चा के लिए कुछ उपयोगी संकेत प्रदान करती है। आईएमएफ का अनुमान है कि चालू वर्ष में भारतीय अर्थव्यवस्था 6.6 फीसदी की दर से बढ़ेगी। वर्ष 2026-27 में वृद्धि दर घटकर 6.2 फीसदी रहने का अनुमान है। आईएमएफ की बुनियादी धारणा में अमेरिका द्वारा लगाए गए 50 फीसदी शुल्क का बहुत लंबे समय तक बने रहना शामिल है। इस पर सरकार ने उचित रूप से आपत्ति की है। भारत, अमेरिका के साथ जल्द ही एक समझौते पर पहुंचने के उद्देश्य से वार्ता कर रहा है। आईएमएफ आगे यह भी कहता है कि कॉरपोरेट और वित्तीय क्षेत्र पर्याप्त पूंजी सुरक्षा के साथ लचीले बने हुए हैं। सरकार राजकोषीय मजबूती के मार्ग पर आगे बढ़ रही है और चालू खाते का घाटा मध्यम और प्रबंधन योग्य बना हुआ है।

रिपोर्ट देश के वृहद आर्थिक प्रबंधकों के लिए कुछ सुझाव भी देती है। उनमें से कुछ यहां चर्चा करने लायक हैं। मुद्रा प्रबंधन के संदर्भ में आईएमएफ का तर्क है कि अधिक लचीलापन बाहरी झटकों से बचने में मदद करेगा और विदेशी मुद्रा के संग्रहण की जरूरत कम करेगा। आईएमएफ ने भारत के विदेशी मुद्रा प्रबंधन को वर्ष 2023 में स्थिर व्यवस्था के रूप में वर्गीकृत किया था। हालांकि आईएमएफ कहता है कि हस्तक्षेप कम हुए हैं लेकिन अब उसने इसे 'क्रॉल लाइक' व्यवस्था के रूप में वर्गीकृत किया है। इस व्यवस्था में विनिमय दर छह माह तक या उससे अधिक समय तक सांख्यिकीय रुझान के सापेक्ष 2 फीसदी की सीमा में बनी रहती है। रिजर्व बैंक का घोषित रुख यह है कि वह किसी स्तर को लक्ष्य करके नहीं चलता है और केवल बाजार में उतार चढ़ाव को थामने के लिए हस्तक्षेप करता है।

यह बात ध्यान देने लायक है कि भारत में महामारी के दौरान बड़े पैमाने पर आवक हुई क्योंकि बड़े केंद्रीय बैंकों ने नीतिगत ब्याज दर को कम करके शून्य के करीब कर दिया और व्यवस्था में ढेर सारी नकदी डाली। वर्ष 2022 में बड़े पैमाने पर पूंजी का बहिर्गमन देखा गया क्योंकि वैश्विक केंद्रीय बैंकों ने उच्च महंगाई से निपटने के लिए समन्वित रूप से ब्याज दरें बढ़ाईं। यह कहा जा सकता है कि यदि रिजर्व बैंक ने उन दोनों अवसरों पर हस्तक्षेप न किया होता, तो रुपये में भारी उतार-चढ़ाव देखने को मिलता, जिससे व्यवसायों पर नकारात्मक असर पड़ता। इस प्रकार, विदेशी मुद्रा बाजार में आरबीआई की अधिकांश गतिविधियां भारत को पश्चिमी नीतिगत बाहरी प्रभावों से बचाने के लिए होती हैं। लेकिन यह भी स्वीकार करना होगा कि कुछ मात्रा में अस्थिरता आवश्यक है और रिजर्व बैंक का हस्तक्षेप विदेशी मुद्रा बाजार को गहराई देने की प्रक्रिया में बाधा नहीं बनना चाहिए।

राजकोषीय प्रबंधन की बात करें तो आईएमएफ ने कहा कि 2026 में सकल घरेलू उत्पाद के आधार की समीक्षा के बाद भारत को ऋण लक्ष्यों की समीक्षा करनी चाहिए और उन्हें अधिक महत्त्वाकांक्षी बनाना चाहिए। सार्वजनिक ऋण को तेजी से कम करने का विचार सही है। इससे नीतिगत गुंजाइश बढ़ेगी और व्यय की गुणवत्ता में सुधार होगा। यह भी अनुशंसा की गई है कि ऋण एंकर (ऋण-जीडीपी अनुपात का लक्ष्य) का विस्तार करके इसमें राज्य सरकारों के ऋण को शामिल करना चाहिए। इसके लिए मौजूदा ढांचे में कुछ बदलाव करने होंगे ताकि राज्य स्तर पर ऋण के बोझ को कम करने पर भी ध्यान केंद्रित किया जा सके। इसके अतिरिक्त, वार्षिक राजकोषीय समायोजन मार्ग वित्तीय बाजारों को यह जानकारी देगा कि मध्यम अवधि के लक्ष्यों को कैसे प्राप्त किया जाएगा। आईएमएफ ने एक स्वतंत्र राजकोषीय पर्यवेक्षण निकाय के पक्ष में भी तर्क दिया है। एक स्वतंत्र राजकोषीय निकाय भारत की समग्र नीतिगत संरचना में एक अनुपस्थित कड़ी है, जो वर्षों में काफी बेहतर हुई है। ऐसा निकाय वित्तीय बाजारों के लिए एक बड़ा विश्वास बढ़ाने वाला कदम होगा और सरकार को इसे सक्रिय रूप से विचार करना चाहिए। हाल के कुछ सुधार, जैसे माल एवं सेवा कर का सरलीकरण और श्रम संहिताओं का क्रियान्वयन वृद्धि को समर्थन देंगे। अमेरिका के साथ-साथ सरकार यूरोपीय संघ सहित अन्य व्यापारिक साझेदारों के साथ भी व्यापार समझौतों पर बातचीत कर रही है। इन समझौतों का शीघ्र पूरा होना मध्यम अवधि की वृद्धि संभावनाओं को बेहतर करेगा।

देश में नीति निर्माण का नया चरण

समिति आधारित रुख ने कई सुधारों को अंजाम देने में सरकार की बहुत अधिक मदद की है। इसने आने वाले महीनों में और अधिक सुधारों की उम्मीदें बढ़ा दी हैं। बता रहे हैं एके भट्टाचार्य

केंद्र सरकार के नीति निर्माता उत्साहित नजर आ रहे हैं। संसद द्वारा पांच साल पहले पारित चार श्रम संहिताओं को लेकर हाल ही में जारी की गई अधिसूचना शायद इस नतीजे पर पहुंचने की सबसे ताजा वजह है। यकीनन बहु-प्रतीक्षित श्रम संहिताओं को अधिसूचित किया जाना जिनमें 29 वर्तमान श्रम कानूनों को सरलीकृत करने और उपयुक्त बनाने के बाद समाहित किया गया है, यह मानने का उचित कारण है कि नरेंद्र मोदी सरकार अतीत की तुलना में सुधारों को लेकर अधिक अनुकूल है।

परंतु अर्थव्यवस्था में सुधारों की जरूरत के प्रति सरकार के प्रयास में आया बदलाव उतना सरल नहीं है जितना विश्लेषकों ने अब तक समझा है। बीते दिनों श्रम संहिताओं के साथ जो हुआ, वह भारत की राजनीतिक अर्थव्यवस्था और उसके आर्थिक सुधारों की गति के बीच बदले हुए समीकरण का भी प्रतिबिंब है। यह परिवर्तन धीरे-धीरे हुआ है, जिसकी शुरुआत जून 2024 में तीसरी बार मोदी सरकार के गठन के तुरंत बाद हुई थी। इसके स्वरूप और चरित्र तुरंत स्पष्ट नहीं थे लेकिन जब आप पिछले 17 महीनों में सरकार द्वारा लिए गए अनेक निर्णयों पर नजर डालते हैं, तो यह बदलाव अब स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा है।

मोदी सरकार के गठन के करीब दो महीने बाद विभिन्न केंद्रीय मंत्रालयों में कई वरिष्ठ पदों पर ऐसे लोगों को नियुक्त किया गया जो सरकारी व्यवस्था से बाहर के थे। सरकार की लैटरल-एंट्री योजना के तहत 45 पदों के लिए आवेदन आमंत्रित करने वाली एक अधिसूचना 17 अगस्त, 2024 को जारी की गई थी। लेकिन दो दिन बाद, इस विचार का सरकार के भीतर और बाहर राजनीतिक विरोध तेज होने पर वह अधिसूचना वापस ले ली गई। वह अधिसूचना केवल वापस नहीं ली गई, बल्कि निजी क्षेत्र की प्रतिभा को शामिल करके सिविल सेवा को मजबूत करने का पूरा विचार ही दफन कर दिया गया। यह सुधारों के लिए एक झटका था, जिसने यह संदेश दिया कि सरकार ऐसे किसी सुधार को अपनाना नहीं चाहती जो अफसरशाहों को नाराज कर सकता हो।

उसी महीने के अंत में हालात थोड़ा बदले। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने यूनिफाइड पेंशन स्कीम (यूपीएस) शुरू करने के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी ताकि सरकारी कर्मचारियों को राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली (एनपीएस) का विकल्प दिया जा सके। एनपीएस कई राज्यों में इसलिए निशाने पर थी क्योंकि वह गारंटीड पेंशन की पेशकश नहीं करती थी। इसके विपरीत यूपीएस में सेवा के अंतिम महीने में मिलने वाले औसत मासिक वेतन के 50 फीसदी के बराबर गारंटीड पेंशन की बात कही गई। परंतु राजकोष पर इसके असर को कम करने के लिए अन्य कई अर्हताओं में परिवर्तन किया गया।

शुरुआत में आशंका थी कि यूपीएस को राजनीतिक प्रतिरोध का सामना करना होगा और यह सरकारी कर्मचारियों की चिंताओं को दूर करने में कामयाब नहीं हो सकेगा। परंतु वे डर निराधार साबित हुए। इसकी कई वजहें थीं। कांग्रेस अध्यक्ष और पार्टी के अन्य प्रमुख लोगों ने यूपीएस पर निर्णय का स्वागत किया था। कैबिनेट बैठक में यूपीएस को मंजूरी मिलने के तुरंत बाद पीएम मोदी ने केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों के लिए संयुक्त परामर्श मशीनरी के एक प्रतिनिधिमंडल से मुलाकात की। उस प्रतिनिधिमंडल ने कर्मचारियों को सुनिश्चित पेंशन देने की इस पहल का स्वागत किया। राष्ट्रीय ट्रेड यूनियनों ने चुप्पी साधे रखी, और अप्रैल 2025 से इसका क्रियान्वयन अब तक सुचारु रूप से चल रहा है।

एनपीएस से यूपीएस में आने का विकल्प शुरू में कर्मचारियों के लिए केवल तीन महीने, यानी जून 2025 के अंत तक ही उपलब्ध था। इसके बाद इसे दो बार बढ़ाया गया और अब यह विकल्प चुनने का अंतिम दिन इसी महीने का अंत है। लेकिन अधिकांश केंद्रीय सरकारी कर्मचारी एनपीएस में ही बने हुए हैं, और सितंबर 2025 के अंत तक 23 लाख कर्मचारियों में से केवल लगभग 1 लाख ने यूपीएस को चुना है। केवल महाराष्ट्र ने यूपीएस को अपनाया है, जबकि अधिकांश अन्य राज्यों ने कोई बदलाव नहीं किया है। एनपीएस से यूपीएस में आने की अंतिम तारीख फिर से बढ़ाई जा सकती है, लेकिन जो एक बड़ा राजनीतिक मुद्दा प्रतीत हो रहा था, उसे बहुत कम राजनीतिक विरोध और सीमित वित्तीय लागत के साथ संभाल लिया गया है।

पिछले 17 महीनों में उन योजनाओं को धीरे-धीरे टालने और पीछे धकेलने की प्रवृत्ति देखी गई है, जो संरक्षणवादी स्वभाव की रही हैं। इसके अलावा वित्त मंत्रालय द्वारा कई आयात शुल्कों को युक्तिसंगत बनाया गया है, जो एक लगातार चलने वाली कवायद का हिस्सा प्रतीत होता है। अगस्त 2023 में सरकार ने लैपटॉप, पर्सनल कंप्यूटर, टैबलेट और कंप्यूटर सर्वर के आयात पर लाइसेंस संबंधी प्रतिबंधों की घोषणा की थी। लेकिन उपयोगकर्ताओं और उद्योग के लिए राहत की बात यह रही कि इन प्रतिबंधों के लागू होने को कम से कम चार बार टाला गया है, और नवीनतम विस्तार दिसंबर 2025 के अंत तक है। सरकार के वर्तमान रुख को देखते हुए, आने वाले महीनों में आयात प्रबंधन प्रणाली लागू होने की संभावना कम है। लेकिन यह तथ्य चिंता का कारण है कि ऐसी योजना अभी भी कागज पर मौजूद है।

गुणवत्ता नियंत्रण आदेशों (क्यूसीओ) के विचार के प्रति सरकार का रुख कुछ अधिक आश्वस्त करने वाला रहा। हाल तक, 2016 से 2025 के बीच लगभग 720 क्यूसीओ जारी किए गए थे। मूल रूप से क्यूसीओ का उद्देश्य उन उत्पादों में गुणवत्ता मानकों को सुनिश्चित करना था जो आयात के माध्यम से देश में आते हैं। लेकिन समय के साथ ये गैर-शुल्क बाधाएं बनाने का आसान साधन बन गए। जब क्यूसीओ को कच्चे माल और मध्यवर्ती उत्पादों पर लागू किया गया, तो इसने घरेलू उद्योग की प्रतिस्पर्धात्मकता को भी कमजोर किया। यह दर्शाते हुए कि पिछले कुछ महीनों में मोदी सरकार का दृष्टिकोण कैसे बदला है, एक उच्च-स्तरीय आधिकारिक समिति ने 208 क्यूसीओ को वापस लेने की सिफारिश की है, जो सभी कच्चे माल और मध्यवर्ती उत्पादों पर लागू किए गए थे। क्यूसीओ के मोर्चे पर कार्रवाई तेज रही है। अब तक 69 क्यूसीओ निलंबित किए जा चुके हैं, जिससे यह संभावना मज़बूत हो गई है कि कच्चे माल और मध्यवर्ती उत्पादों पर लागू अधिकांश क्यूसीओ जल्द ही वापस ले लिए जाएंगे।

ये सभी बदलाव ऐसे माहौल में हो रहे हैं जहां सरकार ने कराधान व्यवस्था को भी थोड़ा अनुकूल बना दिया है। सालाना 12 लाख रुपये तक की आय को लगभग कर मुक्त कर दिया गया है और माल एवं सेवा कर यानी जीएसटी को भी बहुत हद तक युक्तिसंगत बनाया जा चुका है। इसमें करदाताओं का पंजीयन आसान किया गया है और नई व्यवस्था ने लोगों और कारोबार का बोझ कम किया है। सरकार यह संदेश देने में भी कामयाब रही है कि उसका जोर उन सुधारों पर है जो कारोबारी सुगमता बढ़ाने वाले हैं।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अब समितियां नियमों और विनियमों को सरल बनाने के लिए काम कर रही हैं ताकि वे कम बोझिल हों। यदि सरकार कई क्षेत्रों में सुधार लागू करने और समस्याग्रस्त योजनाओं को वापस लेने या टालने में सफल रही है, तो इसका मुख्य कारण यह है कि उसने हितधारकों के साथ समिति-आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से जुड़ने का निर्णय लिया है। सरकार की राजनीतिक अर्थव्यवस्था प्रबंधन का यही पहलू हाल के सुधारात्मक कदमों की श्रृंखला का कारण बना है और इसने आने वाले महीनों में और अधिक सुधारों की उम्मीदें बढ़ा दी हैं।

चुनौतियों के बीच बैंकों का अच्छा प्रदर्शन जारी

भारतीय बैंकों के लिए एक और अच्छी तिमाही रही जिसमें ऋण परिसंपत्तियों की गुणवत्ता उत्कृष्ट बनी हुई है। हर बैंक का शुद्ध लाभ भले ही आकर्षक न हो-कुछ बैंकों ने तो शुद्ध लाभ में गिरावट भी दर्ज की है- लेकिन पहली बार सूचीबद्ध निजी और सरकारी बैंकों (पीएसबी) का सामूहिक शुद्ध लाभ 2025-26 की सितंबर तिमाही में 1.5 लाख करोड़ रुपये का आंकड़ा पार कर गया। इसमें सालाना 4.4 फीसदी की वृद्धि हुई। जून तिमाही की तुलना में सितंबर तिमाही में इन बैंकों के समूह का शुद्ध लाभ 3.98 फीसदी बढ़ा।

दो पीएसबी को छोड़कर, जिन बैंकों ने सालाना शुद्ध लाभ में गिरावट दर्ज की है (कुछ मामलों में तिमाही आधार पर भी) वे सभी निजी क्षेत्र के हैं। शुद्ध लाभ में गिरावट की मात्रा और उसके कारण अलग-अलग हैं, संकटग्रस्त क्षेत्रों के लिए ज्यादा प्रावधान से लेकर धीमी वृद्धि या आय में गिरावट तथा ब्याज आय और शुल्क व राजकोषीय लाभ समेत अन्य आय में गिरावट। केवल इंडसइंड बैंक ने इस तिमाही में घाटा दर्ज किया।

भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआई) 20,160 करोड़ रुपये के शुद्ध लाभ के साथ सूची में शीर्ष पर रहा, उसके बाद एचडीएफसी बैंक (18,641 करोड़ रुपये), आईसीआईसीआई बैंक (12,359 करोड़ रुपये) और ऐक्सिस बैंक (5,090 करोड़ रुपये) का स्थान रहा। इन बैंकों ने सितंबर तिमाही में 5,000 करोड़ रुपये से अधिक का शुद्ध लाभ अर्जित करने वाली चौकड़ी बनाई। चार पीएसबी-पंजाब नैशनल बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा, केनरा बैंक और यूनियन बैंक ऑफ इंडिया-ने 4,000 करोड़ रुपये से अधिक का शुद्ध लाभ दर्ज किया। एक पीएसबी(इंडियन बैंक) और एक निजी बैंक (कोटक महिंद्रा बैंक) ने 3,000 करोड़ रुपये से अधिक का शुद्ध लाभ अर्जित किया।

उद्योग के लिए शुद्ध लाभ में वृद्धि तो हुई, लेकिन सालाना और तिमाही परिचालन लाभ में गिरावट आई। हालांकि, समूह के रूप में निजी बैंकों ने सितंबर तिमाही में पिछले वर्ष की इसी तिमाही की तुलना में परिचालन लाभ में मामूली वृद्धि दर्ज की, लेकिन जून तिमाही की तुलना में उनके परिचालन लाभ में भी गिरावट आई। समूह के रूप में पीएसबी के परिचालन लाभ में सालाना और तिमाही दोनों ही गिरावट देखी गई।

सवाल उठता है कि उनका परिचालन लाभ क्यों गिरा और इसके बावजूद शुद्ध लाभ कैसे बढ़ गया?

उद्योग की शुद्ध ब्याज आय (एनआईआई) में मामूली वृद्धि ही हुई और अन्य आय में भी कोई खास वृद्धि नहीं हुई है। इसीलिए परिचालन लाभ में गिरावट आई है। आय में धीमी वृद्धि के बावजूद कम प्रोविजनिंग यानी प्रावधान के कारण अधिकांश बैंकों का शुद्ध लाभ बढ़ा है।

बैंकिंग साख
तमाल बंद्योपाध्याय

एनआईआई में सालाना लगभग 2.5 फीसदी और तिमाही 1.5 फीसदी की वृद्धि हुई। कई पीएसबी और निजी बैंकों के एनआईआई में गिरावट दर्ज की गई। बड़े बैंकों में आईसीआईसीआई बैंक ने एनआईआई में 7.39 फीसदी की वृद्धि दर्ज की। एसबीआई, एचडीएफसी बैंक और ऐक्सिस बैंक की एनआईआई वृद्धि दर 5 फीसदी से कम रही।

अन्य आय की बात करें तो उद्योग ने सालाना 4.7 फीसदी की वृद्धि दर्ज की, लेकिन तिमाही आधार पर लगभग 13.5 फीसदी की गिरावट दर्ज की। एसबीआई की अन्य आय पिछले साल की सितंबर तिमाही के स्तर पर ही रही, जबकि 12 में से सात सरकारी बैंकों में गिरावट दर्ज की गई। निजी बैंकों में एचडीएफसी बैंक की अन्य आय में लगभग 25 फीसदी की वृद्धि हुई।

कुल मिलाकर, सालाना प्रावधान में सिर्फ 1.47फीसदी की वृद्धि हुई, तिमाही आधार पर इसमें 31 फीसदी की गिरावट आई। एसबीआई का प्रावधान सबसे ज्यादा 5,400 करोड़ रुपये रहा, उसके बाद ऐक्सिस बैंक (3,547 करोड़ रुपये), एचडीएफसी बैंक (3,501 करोड़ रुपये), इंडसइंड बैंक (2,622 करोड़ रुपये) और केनरा बैंक (2,354 करोड़ रुपये) का स्थान रहा।

उद्योग मामूली प्रावधान कर सकता है क्योंकि फंसे परिसंपत्तियों में कोई वृद्धि नहीं हुई है। उद्योग की सकल गैर-निष्पादित परिसंपत्तियां (एनपीए) 3.99 लाख करोड़ रुपये पर आ गईं, जो एक साल पहले की तिमाही (4.49 लाख करोड़ रुपये) से 11 फीसदी से अधिक कम है। जून तिमाही में सकल एनपीए 4.17 लाख करोड़ रुपये था। शुद्ध एनपीए सालाना 9.9 फीसदी घटकर 87,384 करोड़ रुपये रह गया।

साढ़े सात साल पहले मार्च 2018 में, सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों का सकल एनपीए लगभग 10.36लाख करोड़ रुपये के शिखर पर पहुंच गया था। उस समय, प्रावधान के बाद, उद्योग का शुद्ध एनपीए लगभग 5.2 लाख करोड़ रुपये था।

बैंक ऑफ महाराष्ट्र को छोड़कर, सभी सरकारी बैंकों ने सितंबर तिमाही में सकल एनपीए में सालाना गिरावट दर्ज की। निजी बैंकों ने मिली-जुली तस्वीर पेश की, कुछ बैंकों के सकल और शुद्ध एनपीए दोनों में वृद्धि देखी गई।

प्रतिशत के लिहाज से, ज्यादातर बैंकों ने सितंबर तिमाही में सकल और शुद्ध एनपीए, दोनों में कमी की। सभी 12 सरकारी बैंकों का शुद्ध एनपीए 1 फीसदी से कम रहा। निजी बैंकों में, केवल चार बैंकों का शुद्ध एनपीए 1 फीसदी से अधिक रहा, जिनमें से अधिकतम 1.37 फीसदी रहा। कुल मिलाकर, 31 सूचीबद्ध यूनिवर्सल बैंकों में से 27 का शुद्ध एनपीए 1 फीसदी से कम था। उनमें से 16 बैंकों का शुद्ध एनपीए आधा फीसदी से भी कम था।

एसबीआई, एचडीएफसी बैंक, आईसीआईसीआई बैंक और ऐक्सिस बैंक जैसे बड़े बैंक भी इसी समूह में शामिल थे। सरकारी बैंकों में, इंडियन बैंक का शुद्ध एनपीए सबसे कम 0.16 फीसदी था। निजी बैंकों में आईडीबीआई बैंक का शुद्ध एनपीए सबसे कम 0.21 फीसदी था।

सकल एनपीए के मामले में बंधन बैंक 5.02 फीसदी के साथ सूची में सबसे ऊपर रहा। तीन पीएसबी बैंकों (पंजाब नैशनल बैंक, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया) और इतने ही निजी बैंकों (इंडसइंड बैंक, धनलक्ष्मी बैंक और जम्मू ऐंड कश्मीर बैंक) का सकल एनपीए 3 फीसदी से अधिक था। एसबीआई, एचडीएफसी बैंक, आईसीआईसीआई बैंक और ऐक्सिस बैंक कुछ अन्य बैंक थे जिनका सकल एनपीए 2 फीसदी से कम था।

यह परिसंपत्तियों की गुणवत्ता का मामला नहीं है। इस समय, बैंकिंग उद्योग के सामने सबसे बड़ी चुनौती देनदारियों का पक्ष है। उद्योग के कम लागत वाले चालू और बचत खाते (कासा) हर तिमाही में घट रहे हैं और इसके साथ ही, शुद्ध ब्याज मार्जिन (एनआईएम) कम होता जा रहा है। इससे एनआईआई कम हो रहा है।

कुछ अपवादों को छोड़कर, ज्यादातर बैंकों के कासा अनुपात में सितंबर तिमाही में गिरावट दर्ज की गई और उनका एनआईएम भी दबाव में रहा। येस बैंक, बैंक ऑफ महाराष्ट्र और आईडीएफसी फर्स्ट बैंक इसके अपवाद हैं।

तीन सरकारी बैंकों (इंडियन ओवरसीज बैंक, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया और बैंक ऑफ महाराष्ट्र) और पांच निजी बैंकों (आईडीबीआई बैंक, कोटक महिंद्रा बैंक लिमिटेड, आईसीआईसीआई बैंक और जम्मू ऐंड कश्मीर बैंक, आईडीएफसी फर्स्ट बैंक) का कासा 40 फीसदी से अधिक था। एसबीआई का कासा सालाना 40.03 फीसदी से घटकर 39.63 फीसदी और एचडीएफसी बैंक का 35.3 फीसदी से घटकर 33.9 फीसदी रह गया। तिमाही आधार पर एचडीएफसी बैंक समान कासा प्रतिशत बनाए रखने में कामयाब रहा, जबकि एसबीआई ने इसमें थोड़ा सुधार किया।

अंत में, एक समूह के रूप में, पीएसबी ने अपने निजी समकक्षों की तुलना में अग्रिम और जमा दोनों में बेहतर वृद्धि दिखाई। क्या वे इस गति को जारी रख पाएंगे और अपनी बाजार हिस्सेदारी बढ़ा पाएंगे, जिसे वे खो रहे हैं? हर किसी की इस पर उत्सुकता से नजर होगी, भले ही वित्त मंत्रालय तेजी से विस्तारित अर्थव्यवस्था की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए पीएसबी को समेकित करने और बड़ा बनाने की बात कर रहा हो।

(लेखक जन स्मॉल फाइनैंस बैंक के वरिष्ठ सलाहकार हैं)

आपका पक्ष

जलवायु परिवर्तनः दुष्प्रभावों से निपटने में अग्रणी भारत

दुनिया ने बढ़ते वैश्विक तापमान, ग्लेशियर पिघलने से होने वाले प्रदूषण, वायु प्रदूषण और संसाधनों की कमी जैसी कई मुश्किलें देखी हैं। इसलिए, आने वाले दिनों में, अगर जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग का यह दौर जारी रहा, तो दुनिया गंभीर रूप से प्रभावित होगी। दूसरे, सबसे अधिक आबादी वाला देश होने के नाते, भारत को इसके खतरनाक परिणाम भुगतने होंगे। सरकारें और गैर-सरकारी संगठन जलवायु परिवर्तन के विस्तार को सीमित करने के लिए काम कर रहे हैं। भारत अपने निरंतर जलवायु समझौतों और पहलों के माध्यम से जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को नियंत्रित और सीमित करने में अग्रणी रहा है। जलवायु परिवर्तन से निपटने में भारत की भूमिका में नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देना, कार्बन उत्सर्जन कम करना और अनुकूलन रणनीतियां अपनाना शामिल है। भारत ने वर्ष 2070 तक नेट-जीरो उत्सर्जन का लक्ष्य रखा है और 2030 तक अपनी गैर-जीवाश्म ऊर्जा क्षमता को बढ़ाकर 500 गीगावॉट तक पहुंचाने का वादा किया है। साथ ही 2030 तक कार्बन उत्सर्जन में एक अरब टन की कमी लाने का लक्ष्य भी रखा है। दूसरी ओर, जलवायु संकट में विकसित देशों की भूमिका में वित्तीय और तकनीकी सहायता, ऐतिहासिक उत्सर्जन के लिए जिम्मेदारी और कम कार्बन उत्सर्जन को बढ़ावा देना शामिल है। विकसित देश, ऐतिहासिक रूप से सबसे अधिक उत्सर्जन करने के कारण, विकासशील देशों को जलवायु परिवर्तन से निपटने में मदद करने के लिए वित्तीय और तकनीकी संसाधन प्रदान करने के लिए बाध्य हैं। उन्हें उत्सर्जन कम करने और स्वच्छ ऊर्जा में निवेश करने का प्रयास करना चाहिए।

सुधीर कुमार सोमानी, देवास

आने वाले दिनों में अगर जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग का यह दौर जारी रहा तो दुनिया गंभीर रूप से प्रभावित होगी

कृषि में रासायनिक खाद का कम हो इस्तेमाल

सब्जियों, दालों और फलों की पैदावार बढ़ाने के लिए जो रासायनिक खादों का इस्तेमाल हो रहा है उससे हम कैसे बच सकते हैं। इसके लिए जैविक खेती को बढ़ावा देना जरूरी है। पैदावार बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीक से कृषि करना जरूरी है, क्योंकि इससे किसानों को ज्यादा फायदा हो सकता है। किसान अब आधुनिक तकनीक से कृषि करने भी लगा है। कुछ किसान अपनी फसलों की पैदावार बढ़ाने के लिए ऐसे रसायनों का प्रयोग करते हैं, जो उनकी फसलों को किसी भी रूप में खाता है, उस पर उनका विपरीत असर भी पड़ता है। अगर समय रहते रासायनिक खादों की जगह जैविक खादों का प्रयोग फिर से शुरू नहीं किया गया तो वो दिन दूर नहीं है जब हरी भरी सब्जियां, फल और अनाज भी इस कदर सेहत के दुश्मन बन जाएंगे, जिसका फिर कोई इलाज भी असंभव हो जाएगा। जैविक खाद का प्रयोग बढ़े इसके लिए सरकारों को किसानों के लिए विशेष योजनाओं की सौगात देनी होगी। किसानों को इस कार्य के लिए तकनीकी और आर्थिक सहायता देनी होगी। किसानों को पशु पालन के लिए जागरूक करने और इसके लिए भी सरकारों को कुछ नीतियां बनानी चाहिए, ताकि किसान जैविक खाद तैयार कर सके।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने गुरुवार को ओडिशा विधान सभा को संबोधित किया। मुर्मू वर्ष 2000 में मयूरभंज जिले के रैनरंगपुर निर्वाचन क्षेत्र से पहली बार विधायक चुनी गई थीं। इस अवसर पर केंद्रीय मंत्री धर्मेंद्र प्रधान, विधान सभा अध्यक्ष सुरमा पाढ़ी, मुख्यमंत्री मोहन चरण माझी, विपक्ष के नेता नवीन पटनायक सहित अन्य विधायक उपस्थित थे।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

लागत बनाम लाभ

अपेक्षित यह है कि सरकार खाड़ी, पश्चिम एशिया और रूस जैसे स्रोतों से एलपीजी की खरीदारी पर आने वाली लागत और अमेरिका से खरीदारी पर आने वाले खर्च का तुलनात्मक विवरण सार्वजनिक करे। देशवासियों को यह जानने का हक है। अमेरिका से 22 लाख टन रसोई गैस खरीदने के लिए हुए सौदे को पेट्रोलियम मंत्री हरदीप पुरी ने 'ऐतिहासिकÓ करार बताया और कहा कि देश की जनता को 'किफायतीÓ दर पर सप्लाई करने के मकसद से एलपीजी खरीदारी का एक नया स्रोत हासिल किया गया है। स्पष्टतः उन्होंने इसे नरेंद्र मोदी सरकार की एक बड़ी उपलब्धि के रूप में पेश किया। लेकिन हकीकत यह है कि ये फैसला अमेरिका के साथ द्विपक्षीय व्यापार समझौता की मोदी सरकार की बेकरारी की मिसाल है। खुद सरकारी सूत्रों ने कहा है कि इससे अमेरिका के व्यापार घाटे को पाटने में मदद मिलेगी, जो व्यापार समझौते के लिए अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप की शर्त है। इसके अलावा खबर है कि भारत सरकार अमेरिका से सोयाबीन और कुछ अन्य कृषि उत्पादों को खरीदने पर भी तैयार हो सकती है। बहरहाल, गौरतलब है कि एलपीजी की अंतरराष्ट्रीय बाजार में कोई कमी नहीं है। भारत अब तक अपनी जरूरत अन्य स्रोतों से पूरी करता रहा है। अमेरिकी कंपनियों की तुलना में उन स्रोतों को इसलिए तरजीह मिली है, क्योंकि उनसे खरीदना भारत को किफायती पड़ता है। धारणा यह है कि अमेरिकी गैस अपेक्षाकृत महंगी होती है और उसे लाने की परिवहन लागत भी ज्यादा बैठती है। इसलिए हरदीप पुरी का दावा सहज ही देशवासियों के गले नहीं उतरेगा। अपेक्षित यह है कि सरकार खाड़ी, पश्चिम एशिया और रूस जैसे स्रोतों से खरीदारी पर आने वाली लागत और अमेरिका से खरीदारी पर आने वाले खर्च का तुलनात्मक विवरण देश के सामने प्रस्तुत करे। ताजा करार के मुताबिक अमेरिका से एलपीजी की खरीदारी पब्लिक सेक्टर की कंपनियां करेंगी। यानी जो भी खर्च आएगा, वह करदाताओं की जेब से चुकाया जाएगा। अतः देश को जानने का हक है कि मोदी सरकार की विदेश नीति संबंधी प्राथमिकताओं को पूरा करने का कितना आर्थिक बोझ उन पर आएगा। आने वाले दिनों में लागत बनाम लाभ के ऐसे ही सवाल कृषि पैदावार की खरीदारी (अगर हुई तो) के संबंध में उठेंगे। प्रश्न यह भी पूछा जाएगा कि ये सारी कीमत चुकाने के बदले व्यापार एवं भू-राजनीति में भारत को क्या हासिल हो रहा है?

विपक्ष की सबसे बड़ी दिक्कत : विश्वसनीयता पर उठते सवाल

आरती कुमारी

बिहार में करारी हार विपक्ष को हजम नहीं हो रही है। वो यह मानने को तैयार नहीं है कि 20 साल के शासन के बाद भी नीतीश कुमार को जनता बदलने को तैयार नहीं है। वास्तव में जनता को कोई भी खुश नहीं कर सकता और ये बात जनता भी जानती है कि कोई भी राजनीतिक दल या नेता उसकी उम्मीदों पर पूरी तरह से खरा नहीं उतर सकता। भारत की जनता अब इतनी समझदार हो चुकी है कि वो सिर्फ बदलाव लाने के लिए ही वोट नहीं देती है। वो बदलाव लाने से पहले यह देखती है कि उसके सामने जो विकल्प है, क्या वो वर्तमान नेता या राजनीतिक दल से बेहतर है। नीतीश कुमार के विरोधी यह तो जानते हैं कि उनके प्रति जनता में नाराजगी है लेकिन वो यह नहीं देख पाते कि उनका विकल्प आज भी बिहार की जनता को दिखाई नहीं दे रहा है। भाजपा में ऐसा नेता बन नहीं पाया है, इसलिए भाजपा भी नीतीश कुमार के नेतृत्व को बदलने के लिए उचित समय का इंतजार कर रही है। भाजपा नेतृत्व हमेशा जमीन से जुड़ा रहता है, इसलिए उससे बहुत कम गलतियां होती हैं। विपक्ष जनता से कट चुका है, इसलिए वो जमीनी हकीकत से दूर रहता है। वो अपनी रैलियों और रोड शो में आई भीड़ से ही अपनी जीत का अंदाजा लगा लेता है। भारत का विपक्ष इतना ज्यादा आलसी हो गया है कि वो इसी उम्मीद के साथ चुनाव में उतरता है कि जनता वर्तमान सत्ता से नाराज है, इसलिए बिना कुछ करे ही उसकी जीत होने वाली है। विपक्ष भी पूरी तरह से गलत नहीं है क्योंकि पहले राजनीति में यह रिवायत बन चुकी थी कि जनता बेशक सत्ता से खुश हो, इसके बावजूद वो सत्ता परिवर्तन कर देती थी। जनता दो प्रमुख दलों में सत्ता की अदलाबदली करती रहती थी। अब ये रिवायत खत्म हो चुकी है, अब जनता तब तक सत्ता परिवर्तन नहीं करती जब तक कि वो वर्तमान सत्ता से ज्यादा नाराज न हो। कांग्रेस ने केंद्र में दस साल तक लगातार शासन किया और अब भाजपा सरकार का तीसरा कार्यकाल चल रहा है। ऐसे ही गुजरात, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, केरल और कई राज्यों में लगातार एक ही पार्टी की सरकार चल रही है। भारतीय राजनीति पिछले 15-20 सालों में बहुत बदल चुकी है। आम आदमी पार्टी ने लोकलुभावन वादे करके पहले दिल्ली और फिर पंजाब में सत्ता हासिल कर ली। ऐसा लगा कि लोकलुभावन वादे सत्ता हासिल करने का बहुत आसान रास्ता है। आम आदमी पार्टी ने इस रास्ते पर चलकर अन्य कई राज्यों में चुनाव लड़ा, लेकिन उसे सफलता हासिल नहीं हुई। इसकी वजह यह है कि सिर्फ लोकलुभावन वादे करके सत्ता हासिल करना संभव नहीं है, इसके लिए राजनीतिक दल की विश्वसनीयता और अनुकूल राजनीतिक परिस्थितियां भी होनी चाहिए। बिहार में महागठबंधन ने एनडीए से कहीं ज्यादा लोकलुभावन वादे किये थे, लेकिन उसे शर्मनाक हार मिली। विपक्ष की विश्वसनीयता जनता में लगभग खत्म हो चुकी है क्योंकि वो सिर्फ भाजपा और उसके सहयोगी दलों की बुराइयों का ढिंढोरा पीटकर वोट पाने की उम्मीद में रहता है। देश की गरीबी, बेरोजगारी और अन्य मुद्दों की बात करता है लेकिन देश की समस्याओं का उसके पास क्या समाधान है, ये नहीं बताता है। बिहार के चुनाव में तेजस्वी यादव ने वादा किया कि वो हर घर से एक व्यक्ति को सरकारी नौकरी देंगे, लेकिन कैसे देंगे, ये उन्हें पता नहीं था। 2024 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस ने वादा किया कि हर महिला को एक लाख रुपए हर साल दिए जाएंगे, लेकिन कैसे दिए जाएंगे, ये कांग्रेस बता नहीं सकी । देखा जाए तो दोनों ही वादे इतने आकर्षक हैं कि विपक्ष को तीन चौथाई से भी बड़ा बहुमत दिला सकते थे लेकिन इतने बड़े वादे करने के बाद बिहार में महागठबंधन धराशायी हो गया। लोकसभा में कांग्रेस को जरूर उसके वादे का कुछ राज्यों में फायदा हुआ लेकिन उसकी कुछ दूसरी वजह भी थी। नीतीश सरकार पर आरोप लगाया गया कि उसने एक करोड़ महिलाओं को दस हजार की रिश्वत देकर चुनाव जीत लिया लेकिन तेजस्वी यादव ने तो सरकार बनते ही तीस हजार देने की बात कही, क्या वो रिश्वत नहीं थी। नीतीश कुमार तो दस हजार दे चुके थे, लेकिन तेजस्वी यादव तो देने वाले थे. इस तरह देखा जाए तो महिलाओं को ज्यादा फायदा तो तेजस्वी यादव को वोट देने से मिलने वाला था। बच्चों को सरकारी नौकरी मिलना तो बिहार की महिलाओं के लिए सबसे सुनहरा सपना है लेकिन महिलाओं ने उस सपने के पीछे जाना पसंद नहीं किया। सवाल यह है कि क्या महिलाएं नहीं चाहती हैं कि उनके बच्चों को सरकारी नौकरी मिले । सच तो यह है कि बिहार में हर महिला का ये सपना हो सकता है लेकिन उसे भरोसा नहीं है कि ये सपना तेजस्वी यादव पूरा कर सकते हैं। कला समोदी के कट्टर आलोचक और भाजपा के कट्टर विरोधी योगेंद्र यादव कहते हैं कि विपक्ष हमेशा नकारात्मक बातें करता है जबकि मोदी की बातों में 80% बातें सकारात्मक होती हैं। वो हैरानी जताते हुए कहते हैं कि विपक्ष को देश में कुछ भी अच्छा होता हुआ नहीं दिखता है। वैसे देखा जाए तो योगेंद्र यादव के बारे में भी यही कहा जा सकता है कि उन्हें भाजपा और मोदी में कुछ भी अच्छा नहीं दिखता है। बिहार में उनके सारे आंकलन धरे रह गए तो उनके मुंह से कुछ सच बाहर निकल आया । वास्तव में योगेंद्र यादव जैसे लोग भी विपक्ष की बड़ी कमजोरी हैं, जो विपक्ष के नकारात्मक एजेंडे को आगे बढ़ाते हैं। आज योगेंद्र यादव कह रहे हैं कि एसआईआर कोई चुनावी मुद्दा ही नहीं था, उस पर विपक्ष को मेहनत नहीं करनी चाहिए थी लेकिन चुनाव से पहले उन्हें यह बहुत बड़ा मुद्दा दिखाई दे रहा था। कांग्रेस को खुद से ही एक बात सीखने की जरूरत है कि वो क्यों गांधी परिवार की गुलाम बन कर रह गई है। क्यों राहुल गांधी के बार-बार असफल होने के बावजूद वो उनके पीछे चल रही है। कांग्रेस जानती है कि गांधी परिवार उसकी मजबूरी है, अगर गांधी परिवार कांग्रेस से अलग हो गया तो कांग्रेस खत्म हो जाएगी । राहुल गांधी के सिर पर कितनी भी असफलताएं डाली जाएं लेकिन सच यही है कि वो ही कांग्रेस की आखिरी उम्मीद हैं । ऐसे ही मोदी इस समय देश की मजबूरी बन चुके हैं, क्योंकि उनसे बेहतर नेता इस समय देश में मौजूद नहीं है। भाजपा ही एकमात्र ऐसी पार्टी है, जो देश को एक स्थायी सरकार दे सकती है। जो लोग भाजपा या विपक्ष के कट्टर समर्थक हैं, वो क्या सोचते हैं, ये महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि जो लोग गुण-दोष के आधार पर अपना वोट डालते हैं, उनके सामने मोदी और भाजपा के अलावा क्या विकल्प है । राहुल गांधी कांग्रेस की मजबूरी हैं लेकिन देश की मजबूरी नहीं हैं। देश की मजबूरी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी बन चुके हैं. उनसे ज्यादा विश्वसनीय और लोकप्रिय चेहरा इस समय भारतीय राजनीति में कोई नहीं है। कांग्रेस की समस्या यह है कि उसके पास राहुल गांधी से ज्यादा विश्वसनीय और लोकप्रिय चेहरा नहीं है जिसे सामने रखकर वो पूरे देश में जनता से वोट मांग सकती है। समस्या यह है कि जनता राहुल गांधी के चेहरे पर वोट देने को तैयार नहीं है। भाजपा को ऐसी कोई समस्या नहीं है. जब भी मोदी राजनीति को अलविदा कहेंगे, तब भाजपा जिस भी चेहरे को आगे करेगी, उसे जनता का विश्वास मिल जाएगा। विपक्ष के लिए बड़ी समस्या यह है कि मोदी देश को अपना विकल्प देकर जाएंगे. वो इसके लिए नेताओं को तैयार कर रहे हैं। राहुल गांधी सिर्फ कांग्रेस की समस्या नहीं हैं बल्कि वो पूरे विपक्ष की समस्या हैं क्योंकि उनके अलावा विपक्ष के पास प्रधानमंत्री का कोई और चेहरा नहीं है। वैसे तो विपक्ष किसी को भी प्रधानमंत्री का चेहरा बना सकता है. इसके लिए उसके पास कई अच्छे नेता हैं। समस्या यह है कि विपक्ष के पास ऐसा कोई नेता नहीं है जिसके नाम पर पूरे देश की जनता उसे वोट दे। इसकी वजह यह है कि कांग्रेस के अलावा अन्य सभी विपक्षी दल सिर्फ एक राज्य तक सीमित हैं। बसपा, आम आदमी पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टियां एक से ज्यादा राज्यों में मौजूद हैं लेकिन ये दल इतने कमजोर हो चुके हैं कि विपक्ष का नेतृत्व नहीं कर सकते । एक तरह से ये दल तो अपने अस्तित्व की जंग लड़ रहे हैं। विपक्ष कांग्रेस की कितनी भी आलोचना करे, लेकिन सच यह है कि कांग्रेस उसकी मजबूरी है और कांग्रेस की मजबूरी राहुल गांधी हैं। विपक्ष के अन्य दल राहुल गांधी को अपना नेता मानने को तैयार नहीं हैं इसलिए उनमें नेतृत्व की जंग जारी है। विपक्ष के बड़े नेताओं में ममता बनर्जी, स्टालिन और अखिलेश यादव का नाम लिया जा सकता है लेकिन सवाल यह है कि क्या उनके नाम पर पूरे देश में विपक्ष वोट मांग सकता है। ये नेता अपने राज्यों में तो एक विश्वसनीय और लोकप्रिय चेहरा हैं लेकिन राज्य से बाहर निकलते ही इनका प्रभाव खत्म हो जाता है। विपक्ष के नेताओं में आपसी संघर्ष भी इतना ज्यादा है कि कोई किसी को अपना नेता मानने को तैयार नहीं है। सवाल यह है कि इस विपक्ष पर देश की जनता कैसे भरोसा कर सकती है। अगर ये दल गठबंधन बनाकर कोई वादा करते हैं तो उसकी जवाबदेही किसकी होगी, यह तय नहीं है। भारत की जनता में राजनीतिक जागरूकता और समझदारी इतनी ज्यादा बढ़ चुकी है कि उसे बरगलाया नहीं जा सकता। 2024 का चुनाव लड़ने से पहले विपक्ष ने जो गठबंधन बनाया था, आज वो कहां है। चुनाव के बाद इस गठबंधन की किसी बैठक की जानकारी नहीं है। इसके पदाधिकारी कौन है, इसका कार्यालय कहां है, कोई नहीं जानता। दूसरी तरफ एनडीए लगातार मजबूत होता जा रहा है, भाजपा और इसके घटक दलों में गजब का तालमेल दिखाई दे रहा है। विपक्ष की सबसे बड़ी समस्या विश्वसनीयता बन चुकी है और इससे छुटकारा पाना आसान होने वाला नहीं है।

बरसात की बूंदों से भी होगा रोशनी - चीन ने बनाया पानी पर तैरने वाला उपकरण

जितेन्द्र कुमार सिन्हा, पटना

पृथ्वी पर ऊर्जा के नए स्रोतों की खोज हमेशा से विज्ञान की प्राथमिकताओं में रही है। कोयला, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस जैसे पारंपरिक स्रोत सीमित हैं और पर्यावरण प्रदूषण का बड़ा कारण भी। ऐसे में नवीकरणीय ऊर्जा, सौर, पवन, जल और भू-तापीय, दुनिया की उम्मीद बनकर उभरी है। इसी श्रृंखला में एक नई, चौंकाने वाली और बेहद उपयोगी खोज सामने आई है "बारिश की बूंदों से बिजली उत्पादन"। चीन की नानजिंग यूनिवर्सिटी ऑफ एरोनॉटिक्स एंड एस्ट्रोनॉटिक्स ने ऐसा अनोखा, हल्का-फुल्का, तैरने वाला उपकरण बनाया है जो प्रत्येक बारिश की बूंद से 250 वोल्ट तक का इलेक्ट्रिक पल्स उत्पन्न कर सकता है। यह तकनीक ऊर्जा जगत में क्रांति ला सकती है। मानव जाति ने सदियों से बारिश को जीवन के प्रतीक के रूप में देखा है कृषि के लिए, पेयजल के लिए, पर्यावरण के लिए। लेकिन कभी कल्पना भी नहीं की गई थी कि आसमान से गिरती साधारण पानी की बूंदें बिजली भी दे सकती हैं। पिछले कुछ वर्षों में वैज्ञानिकों ने बारिश की ऊर्जा को उपयोग में लाने की दिशा में शोध किया है। लेकिन अब चीन के वैज्ञानिकों ने इसे व्यावहारिक रूप में बदल दिया है। नानजिंग यूनिवर्सिटी की टीम ने इस तकनीक को एक ऐसे स्तर पर पहुंचा दिया है जहां यह सिर्फ प्रयोगशाला की अवधारणा नहीं है, बल्कि वास्तविक जीवन में उपयोगी डिवाइस बन चुकी है। जब बारिश की बूंद किसी सतह पर गिरती है, तो बूंद का आकार बदलता है।पानी के कण फैलते हैं। आयनों की गति बदलती है। सतह पर विद्युत आवेश उत्पन्न होता है। इसी ड्रॉप इम्पैक्ट एनर्जी + आयन मोशन के संयोजन से बिजली बनती है। चीन के वैज्ञानिकों ने इस सिद्धांत को तकनीक का रूप दिया है। यह उपकरण बेहद हल्का, पानी की सतह पर तैरने योग्य, पारदर्शी-सा पतला प्लेटफॉर्म, अंदर लगे हुए नैनो-मैकेनिकल सेंसर और आयन-आधारित इलेक्ट्रिक जनरेशन यूनिट है। यह झील, तालाब या समुद्र की सतह पर तैर सकता है, जिससे बारिश की हर बूंद सीधे इस डिवाइस पर गिरती है। इस उपकरण का काम करने की प्रक्रिया बेहद वैज्ञानिक और दिलचस्प है। जब आकाश से कोई बूंद गिरकर डिवाइस की सतह पर टकराती है, तो एक छोटा-सा झटका या इम्पैक्ट बनता है। क्योंकि डिवाइस पानी पर तैर रहा है, इसलिए सतह पर गिरने वाली बूंद का झटका नीचे के पानी से संतुलित हो जाता है। इससे डिवाइस स्थिर रहता है और टूटने की संभावना नहीं होती है। बारिश की बूंद टकराकर फैल जाती है और सतह पर फैले आयनों से संपर्क करती है। बूंद में मौजूद हाइड्रोजन एव ऑक्सीजन आयन, तथा डिवाइस में मौजूद इलेक्ट्रोएक्टिव सामग्री के बीच परस्पर क्रिया होती है, जिससे इलेक्ट्रिक पल्स उत्पन्न होता है। जो भी वोल्टेज उत्पन्न होता है उसे बैटरी में, सुपरकैपेसिटर में या सीधे किसी उपकरण को भेजा जा सकता है। 250 वोल्ट सुनकर बड़ी मात्रा लग सकती है, लेकिन यह एक पल्स वोल्टेज है। इसका उपयोग कम पावर वाले उपकरणों या बैटरी चार्जिंग के लिए किया जा सकता है। यह इसलिए संभव है क्योंकि बूंद के फैलाव से उत्पन्न ऊर्जा को वैज्ञानिकों ने अधिकतम दक्षता से कैप्चर करने की तकनीक विकसित की है। आने वाले समय में यह तकनीक शहरों की बारिश, समुद्री तूफानों, पहाड़ी वर्षा, झील और तालाब क्षेत्रों से अनंत ऊर्जा प्राप्त कर सकती है। धुआं नहीं, प्रदूषण नहीं, तापमान बढ़ोतरी नहीं, कार्बन उत्सर्जन शून्य, यह 100% हरित ऊर्जा है। जहां बिजली पहुंचना मुश्किल है पहाड़ी गांव, जंगल क्षेत्र, समुद्री तट और हिमालयी क्षेत्र। वहां यह तकनीक जीवन बदल सकती है। आज दुनिया ऊर्जा संकट से जूझ रही है जीवाश्म ईंधन खत्म हो रहे हैं, बिजली की मांग तेज गति से बढ़ रही है और नवीकरणीय ऊर्जा की सीमाएं हैं। सौर ऊर्जा सिर्फ धूप में, पवन ऊर्जा सिर्फ हवा में और जल विद्युत सिर्फ बड़े बांध में मिलती है, लेकिन बारिश हर जगह होती है शहरों में भी, पहाड़ों पर भी, समुद्र में भी, गांवों में भी। इसलिए यह तकनीक दुनिया के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। जैसे आज सोलर पैनल लगाए जाते हैं, वैसे ही भविष्य में रेन-एनर्जी पैनल लगाए जा सकते हैं। समुद्र में हर साल करोड़ों लीटर बारिश होती है। इस तकनीक का बड़े स्तर पर उपयोग करके बारिश आधारित बिजली संयंत्र बनाया जा सकता है। भविष्य का स्मार्ट शहर इस तकनीक पर चल सकता है। CCTV, सिग्नल सेंसर, सड़क लाइटें और मौसम उपकरण। सब बारिश से चार्ज हो सकेगा। जहां वज्रपात और बारिश अधिक होती है वहां यह तकनीक सैनिकों के लिए ऊर्जा का बड़ा स्रोत बनेगा। पहाड़ों में तैनात सेना, वैज्ञानिक अभियान और रिसर्च स्टेशंस, सबको इससे फायदा होगा। सौर ऊर्जा की सीमाएं हैं, रात में काम नहीं करती, बादल होने पर दक्षता गिरती है और वर्षा ऋतु में उपयोग कम होता है, जबकि बारिश की ऊर्जा का पीक मौसम वही है जब सौर ऊर्जा कमजोर होती है। अर्थात दोनों तकनीकें एक-दूसरे को पूरा कर सकती हैं। एक बारिश में काम करेगी, दूसरी धूप में। इससे भविष्य की "हाइब्रिड एनर्जी सिस्टम" की नींव रखी जा सकती है। 250 वोल्ट पल्स अच्छा है, लेकिन निरंतर करंट अभी कम है। भविष्य में पावर आउटपुट बढ़ाने पर काम किया जा सकता है। प्रारंभिक कीमत अधिक हो सकती है। लेकिन बड़े पैमाने पर उत्पादन से यह सस्ता हो जाएगा। समुद्र के खारे पानी, तूफानों और मलबे से इसे बचाना होगा। बारिश हर जगह होती है, लेकिन नियमित नहीं। इसे ऊर्जा के अन्य स्रोतों के साथ जोड़ा जाएगा। भारत एक मानसून प्रधान देश है। यहां 70% वर्षा कुछ महीनों में होती है। यह तकनीक भारत में बहुत उपयोगी हो सकता है। पश्चिमी घाट, असम, मेघालय, कश्मीर, उत्तराखंड और झारखंड, इन क्षेत्रों में बारिश-ऊर्जा परियोजनाएं लगाई जा सकती हैं। भारत में हर घर की छत सोलर के साथ रेन एनर्जी से भी लैस किया जा सकता है। किसानों के लिए मोबाइल चार्जिंग, सिंचाई पैनल, स्मार्ट फार्मिंग उपकरण चलाने में मदद मिलेगी। यह तकनीक दूर-दराज क्षेत्रों में बिजली की बड़ी समस्या हल कर सकती है। नानजिंग यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिक इस तकनीक को और उन्नत बनाना चाहते हैं। हर बूंद से 250 वोल्ट पल्स को स्थिर वोल्टेज में बदलना। सोलर पैनलों की तरह बड़े रेन पैनल तैयार करना। बारिश, लहरों और हवाओं, तीनों से संयुक्त ऊर्जा उत्पादन। तूफानों एव आंधियों में भी सुरक्षित रह सके। फ्री में गिरने वाली बारिश से बिजली बनेगी तो उपभोक्ता को कम भुगतान करना पड़ेगा। रेन पैनल इंस्टॉलेशन और मेंटेनेन्स में लाखों नौकरियां पैदा होंगी। बिजली की कमी वाले गांवों में जीवन सुधरेगा। बारिश के मौसम में बिजली बाधित होने पर भी यह तकनीक काम करेगा। यह तकनीक पर्यावरण के लिए बहुत अनुकूल है क्योंकि कोयला खदानों की जरूरत घटेगी, कार्बन उत्सर्जन कम होगा, जलवायु परिवर्तन की गति धीमी होगी और प्रदूषण शून्य होगा। यह भविष्य की सस्टेनेबल एनर्जी रेवोल्यूशन का हिस्सा है। DRDO, ISRO, IITs और अन्य संस्थान इस तकनीक को अपने तरीके से सुधारकर भारत के अनुकूल बना सकते हैं। बारिश की बूंदों को अब केवल पानी नहीं, बल्कि ऊर्जा का स्रोत समझा जाएगा। चीन के वैज्ञानिकों ने यह दिखा दिया है कि नवाचार की कोई सीमा नहीं होती है। यह उपकरण न सिर्फ वैज्ञानिक चमत्कार है, बल्कि मानव सभ्यता के लिए एक नया ऊर्जा अध्याय है। यह खोज बताती है कि भविष्य में ऊर्जा का संकट खत्म हो सकता है।

कर्नाटक की सियासत में अब डीके रहेंगे या सिद्धारमैया

स्वदेश कुमार, वरिष्ठ पत्रकार

कर्नाटक की राजनीति में इस समय एक बड़ा राजनीतिक घमासान चल रहा है, जिसका केन्द्र बिंदु उप मुख्यमंत्री डीके शिवकुमार और मुख्यमंत्री सिद्धरमैया के बीच मुख्यमंत्री की कुर्सी को लेकर टकराव है। दोनों के बीच विवाद इतना गहरा हो गया है कि जिससे पार्टी के अंदर मतभेद साफ नज़र आने लगे हैं। कांग्रेस पार्टी के लिए यह परिस्थिति चुनौतीपूर्ण बन गई है क्योंकि दोनों नेताओं की महत्त्वाकांक्षाएं और राजनीतिक दबाव पार्टी की लाइन के खिलाफ जाकर संकट उत्पन्न कर रहे हैं। डीके शिवकुमार राजनीतिक रूप से कर्नाटक में अपनी पकड़ मजबूत करते आ रहे हैं। वे लंबे समय से पार्टी के मुख्य नेतृत्व में सक्रिय रहे हैं और उनकी पकड़ पार्टी के अधिकांश कार्यकर्ताओं व नेताओं के बीच है। ऐसे में उन्होंने मुख्यमंत्री की कुर्सी के मामले में कोई समझौता करने का मन नहीं बनाया। शिवकुमार का मानना है कि उनके अनुभव, जनाधार, और राजनीतिक योगदान के कारण वे इस पद के लिए अधिक योग्य हैं। उन्होंने सीधे तौर पर यह भी संकेत दिया है कि मुख्यमंत्री की कुर्सी से कम पर वे कभी सहमत नहीं होंगे।सिद्धरमैया, जो अभी प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं, वे भी अपनी कुर्सी छोड़ने के मूड में नहीं दिख रहे हैं। उनकी भी पार्टी में अपनी पकड़ है और वे भी इस पद के लिए पूरी तरह तैयार हैं। सिद्धरमैया के समर्थक भी उनकी सरकार को लेकर पूरी तरह प्रतिबद्ध हैं और किसी भी तरह की बगावत को पार्टी हित के खिलाफ मानते हैं। इसलिए उनके लिए यह कुर्सी छोड़ना कोई आसान फैसला नहीं है।इस बीच, पार्टी के आलाकमान के लिए स्थिति काफी पेचीदा हो गई है। दोनों नेताओं के बीच हो रहे इस टकराव ने कांग्रेस के रणनीतिक कमजोरियों को उजागर कर दिया है। बगावत इतनी बढ़ चुकी है कि अगर पार्टी नेतृत्व समय पर सही और संतुलित निर्णय नहीं लेता है तो इसका असर विधानसभा चुनावों पर भी पड़ सकता है। खासकर जब पार्टी को कर्नाटक में अपनी पकड़ और संगठन को मजबूत करने की जरूरत है। कुछ राजनीतिक विश्लेषकों की राय में अगर कर्नाटक कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी इस विवाद को शांति से नहीं सुलझाते हैं, तो पार्टी को भारी नुकसान उठाना पड़ सकता है। यह टकराव आज केवल मुख्यमंत्री पद का नहीं रहा, बल्कि दोनों के समर्थक भी अलग-अलग मोर्चे पर खड़े हो गए हैं। बताया जा रहा है कि शिवकुमार के

समर्थक तो यहां तक कि बीजेपी से भी संपर्क करने में गुरेज नहीं कर रहे, जो कांग्रेस पार्टी के लिए चिंताजनक स्थिति है। यह संकेत है कि अगर पार्टी आलाकमान ने समय रहते स्पष्ट निर्देश या मध्यस्थता नहीं की, तो शिवकुमार के नेतृत्व में पार्टी के भीतर अलगाव या विघटन की संभावना भी जताई जा रही है। पार्टी नेतृत्व ने फिलहाल इस मामले में चुप्पी साध रखी है, लेकिन खबरों के अनुसार राहुल गांधी ने पक्षों की बात सुननी शुरू कर दी है। इसके बाद ही कोई अंतिम निर्णय लिया जाएगा। परंतु इधर दोनों पक्षों के खेमे भी अपनी-अपनी दलीलों को पार्टी अध्यक्ष तक पहुँचा चुके हैं। दोनों ओर से इसकी उम्मीद जताई जा रही है कि जो भी फैसला आएगा, वह उनके लिए स्वीकार्य होगा। लेकिन राजनीतिक धरातल पर देखा जाए तो ऐसा होना मुश्किल लगता है क्योंकि दोनों नेताओं की महत्वाकांक्षाएं इतनी मजबूत हैं कि वे दोनों ही कम समझौता करने को तैयार नहीं हैं।इस विवाद की वजह से कांग्रेस पार्टी के अंदर सशक्त नेतृत्व की कमी उजागर हो रही है। ऐसी स्थिति में पार्टी के लिए जरूरी होगा कि वह जल्द से जल्द इस मुद्दे का समाधान निकाले ताकि आगे बढ़कर चुनाव तैयारी और संगठन के विस्तार पर ध्यान केंद्रित किया जा सके। यदि लंबे समय तक यह विवाद बना रहा तो इससे पार्टी के कार्यकर्ता भी निराश हो सकते हैं और विरोधी दलों को भी यह मौका मिलेगा कि वे इसका राजनीतिक लाभ उठाएं। यह मुद्दा कर्नाटक की राजनीति में भी हलचल मचा रहा है। विपक्षी दल इसे कांग्रेस में अंदरुनी फूट के रूप में दिखा रहे हैं और अपनी ताकत बताने का मौका तलाश रहे हैं। यदि कांग्रेस ने इस विवाद को संभाला नहीं तो कर्नाटक में उसकी सरकार खतरे में पड़ सकती है। ऐसे हालात में पार्टी नेतृत्व के सामने चुनौती यह है कि वे दोनों प्रमुख नेताओं के बीच सामंजस्य बनाएं और पार्टी की एकजुटता को बनाये रखें। राजनीतिक जमावट और नेताओं के बीच सत्ता की होड़ ऐसी स्थिति उत्पन्न कर रही है कि कांग्रेस के लिए समय रहते सही निर्णय लेना बेहद जरूरी हो गया है।कर्नाटक की राजनीति में मुख्यमंत्री की कुर्सी के लिए यह लड़ाई अब केवल पद की नहीं बल्कि भविष्य की दिशा तय करने वाली भी हो गई है। पार्टी आलाकमान की भूमिका इस मामले में निर्णायक साबित होगी और राहुल गांधी की मंशा पर सभी की नजरें टिकी हैं। अभी यह स्पष्ट नहीं हो पाया है कि राहुल गांधी किस तरह का निर्णय लेंगे और वह कैसे दोनों पक्षों को संतुष्ट करेंगे। लेकिन इतना तय है कि कांग्रेस के लिए अब यह मामला केवल नेतृत्व का नहीं, बल्कि समूचे संगठन की स्थिरता का प्रश्न बन चुका है। प्रदेश की राजनीति में जो भी हो, उसका असर राष्ट्रीय स्तर पर भी देखे जाने की संभावना है, क्योंकि कर्नाटक हमेशा से कांग्रेस की महत्वपूर्ण राजनीतिक जंग का मैदान रहा है। इस समय कांग्रेस नेतृत्व के लिए सबसे बड़ी चुनौती यही है कि वह गणना से काम लेकर विवाद को जल्द से जल्द समाप्त कराए। तभी पार्टी अपनी राजनीतिक प्राथमिकताओं पर ध्यान केंद्रित कर सकेगी और आगामी चुनावों में बेहतर स्थिति में नजर आएगी।

मेष : आज आपका दिन कुछ नया सिखाने वाला है। आज आप किसी अपने पुराने मित्र की सहायता करेंगे। आप दैवीय सहयोग से हर फील्ड में बढ़ेंगे। अपने विरोधियों से विशेष रूप से सावधान रहें। स्टील का बिजनेस सफल रहेगा और अधिक लाभ मिलेगा। आप आज परिवार के साथ ट्रिप पर जायेंगे, जिससे आपको भरपूर आनंद आएगा।

वृष : आज आपका दिन आपके जीवन में नया बदलाव लेकर आएगा। आज टेंशन अधिक रहेगी। रुका हुआ काम फिर से शुरू होगा। आपका स्नेही स्वभाव होने के कारण आपके सहयोगी लाभ उठाएंगे। बुरी संगती से बचना चाहिए क्योकि आज हानि हो सकती है। आप नया प्लाट खरीदने का मन बनायेंगे। आप किसी दूसरे राज्य के मित्र से अपना व्यापार करेंगे। संयम बनाये रखे और सब्र से काम लेने की जरूरत है।

मिथुन : आज आपका दिन नई उमंगो के साथ शुरू होने वाला है। नये स्थान पर जाने का योग है। आपकी टेंशन दूर होगी। अपना काम बहुत मेहनत और लगन से करेंगे। बड़ों-बुजुर्गों के आशीर्वाद से आप सफलता को छुएंगे। पारिवारिक रिश्तों में मेल जोल बढ़ेगा और आपसी प्रेम अधिक होगा।

कर्क : आज आपके दिन की शुरुआत अपनों के साथ होगी। अनावश्यक खर्च से बचे, जिससे आपकी आमदनी बढ़ेगी। प्राइवेट जॉब करने वालों की आय बढ़ने की संभावना है। बिजनेस करने वालों कों आज ज्यादा मुनाफा मिलेगा। आप नया मकान खरीद सकते है। शिक्षा के क्षेत्र में आप आगे बढ़ेंगे। अचानक आज निर्णय ना ले किसी अनुभवी से सलाह लेकर ही निर्णय लें।

सिंह : आज अपने दिन की शुरुआत नये तरीके से करेंगे। आज आप किसी धार्मिक स्थान पर जा सकते है। आपको सर्दी से सम्बन्धित बुखार का सामना करना पड़ेगा जिस से आपको सर्दी से बचना होगा। अधिक भागदौड़ के बावजूद भी आप सकारात्मक रहेंगे और आपका मन प्रसन्नचित्त रहेगा।

कन्या : आज आपका दिन बहुत बढ़िया रहने वाला है। आज आप एनर्जेटिक रहेंगे। सोशल मीडिया पर आपकी वीडियो को ज्यादा से ज्यादा लोग पसंद करेंगे, जिससे आपके फाल्लोवर्स बढ़ेंगे। आज राजकीय कामों में सफलता मिलेगी। आज आपकी मन पसंद वस्तु आपको मिलेगी जिससे आपकी खुशी बढ़ेगी।

तुला : आज आपका दिन आपके जीवन में नया बदलाव लायेगा। मेहनत करने से सारा काम आपका आसान होता रहेगा। ट्रांसपोर्ट के व्यापारी आज किसी बुकिंग का अच्छा लाभ कमाएंगे। दाम्पत्य जीवन का सुख आनन्द मिलेगा। अपने आराध्य देव की उपासना करने से आपके जीवन में खुशियां आएंगी।

वृश्चिक : आज आपको भागदौड़ वाला काम करना पड़ सकता है। कार्य के प्रति आपकी मेहनत से ऑफिस में आपका स्तर ऊँचा होगा। किसी पारिवारिक सदस्य से आपको सहायता मिलेगी। आज आप किसी नये स्थान पर जायेंगे। आज बाहर का मसालेदार खाना खाने से परहेज़ करने की आवश्यकता है ,नहीं तो आपकी सेहत बिगड़ सकती है।

धनु : आज आपका दिन बहुत ज्यादा ही खुशहाल रहने वाला है। आप किसी धार्मिक कार्य को करेंगे। परिवार वालों के साथ ट्रिप पर जाने का प्लान कैंसिल होने की संभवाना है। ऑफिस में आपके काम से खुश होकर बॉस आपको अच्छा वेतन देंगे। निजी सम्बन्धों में आपसी प्रेम बढ़ेगा।

मकर : आज आपको किसी मरीज़ की सेवा करने का मौका मिलेगा। ब्लड प्रेशर के मरीजों को आज काफी हद तक आराम मिलेगा। इस महीने आप अपने कैरियर के प्रति ज्यादा चिंता में रहेंगे, परन्तु यह समय घबराहट का नहीं, अपनी क्षमता पर भरोसा करके आगे बढ़ने का समय है। आप धैर्यवान है इसलिए धैर्य रख के काम को करना होगा। इस राशि के राजनीतिज्ञ कोई समारोह करने की योजना बना सकते हैं, समाज हित में काम करेंगे। पुत्र पक्ष से आपको सुख मिलेगा। शिक्षक छात्रों के डाउट क्लियर करेंगे।

कुंभ : आज आपका दिन बहुत ही ज्यादा बढ़िया रहने वाला है। आपको जिन्दगी में आज नया कदम उठाने का अवसर मिलेगा जो आपकी जिन्दगी में नया मोड़ लायेगा। पॉजिटिव सोच बनाये रखें। आपके व्यापार में आज बाहरी व्यक्ति सहायता करेगा, जिससे आपको काफी लाभ होगा। आज आपको सरप्राइज गिफ्ट मिल सकता है। किसी काम को करने की उत्सुकता बढ़ेगी। आज आपका स्वास्थ्य चेतन्न रहेगा, आपके अन्दर एनर्जी भरपूर रहेगी। सरकारी जॉब वाले लोगों के प्रमोशन से जुडी अच्छी खबर जल्द मिलेगी।

मीन : आज आपका दिन मिला जुला रहने वाला है। साहित्यिक जगत से जुड़े लोगों कों आज सम्मान मिलेगा। प्रॉपर्टी लेने का विचार बना रहे लोग आज प्रॉपर्टी डीलर से मिलेंगे। रुके हुए कार्यों को पूरा करने का सही समय है। आज किसी रोचक व्यक्ति के आने से घर में उत्साह का माहौल रहेगा। बडों का आशीर्वाद मिल सकता है। किसी मित्र से उसका काम पूरा करने का वादा किया है, आप उसे पूरा करेंगे।

CCI NG 3.7 Product: NBTMumbaiBS PubDate: 28-11-2025 Zone: Mumbai Edition: 1 Page: NBTMP8 User: kamlesh.mestry Time: 11-27-2025 22:18 Color:

हम स्वतंत्र तब होते हैं जब मतभेदों का सम्मान करना सीख जाते हैं।

– रवींद्रनाथ टैगौर

कुर्सी की लड़ाई

कर्नाटक कांग्रेस का संकट लंबा खिंचता जा रहा है। सीएम सिद्धारमैया और डिप्टी सीएम डीके शिवकुमार के बीच मुख्यमंत्री पद की लड़ाई में धीरे-धीरे दूसरे वरिष्ठ नेता भी शामिल हो गए हैं। यह टकराव जितना गहरा होगा, कांग्रेस के लिए मुश्किलें उतनी ही और बढ़ेंगी।

पुराना वादा । कर्नाटक की सियासत के केंद्र में इस समय एक वादा है। डीके शिवकुमार का कहना है कि 2023 में जीत के बाद उनसे कहा गया था कि ढाई साल बाद उन्हें सीएम बना दिया जाएगा। वहीं, सिद्धारमैया ढाई-ढाई साल के ऐसे किसी फॉर्म्युले से इनकार कर रहे हैं। अब जब राज्य सरकार ने आधा कार्यकाल पूरा कर लिया है, तो कई विधायक दिल्ली जा डटे हैं, जबकि इधर बेंगलुरु में आपस में ही बयानबाजी चल रही है।

कर्नाटक में कांग्रेस फंसी

निर्णय आसान नहीं । कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे ने भी माना है कि कर्नाटक में सब ठीक नहीं चल रहा। हालांकि उन्हें भरोसा है कि वह, राहुल गांधी और सोनिया गांधी मिलकर मामले को सुलझा लेंगे। माना जा रहा है कि जल्द ही दिल्ली में सिद्धारमैया और शिवकुमार के साथ पार्टी आलाकमान की बैठक हो सकती है। हालांकि किसी भी फैसले तक पहुंचना पार्टी के लिए आसान नहीं होगा। दोनों नेता अपने-अपने समुदायों के मजबूत चेहरे हैं।

जातिगत खेमेबाजी । डीके शिवकुमार राज्य में प्रभावी वोक्कालिगा समुदाय से आते हैं। अप्रैल में पेश जाति सर्वे रिपोर्ट के मुताबिक, राज्य में इस समुदाय की आबादी 12.2% है। हालांकि समुदाय इस रिपोर्ट को गलत बताता है। वहीं, सिद्धारमैया OBC की कुरुबा जाति से ताल्लुक रखते हैं। मौजूदा टकराव में दोनों तरफ से जातियों की गोलबंदी होने लगी है। वोक्कालिगारा संघ ने खुलकर शिवकुमार का समर्थन किया है।

पुराना रोग । विधानसभा चुनाव के बाद ही कर्नाटक संकट के बीज पड़ गए थे और कई बार सीएम-डिप्टी सीएम के बीच का तनाव सार्वजनिक सतह पर दिखा। इसके बावजूद पार्टी नेतृत्व की तरफ से स्थायी समाधान नहीं निकाला गया। संयोग है कि कांग्रेस ऐसी सिचुएशन में पंजाब से लेकर मध्य प्रदेश तक - कई बार फंस चुकी है। मध्य प्रदेश में इसी वजह से उसे सत्ता गंवानी पड़ी थी।

आलाकमान पर दबाव । राज्य इकाइयों की गुटबाजी कांग्रेस को हमेशा से मुश्किल में डालती रही है, लेकिन लगता है कि पार्टी सबक लेने को तैयार नहीं है। हाल में बिहार विधानसभा चुनाव के खराब प्रदर्शन से कांग्रेस नेतृत्व पर दबाव है। इस बीच अगर कर्नाटक का मामला जल्द नहीं सुलझता, तो सवाल केवल स्टेट यूनिट नहीं, आलाकमान तक पर उठेंगे।

तिराहा

सेवा पर बंदिश

प्रेम शंकर मिश्र

'अब तो आबो-हवा बहुत ही खराब हो गई है। टहलते हुए मी लॉर्ड की भी सांसें फूल जा रही हैं।' जयचंद ने चर्चा छेड़ दी। 'बाहर की हवा तो बहाना है सांस तो घर पर ही फूल गई होगी, और लगाएं सेवा पर बंदिश।' रंज-तंज भरी यह आवाज सुधर्मा की थी।

'मी लॉर्ड से सुधर्मा तब से नाराज हैं, जबसे उन्होंने ब्यूरोक्रेट की पत्नी को पद दिए जाने पर सवाल उठाए हैं। वह तो फैसला सुना गए, लेकिन कितने परिवारों का संतुलन प्रभावित कर गए। इसी तरह अधिकार बाधित किए जाते रहे तो व्यवस्थागत संकट खड़े हो जाएंगे।' सुखनंदन ने चिंता जाहिर की। जयचंद की आंखों में स्पष्टीकरण का अनुरोध झलका। 'देखो! जयचंद यह विशिष्टता प्रदान करने का ही भाव था कि चांद महबूबा हो गया, जबकि उसमें गड्ढे ही हैं। जिनके लिए अमरूद तोड़ना मुश्किल है वह सूर्य के आकार से बड़े तारे इसी भाव में तोड़ लाते हैं। आम जोड़ा तो इन उपमाओं में लहालोट हो जाता है, लेकिन समर्थ लोगों को इसको चरितार्थ करना पड़ता है। समितियों की कुर्सी इसका विस्तार है। व्यवस्था हनक और धमक से चलती है, जिसकी हनक के आगे साहब भी बौने हो जाएं सोचो उसकी धमक कितनी होगी? मनो 'रंजन' साहब याद हैं? ब्यूरोक्रेसी के बॉस वह थे, लेकिन कार्यक्रम मैडम का छप जाए, इस मनुहार में लगे रहते थे। समितियों का भविष्य मैडम के नेतृत्व में अधिक सुरक्षित रहता। परिवार का मामला होने के चलते साहब भी यहां कर्तव्यबोध से विरत नहीं हो पाते', सुखनंदन के स्वर में निराशा थी।

'तो अब?' जयचंद ने पूछा। सुखनंदन मुस्कुराए, 'कदम पहले ही उठा लिया गया है। सुधर्मा अब समाजसेविका हैं। अपनी संस्था की अध्यक्ष। जो हम कर्म करते हैं, उसका फल उनकी संस्था के जरिए फलीभूत होता है। हमारे विभाग के काम भाभीजी की संस्था से संचालित होते हैं और तुम्हारे विभाग के सुधर्मा की संस्था के जरिए। बिरादरी में रहने के लिए परिवार में किसी का सामाजिक कार्यकर्ता होना अनिवार्य कर दिया गया है।' ठहाका गूंज पड़ा।

एकदा

संकलन : **दीनदयाल मुरारका**

ग़ुलामी की फ़िक्र

साल 1942, भारत छोड़ो आंदोलन चरम पर था। देश का हर कोना स्वतंत्रता की भावना से गरम था और युवाओं में विदेशी शासन को चुनौती देने का साहस उमड़ रहा था। सिंध के सक्खर में रहने वाला 19 वर्षीय एक युवा भी इसी तपिश में तप रहा था। उसका नाम था हेमू कालाणी। अंग्रेज सेना की हथियारों से भरी एक ट्रेन वहां से गुजरने वाली थी। यह खबर जैसे ही हेमू तक पहुंची, उसने दो साथियों के साथ मिलकर उस ट्रेन को रोकने की योजना बनाई। रात के अंधेरे में वे रेल की पटरियों की फिश-प्लेटें खोलने लगे। उसी दौरान पुलिस आ पहुंची। हेमू के साथी किसी तरह बच निकले, लेकिन वह पकड़ा गया। उसे फांसी की सजा सुना दी गई। जिस सुबह फांसी दी जानी थी, वह शांति से उठा। स्नान किया, गीता के कुछ श्लोक पढ़े और दृढ़ कदमों से फांसी के तख्ते की ओर बढ़ गया। मैजिस्ट्रेट ने औपचारिक रूप से उसकी अंतिम इच्छा पूछी। हेमू ने बिना रुके कहा, 'बस एक इच्छा है, भारत माता की जय बोलकर विदा लेना चाहता हूं।' और फिर आवाज गूंजी, 'भारत माता की जय! इंकलाब जिंदाबाद!' हेमू की निर्भीकता और राष्ट्र प्रेम ने उसे अमर बना दिया।

Subrata Dhar

नक्सलवाद पर लगाम के बाद नई दुनिया में आदिवासियों की जगह का सवाल

क्या बस्तर को हक़ मिलेगा

आलोक पुतुल

बस्तर के घने जंगलों में बंदूक की आवाजें कम हुई हैं, लेकिन इसके साथ ही खनन, सड़क, बांध और अन्य विकास परियोजनाओं की गतिविधियां तेज हो रही हैं। माड़वी हिड़मा की मौत और 2025 के अभियानों को सुरक्षाबल बड़ी सफलता के रूप में दर्ज कर रहे हैं। कहा जा रहा है कि हथियारबंद माओवादी आंदोलन अब अंतिम चरण में है।

शून्य कौन भरेगा । बस्तर के आदिवासियों के सामने बड़ा सवाल है कि नक्सलवाद के बाद बन रही इस नई दुनिया में उनकी जगह क्या होगी? क्या वे अपने ही भू-भाग पर खनन पट्टों, ठेकों और योजनाओं के बीच केवल 'लाभार्थी' बनकर रह जाएंगे, या अपने संसाधनों और भविष्य पर निर्णय का समान अधिकार रखने वाले नागरिक बन पाएंगे? नक्सलवाद के अंत से पैदा हुए शून्य को कौन भरेगा - एक लोकतांत्रिक राज्य-संरचना, जो अधिकार, भागीदारी और न्याय तय करेगी, या बाजारोन्मुख परियोजनाएं, जो भूमि को 'संसाधन' और समुदाय को 'मानव संसाधन' की संज्ञा में सीमित कर देती हैं?

नया अवसर । इन बुनियादी प्रश्नों के बिना न तो सुरक्षा बलों की उपलब्धियों का सही मूल्यांकन संभव है, न ही विकास की दिशा का न्यायपूर्ण विश्लेषण। हथियारबंद माओवादी आंदोलन के कमजोर पड़ने या उसकी समाप्ति को केवल हिंसा के अंत के रूप में नहीं, ऐसे अवसर के रूप में देखना चाहिए, जिसमें राज्य, समाज और स्थानीय समुदाय मिलकर ऐसा विकास ढांचा तैयार कर सकते हैं, जहां सुरक्षा, विकास और न्याय एक साथ मौजूद हों।

सुरक्षाबलों की सफलता । बस्तर में सुरक्षाबलों की उपलब्धियों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। बीते 11 महीनों में 320 नक्सलियों के मारे जाने की बात नक्सली केंद्रीय समिति ने ही स्वीकार की है। इनमें 8 केंद्रीय समिति सदस्य और 15 राज्य समिति सदस्य शामिल हैं। CPI माओवादी के इतिहास में शीर्ष नेतृत्व के इतने बड़े हिस्से के एक ही दौर में मारे जाने की मिसाल पहले नहीं मिलती।

एक और पहलू । इसी के समानांतर, पोलित ब्यूरो सदस्य भूपति वेणुगोपाल उर्फ सोनू और केंद्रीय समिति सदस्य भास्कर जैसे नेताओं समेत बड़ी संख्या में माओवादियों के आत्मसमर्पण का सिलसिला इस बात का संकेत है कि संगठन के भीतर वैचारिक दृढ़ता और मनोबल, दोनों में गहरी दरारें पड़ चुकी हैं। वहीं माओवादियों की केंद्रीय सैन्य समिति द्वारा 2 से 8 दिसंबर 2025 तक 'पीपल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी सप्ताह' मनाने का आह्वान किया है। 25वीं वर्षगांठ को 'क्रांतिकारी उत्साह' के साथ मनाने, 'अंतिम सांस तक लड़ने' की प्रतिज्ञा और जंगलों से शहरी इलाकों तक, प्रतिरोध करने की 17 पन्नों की अपील की है।

अवसर और चुनौती

- असहमति व अस्वीकृति की भावना अब भी
- कॉरपोरेट हितों का खुला मैदान न बने बस्तर
- सुरक्षा, विकास व न्याय का नया ढांचा तैयार हो

चिंता की वजह । मध्य भारत के संसाधन-संपन्न इलाकों में विकास का मौजूदा मॉडल खनिज दोहन, बड़े उद्योगों, सड़क-रेल परियोजनाओं और तेजी से बढ़ते शहरीकरण पर टिका है। नक्सलवाद और सुरक्षा चिंताओं की आड़ में बार-बार आशंका जताई जा रही है कि पुडुचेरी जैसे राज्य से 80 गुना, दिल्ली से 26 गुना, गोवा से 10 गुना यहां तक कि केरल जैसे राज्य से भी बड़े भूभाग वाला बस्तर का इलाका, खनन कंपनियों और कॉरपोरेट हितों के लिए खुला भू-क्षेत्र बन सकता है। यदि राज्य केवल 'क्लियर-होल्ड' मॉडल अपनाएगा यानी इलाके को नक्सलियों से खाली करना और खनन परियोजनाओं के जरिए उस पर पकड़ मजबूत करना, तो आदिवासियों के लिए यह 'विकास' नहीं, होगा।

अधिकार और जवाबदेही । नक्सलवाद की स्थिति का विश्लेषण वनाधिकार और भू-अधिकार के वास्तविक क्रियान्वयन, पांचवीं अनुसूची क्षेत्रों में पंचायत कानूनों के पालन, खनन व उद्योग परियोजनाओं की सामाजिक स्वीकृति, सांस्कृतिक स्वायत्तता और पुलिस-प्रशासन की जवाबदेही के सवालों के बिना अधूरा है। कागज पर लिखे अधिकार और जमीन पर मिल रहा व्यवहार अब भी दो अलग दुनिया हैं।

नई शुरुआत । बस्तर के लिए असली सवाल नक्सली नेतृत्व की विफलता या सुरक्षा बलों की सफलता का हिसाब-किताब नहीं है। निर्णायक प्रश्न यह है कि नक्सलवाद के बाद की दुनिया किस आधार पर खड़ी की जाएगी - नियंत्रण और दोहन पर, या अधिकार और साझा भागीदारी पर? नक्सलवाद के खात्मे को अंत नहीं, बल्कि शुरुआत के रूप में देखना होगा। ऐसी शुरुआत, जिसमें विकास केवल खनन पट्टे, सड़कें और परियोजनाएं नहीं, बल्कि वह व्यवस्था हो जिसमें जंगल, जमीन, संस्कृति और नागरिक अधिकार सुरक्षित रहें।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

मजलिसों में है नाम मेरा मीर-ए-बेदिमाग़

कृष्ण प्रताप सिंह

Subrata Dhar

अवधनामा

कहते हैं, लखनवी तहजीब में कोई गैर नहीं होता। लेकिन 1782 में मकबूल शायर मीर तकी 'मीर' लखनऊ आए तो उसने उन्हें कतई भाव नहीं दिया। कहती रही हो दुनिया उन्हें 'खुदा-ए-सुखन' और लिख गए हों ग़ालिब कि रेख़्ते के एक वही उस्ताद नहीं हैं और अगले जमाने में कोई मीर भी था, न लखनऊ मीर का मुरीद हो पाया, न ही वे उसके। ठीक है कि इसके बावजूद लखनऊ उनसे नहीं ही छूटा और उन्होंने वहीं दुनिया को अलविदा कहा, लेकिन वे दिल्ली के ही अभिमानी प्रशंसक बने उसी का बखान करते रहे।

लखनवी इसका बुरा मानते तो भी वे दबते नहीं, महफिलों में उनसे भिड़ जाते। एक बार तो बात इतनी बढ़ गई कि उन्होंने लखनवियों को कह दिया कि 'हनोज लौंडे हो, हमारी कद्र क्या जानो!' और महफ़िल छोड़कर चले गए। फिर तो वे लखनऊ की निगाह से ऐसे उतरे कि 'झक्की, तुनुकमिजाज, गुस्सैल, बिगड़ैल, मगरूर, सिड़ी और बेदिमाग' हो गए। उन्हें खुद कहना पड़ा - *सीना तमाम चाक है सारा जिगर है दाग, है मजलिसों में नाम मेरा मीर-ए-बेदिमाग।* क्या ताज्जुब कि आज लखनऊ में उनकी कब्र तक के निशान नहीं बचे हैं, जिसे दिखाकर कहा जा सके कि सिरहाने मीर के आहिस्ता बोलो, अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

दरअसल, लखनऊ में उनका पहला दिन ही बहुत बुरा बीता था। इसके पीछे यह भी कारण माना जाता है कि अपना हुलिया ठीक न होने के बावजूद वे उस दिन एक मुशायरे में जा पहुंचे तो वहां किसी ने उन्हें पहचाना ही नहीं। 'कौन हैं आप और कहां से आए हैं' सुनते-सुनते अपनी बारी पर उन्होंने बहुत विचलित होकर पढ़ा : *क्या बूद-ओ-बाश पूछो हो पूरब के साकिनो, हमको गरीब जान के हंस हंस पुकार के/दिल्ली जो एक शहर था आलम में इन्तिखाब, रहते थे मुन्तखब ही जहां रोजगार के/ उसको फलक ने लूट के बर्बाद कर दिया, हम रहने वाले हैं उसी उजड़े दयार के।*

इतना सुनना था कि मुशायरे में सन्नाटा छा गया। अगले दिन अपराधबोध से भरे राजा टिकैत राय ने उनके निवास पर जाकर माफी मांगी और सेवा-टहल के लिए दो खादिम दिए। इसके साथ ही नवाब आसफउद्दौला से उनकी मुलाकात का इंतजाम भी कराया। आसफउद्दौला ने आगे बढ़कर उन्हें गले लगाया और उनके लिए सम्मानजनक वजीफा भी मुकर्रर कर दिया। लेकिन मीर इस बात को गवारा नहीं कर सके कि मुलाकात के वक्त तक आसफउद्दौला मुर्गियां लड़ा रहे थे!

नवाब आसफउद्दौला के साथ उनके बाद के अनुभव भी खराब ही रहे, तो उन्होंने उनके दरबार में जाना ही छोड़ दिया, जिससे उनका वजीफा भी बंद हो गया। फिर भी, अगले नवाब सआदत अली खां ने उनकी मुफलिसी के मद्देनजर हजार रुपये महीने के वजीफे का पैगाम भेजा तो उन्होंने उसे यह कहकर ठुकरा दिया कि नवाब खुद नहीं आए।

कांटे की बात

धर्मेंद्र मेरे लिए सब कुछ थे- दोस्त, फिलॉसफर, मार्गदर्शक, कवि। उनके जाने से मेरी जिंदगी में ऐसी कमी आ गई है, जिसे भरा नही जा सकता। जो खालीपन बना है, वह ताउम्र मेरे साथ रहेगा।

हेमा मालिनी, धर्मेंद्र के निधन के बाद पत्नी हेमा मालिनी की पहली प्रतिक्रिया

सप्ताह की शख़्सियत

कैंसर मरीजों के लिए राहत लेकर आए राज

उदयपुर की एक शादी में सितारों का जमावड़ा लगा, तो पूछा जाने लगा कि आखिर मेजबान कौन है? राज रामलिंगा मंटेना के बारे में इसके पहले बहुत कम लोगों ने सुना था, लेकिन अब उनकी सफलता की कहानी सभी को लुभा रही है। शादी उनकी बेटी की थी।

फार्मा इंडस्ट्री में बड़ा नाम

राज हेल्थकेयर उद्यमी हैं। फिलहाल फ्लोरिडा बेस्ड हैं और फार्मा इंडस्ट्री में बड़ा नाम हैं। भारत में कंप्यूटर साइंस की पढ़ाई कर उन्होंने अमेरिका का रुख किया था। वहां फार्मेसी की पढ़ाई की। जब अमेरिका का हेल्थकेयर सिस्टम बदला, तो टेक्नॉलजी और मेडिसिन, दोनों के मेल से राज ने अरबों डॉलर का साम्राज्य खड़ा किया।

कंपनियां बनाने में महारत

राज की शुरू की कंपनियों की लिस्ट लंबी है। उन्होंने 90 के दशक में OncoScripts नाम की दवा कंपनी बनाई, जिसे बाद में Cardinal Health ने खरीद लिया। इसके बाद उन्होंने International Oncology Network और फिर ICORE Healthcare बनाई - इन दोनों को भी बेच अरबों का मुनाफा कमाया। उनकी कंपनी Integra Connect मरीजों के डेटा का इस्तेमाल करके कैंसर इलाज के लिए खास तरह की सेवाएं देती है।

जनता जंक्शन

इरफ़ान

क्या BJP आगे बढ़ाएगी नीतीश की विरासत?

पूनम पाण्डे

बिहार विधानसभा चुनाव में NDA की प्रचंड जीत के साथ ही यह भी अहम है कि इस बार BJP सबसे बड़ी पार्टी बनी है। दूसरे नंबर पर JDU है। जिस तरह मंत्रियों के बीच विभागों का बंटवारा हुआ, उससे इस पर चर्चा होने लगी है कि क्या बिहार में सत्ता के समीकरण बदलेंगे और क्या BJP ही नीतीश कुमार की विरासत को आगे बढ़ाएगी।

गृह विभाग से कई संदेश

पहली बार ऐसा हुआ है कि बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के पास गृह विभाग नहीं है। BJP ने डिप्टी सीएम सम्राट चौधरी को गृह विभाग दिया है। इसके भी कई मायने निकाले जा रहे हैं। चुनाव के दौरान जन सुराज पार्टी के प्रशांत किशोर ने सम्राट चौधरी पर कई गंभीर आरोप लगाए थे। उन पर हत्या और गैंगरेप जैसे अपराधों में शामिल होने का आरोप लगाया गया, लेकिन BJP ने इन आरोपों की परवाह नहीं की। सम्राट चौधरी को टिकट ही नहीं दिया गया, केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने उनके पक्ष में रैली भी की। प्रचंड जीत के बाद सम्राट चौधरी को डिप्टी सीएम पद के साथ-साथ गृह विभाग भी दे दिया गया। इससे ये तो साफ है कि BJP बिहार में स्थानीय नेतृत्व की नई खेप तैयार कर रही है। पहले बिहार BJP के नेता के तौर पर सुशील मोदी का नाम ही सबकी जुबान पर आता था। अब BJP बिहार में सम्राट चौधरी को अपने बड़े नेता के तौर पर प्रॉजेक्ट कर रही है। कानून-व्यवस्था यहां चुनाव का सबसे बड़ा मुद्दा था। गृह विभाग जितना अहम है उतना ही चुनौतीपूर्ण भी। यहां काम करने पर जितनी पब्लिसिटी मिल सकती है, वहीं कुछ गलत होने पर उतना ही दबाव और विरोध भी होता है।

विशुद्ध राजनीति

कसौटी

सम्राट चौधरी के सामने अपनी पहचान बनाने की चुनौती है और मौका भी, जो BJP ने उन्हें दिया है। इसकी शुरुआत भी सम्राट चौधरी ने की है। गृह विभाग संभालने के बाद अपनी पहली प्रेस कॉन्फ्रेंस में उन्होंने संकेत दिए कि वे यूपी के सीएम योगी आदित्नाथ स्टाइल में बिहार की कानून-व्यवस्था को हैंडल करेंगे।

BJP ने साफ किया है कि बिहार की NDA सरकार नीतीश कुमार के सुशासन की विरासत को ही आगे बढ़ाएगी। जब से नीतीश कुमार की NDA में वापसी हुई है तब से BJP ने भी नीतीश के सुशासन की बात की है। जिस तरह का राजनीतिक समीकरण है, उससे ये लग रहा है कि नीतीश की विरासत को BJP संभालने की कोशिश में है और JDU इसमें धुंधली होती दिख रही है। हालांकि BJP ने इसमें जल्दबाजी नहीं दिखाई है और वह सधे कदमों से ही इस ओर बढ़ रही है। गृह विभाग BJP के पास होना इस दिशा में एक छोटा सा कदम है। कानून-व्यवस्था का मामला भले ही BJP ने अपने पास रखा है, लेकिन नीतीश कुमार के पास जनरल एडमिनिस्ट्रेशन विभाग है तो ट्रांसफर-पोस्टिंग जैसी पावर उनके पास ही रहेगी।

विशेष फोर्स का गठन

पहली प्रेस कॉन्फ्रेंस में ही जिस तरह सम्राट चौधरी ने अपराधियों को चेतावनी दी कि उनके लिए बिहार में कोई जगह नहीं है, उसमें कहीं न कहीं यूपी के योगी मॉडल को अपनाने की कोशिश दिखती है। यूपी की तर्ज पर ही चौधरी ने रोमियो से निपटने के लिए विशेष फोर्स बनाने का ऐलान किया है। यूपी में योगी ने एंटी रोमियो स्क्वैड बनाई थी। यूपी में जहां बुलडोजर और एनकाउंटर मॉडल की चर्चा रही है, वहीं सम्राट चौधरी ने 400 माफियाओं की लिस्ट बनाई है और कहा है कि इन पर सख्त कार्रवाई शुरू की जाएगी। हालांकि उन्होंने यह भी कहा है कि ऐसा कोर्ट की इजाजत लेकर ही किया जाएगा।

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें www.speakingtree.nbt.in

बाहर के अंधेरे को भी मिटा देता है भीतर का प्रकाश

देवेंद्रराज सुथार

जीवन को समझने के लिए केवल खुली आंखें पर्याप्त नहीं होतीं। आंखें दृश्य पकड़ती हैं, पर अर्थ हृदय पकड़ता है। जिस मन में भीतर से प्रकाश जलता है, वह साधारण क्षणों में भी असाधारण अर्थ खोज लेता है।

आज मनुष्य जितनी तेजी से आगे बढ़ रहा है, उतनी ही तेजी से भीतर से खाली भी होता जा रहा है। हाल ही में COP30 में वैज्ञानिकों की चेतावनी केवल पर्यावरण के संकट की ओर संकेत नहीं करती, बल्कि यह भी बताती है कि हमारी मानवीय दृष्टि संकटों की जड़ों को समझने में कमजोर पड़ती जा रही है। उपलब्धियों की दौड़ में हम रुककर देखने का धैर्य खो रहे हैं।

वर्तमान की भयावह तस्वीरें हमारी आंखों के सामने हैं- युद्धों से भागते लोग, समुद्र में डूबती उम्मीदें, जलवायु परिवर्तन से प्रभावित करोड़ों जीवन। दृश्य दिखते हैं, पर उनके भीतर की करुणा, पीड़ा और संघर्ष से हम दूर होते जा रहे हैं। सूचनाओं का शोर हमारी संवेदना को सुन्न कर देता है। परंतु यदि हृदय जागृत हो, तो सुर्खियों के पीछे के चेहरे, टूटते घर, बुझते सपने भी दिखने लगते हैं। आंखें केवल प्रकाश में काम करती हैं, जबकि हृदय अंधेरे में भी मार्ग खोज लेता है।

AI Image

भगवद्गीता कहती है- ज्ञान का दीपक भीतर जल जाए तो अंधकार अपने आप मिट जाता है। यह ज्ञान केवल पुस्तकीय नहीं, आत्मानुभूति से जन्म लेने वाला है। जागरूकता इसी यात्रा का पहला कदम है। इसका अर्थ है- अपने भीतर उठ रही बेचैनी, क्रोध, ईर्ष्या या भय को उसी क्षण पहचान लेना। इन भावनाओं के परिणामों को याद करना उन्हें शांत कर देता है।

स्वयं की जागरूकता और दूसरों की मनोभूमि की समझ - ये दो आंखों की तरह हैं। एक आंख अपने भीतर का सत्य दिखाती है, दूसरी दूसरों के मन में छिपी प्रेरणा को। जब दोनों दृष्टियां जागृत होती हैं, तो जीवन की भावनात्मक रूप से छल की जो धुंध बनी है, वह छंट जाती है और वास्तविकता स्पष्ट दिखाई देने लगती है। यहीं से दुनिया बदलने का मार्ग निकलता है, जो बाहर नहीं भीतर से शुरू होता है।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

बदलती दुनिया की सियासत

अंतरराष्ट्रीय राजनीति आज ऐसे दोराहे पर खड़ी है, जहां मित्रता और दुश्मनी के मायने पल-पल बदल रहे हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप का हालिया व्यवहार इसी अस्थिरता का उदाहरण बन गया है। इस्लामाबाद में हुए आत्मघाती हमले को उन्होंने कठोर शब्दों में आतंकवादी वारदात बताया, जबकि उससे एक दिन पहले लाल किले के करीब हुए जिहादी धमाके को उन्होंने सिर्फ 'धमाका' कहकर संवेदना भर जताई। आश्चर्य होता है कि यही ट्रंप 2018 में पाकिस्तान को खुलकर 'झूठ और फरेब' का सौदागर बताते थे और उसकी मदद पर सवाल खड़ा करते थे। लेकिन ऑपरेशन सिंदूर के बाद मानो पाकिस्तान के सेनाध्यक्ष जनरल मुनीर ने कोई ऐसी चाबी घुमा दी कि ट्रंप का रुख ही बदल गया।

-विभूति बुपक्या, ईमेल से

readersmail.nbt@gmail.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

आर.एन.आई. पंजीयन नंबर 1613/1957 स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए आर. कृष्णमूर्ति द्वारा टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, डॉ. डी. एन. रोड, फोर्ट, मुंबई 400001 से प्रकाशित और उनके द्वारा (1) टाइम्स ऑफ इंडिया सबर्बन प्रेस, आकुर्ली रोड, निकट वेस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे, कांदिवली (पू.) मुंबई 400101 एवं (2) टाइम्स ऑफ इंडिया प्रिंट सिटी, प्लॉट नं. 4, टी.टी.सी. इंडस्ट्रियल एरिया, ठाणे बेलापुर रोड, ऐरोली, नवी मुंबई-400708. फोन नं. (022) 2760 9999 ; फैक्सः (022) 2760 5275। फोन मुंबईः (022) 66353535, 22733535 रेस्पांसः (022) 66353636, 22733636 फैक्सः (022) 22731889, 22731144, कांदिवली (022) 28872324 से मुद्रित। **स्थानीय संपादक (मुंबई) : सुंदर चंद ठाकुर** (पी. आर. बी. अधिनियम के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिउत्तरदायी) सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। सड़क व रेल परिवहन सेवा शुल्कः मुंबई, ठाणे व रायगड जिलों के बाहर 1.00 रुपया। विमान सेवा शुल्कः रायपुर, नागपुर, गोवा एवं वाया 2.00 रुपये, इंदौर, चेन्नै एवं वाया 3.00 रुपये, अहमदाबाद, बेंगलुरु, कोचीन, कोयम्बतूर, एरनाकुलम, हैदराबाद, कोझीकोड, मंगलूर, त्रिवेंद्रम, उदयपुर, वाइजग एवं वाया 4.00 रुपये, दिल्ली, कोलकाता, एवं वाया 5.00 रुपये।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

संविधान पीठ के फैसले का दूरगामी असर

विराग गुप्ता
वकील, सुप्रीम कोर्ट
एक्स- @viraggupta

राज्यपालों द्वारा लंबे समय तक विधेयक को लंबित रखना संवैधानिक नैतिकता के खिलाफ है. लेकिन राज्यपालों की गलती को ठीक करने के लिए सुप्रीम कोर्ट से विधेयकों को गलत तरीके से स्वतः मंजूरी देना गलत है. उस फैसले के खिलाफ केंद्र सरकार ने अनुच्छेद-143 के तहत सुप्रीम कोर्ट से 14 सवालों पर न्यायिक राय मांगी थी. जस्टिस बीआर गवई ने रिटायरमेंट के पहले यह फैसला दिया. संविधान पीठ में शामिल दूसरे जज सूर्यकांत अब चीफ जस्टिस बन गये हैं. संविधान पीठ में शामिल दो अन्य जज विक्रमनाथ और पीएस नरसिम्हा भावी चीफ जस्टिस हैं. इसलिए इस फैसले का दूरगामी प्रभाव पड़ेगा.

विधानसभा से पारित विधेयकों पर राज्यपाल और राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए तीन महीने की समयसीमा निर्धारित करने के लिए सुप्रीम कोर्ट के दो जजों ने अप्रैल में फैसला दिया था. उस फैसले के खिलाफ पुर्नविचार याचिका दायर करने की बजाय केंद्र सरकार ने अनुच्छेद-143 के तहत सुप्रीम कोर्ट से 14 सवालों पर न्यायिक राय मांगी थी. दो तरह के मामलों में राष्ट्रपति को सुप्रीम कोर्ट से राय मांगने का अधिकार है. पहला- किसी कानूनी विवाद या तथ्यात्मक सवाल या फिर नये कानून बनाने से पहले उसकी संवैधानिक वैधता पर राय. और दूसरा- संविधान लागू होने के पहले संधि, समझौता या दस्तावेज से जुड़ा विवाद. इससे पहले 15 अन्य मामलों में सुप्रीम कोर्ट से राय मांगी गयी थी. उनमें से राम मंदिर और कावेरी जल विवाद के दो मामलों में सुप्रीम कोर्ट ने राय देने से इनकार कर दिया था. अहमदाबाद सेंट जेवियर्स कॉलेज मामले में 1974 में सुप्रीम कोर्ट के नौ जजों की संविधान पीठ ने कहा था कि अनुच्छेद 143 के तहत दी गयी राय सुप्रीम कोर्ट के न्यायिक फैसलों की तरह बाध्यकारी नहीं है. इस कारण संविधान पीठ के पांच जजों के फैसले के बावजूद तमिलनाडु मामले में दो जजों का अप्रैल में दिया गया न्यायिक फैसला अब भी प्रभावी है.

जस्टिस बीआर गवई ने रिटायरमेंट के पहले यह फैसला दिया. संविधान पीठ में शामिल दूसरे जज सूर्यकांत अब चीफ जस्टिस बन गये हैं. संविधान पीठ में शामिल दो अन्य जज विक्रमनाथ और पीएस नरसिम्हा भावी चीफ जस्टिस हैं. इसलिए इस फैसले का दूरगामी प्रभाव पड़ेगा. दो जजों ने न्यायिक फैसले में तीन महीने की समयसीमा का निर्धारण करके तमिलनाडु विधानसभा से पारित 10 विधेयकों को राज्यपाल या राष्ट्रपति की मंजूरी के बगैर ही कानून के तौर पर मान्य स्वीकृति दी थी. फैसले के बाद राजपत्र में अधिसूचित होने से सभी 10 विधेयक कानून बन गये हैं. लेकिन झारखंड और कनार्टक जैसे विपक्ष शासित कई राज्यों में लंबित विधेयकों पर कई वर्षों से विवाद और मुकदमेबाजी चल रही है. उन सभी विधेयकों के भविष्य का निर्धारण संविधान पीठ के नये फैसले के अनुसार हो सकता है. इस फैसले में पांच बड़ी बातें शामिल हैं. पहला, विधानसभा से पारित विधेयकों को राज्यपाल या राष्ट्रपति की मंजूरी के बगैर जजों के आदेश से स्वतः मंजूर करना संविधान में किये गये शक्तियों के बंटवारे के सिद्धांत के खिलाफ है. दूसरा, अनुच्छेद-142 के तहत संपूर्ण न्याय देने के लिए सुप्रीम कोर्ट के जजों को असाधारण शक्तियां मिली हैं. लेकिन विधेयकों को स्वतः मंजूरी देकर शक्ति के बेजा इस्तेमाल से राज्यपालों के कामकाज में अतिक्रमण नहीं किया जा सकता. तीसरा, राज्यपाल को अनिश्चित काल तक विधेयकों को मंजूरी देने से रोकने की शक्ति देना संघवाद के सिद्धांत के खिलाफ होगा. लेकिन संविधान के अनुच्छेद-200 में उल्लेखित यथाशीघ्र के भाव को जजों की व्याख्या से समयसीमा निर्धारित करने की कानूनी बाध्यता में नहीं बदला जा सकता है. इस बारे में संविधान में जरूरी बदलाव करने के लिए सिर्फ संसद को ही विधायी शक्ति हासिल है. लेकिन राज्यपाल लंबे समय तक विधेयकों को मंजूरी देने में विलंब करें, तो राज्य सरकारें सर्वोच्च अदालत का दरवाजा खटखटा सकती हैं. चौथा, ऐसे मामलों में राष्ट्रपति या राज्यपाल की कार्रवाई न्यायिक परीक्षण के दायरे में नहीं आती है. न्यायिक समीक्षा तभी की जा सकती है, जब राज्यपाल या राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद विधेयक को कानून की शक्ल मिल जाये. पांचवां, अनुच्छेद-200 के तहत विधानसभा से पारित विधेयकों के मामलों में राज्यपाल के पास तीन विकल्प हैं. विधेयक को मंजूरी देना, राष्ट्रपति के पास भेजना या आपत्तियों के साथ विधानसभा को पुर्नविचार के लिए वापस भेज देना. लेकिन धन-विधेयक को विधानसभा के पास वापस नहीं भेजा जा सकता है. धन-विधेयक के मामलों में राज्यपाल को मंजूरी देने या राष्ट्रपति के पास भेजने के ही दो विकल्प हासिल हैं.

इसके बाद दो जजों के पुराने फैसले में बदलाव के लिए पुर्नविचार याचिका से संविधान पीठ की बड़ी बेंच में सुनवाई की मांग हो सकती है. फैसले से केंद्र-राज्य संबंध, संघीय व्यवस्था, राज्यपालों के अधिकार, राज्यों में चुनी हुई सरकार और मनोनीत राज्यपालों के अधिकारों में विरोधाभास, न्यायिक पुनवरालोकन और सुप्रीम कोर्ट के जजों द्वारा अनुच्छेद-142 के बेजा इस्तेमाल से जुड़े मुद्दों पर बहस आगे बढ़ सकती है. जनता द्वारा निर्वाचित विधानसभा से पारित विधेयकों को राज्यपालों द्वारा लंबे समय तक लंबित रखना संवैधानिक नैतिकता के खिलाफ है. दो जजों के फैसले से साफ था कि विपक्ष शासित राज्यों में राज्यपाल बाधा डालने वाली मशीनरी के तौर पर काम कर रहे हैं. सरकारिया आयोग ने 1987 में राज्यपालों और राज्यों की निर्वाचित सरकार के बीच संघर्ष को रोकने के लिए अनेक सुझाव दिये थे. तमिलनाडु के पूर्व मुख्यमंत्री करुणानिधि ने केंद्र-राज्य संबंधों पर सुधार के लिए कमेटी बनायी थी. उसी तर्ज पर स्टालिन सरकार ने अप्रैल, 2025 में पूर्व जज जोसेफ कुरियन की अध्यक्षता में कमेटी के गठन का एलान किया था. लंबित मामलों में जजों के समयबद्ध तरीके से फैसला देने के लिए नियमावली है. विधायकों की अयोग्यता मामलों में स्पीकरों के निर्णय लेने के लिए भी सुप्रीम कोर्ट ने कई बार समयसीमा निर्धारित की है. इसलिए राज्यपालों को अदालती विवाद से बचाने के लिए संसद से अनुच्छेद-200 और 201 में बदलाव करके उचित समयसीमा का निर्धारण होना चाहिए. लेकिन राज्यपालों की गलती को ठीक करने के लिए सुप्रीम कोर्ट से विधेयकों को गलत तरीके से स्वतः मंजूरी देना पूरी तरह से गलत है. इसलिए विधि द्वारा शासित संवैधानिक व्यवस्था में एक गलत को दूसरे गलत से ठीक करने का प्रयास पूरी तरह से अस्वीकार्य है.

पूर्व उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने अनुच्छेद-142 के दुरुपयोग को परमाणु मिसाइल की तरह खतरनाक बताया था. उनके अनुसार, जज सुपर संसद की तरह काम कर रहे हैं, जो संविधान के मूल ढांचे के खिलाफ है. दो जजों के फैसले में कई अन्य देशों के कानूनों के अनुसार भारतीय संविधान के प्रावधानों की व्याख्या के अनुसार फैसला दिया गया था. संविधान पीठ के अनुसार भारत का संविधान अंग्रेजों के समय बनाये गये 1935 के अधिनियम से प्रेरित है. लेकिन विवादों के निपटारे के लिए विदेशी कानूनों की बजाय भारतीय संविधान के लिखित प्रावधानों को वरीयता दी जानी चाहिए. न्यायशास्त्र में स्वदेशी के भाव को संविधान पीठ की मान्यता इस फैसले का सबसे बड़ा कारण है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

इस्राइल में बसते भारतीय यहूदी

पूर्वोत्तर भारत में रह रहे बनी मेनाशे कबीले के 5,800 यहूदियों को इस्राइल में बसाने की मंजूरी वस्तुतः प्रवासी यहूदियों को अपने यहां ले जाकर बसाने की इस्राइल की महत्वाकांक्षी योजना का ही हिस्सा है.

इस्राइल की बेंजामिन नेतन्याहू की सरकार ने पूर्वोत्तर भारत में रहने वाले बनी मेनाशे कबीले के 5,800 यहूदियों को अगले पांच साल में अपने यहां ले जाने की जो योजना बनायी है, वह दुनियाभर में रह रहे प्रवासी यहूदियों को अपने यहां बसाने की उसकी महत्वाकांक्षी योजना का ही हिस्सा है. इस्राइल में हुए भारी विकास और यहूदियों की सुरक्षा को देखते हुए ज्यादातर देशों में रह रहे प्रवासी यहूदियों के लिए वहां बस जाने का भारी आकर्षण है. गौरतलब है कि पूर्वोत्तर भारत में बसे बनी मेनाशे कबीले के लोगों को लंबे समय तक यहूदी के तौर पर स्वीकार नहीं किया जाता था. लेकिन 2005 में तत्कालीन चीफ रब्बी ने उन्हें इस्राइल के वंशज के रूप में मान्यता दी और इनका इस्राइल में बसना शुरू हुआ. इस कबीले के 1,200 सदस्यों को पहले ही इस्राइल में बसाये जाने की अनुमति मिल चुकी थी. इनमें से ज्यादातर को शुरुआत में पश्चिमी तट पर बसाया गया था. लेकिन हाल ही में उन्हें उत्तरी इस्राइल के शहरों में भेजा गया है. अभी इस्राइल में इस कबीले के लगभग 2,500 लोग रहते हैं. बनी मेनाशे कबीला 2,700 साल पहले इस्राइली क्षेत्र में ही आबाद हुआ करता था. लेकिन असीरियन हमले के बाद उन्हें अपना घर-बार छोड़ कर भागना पड़ा था. तब कुल 10 जनजातियों के लोग वहां से भाग कर कहीं और बस गये थे. कई सदियों तक हुए हमलों और विस्थापन के दौरान यहूदी लगभग 2,000 साल पहले भारत आये थे. सबसे पहले वे समुद्री रास्ते से कोचीन आये. भारत में यहूदियों की वह सबसे पुरानी बसावट मानी जाती है. उसके बाद 18वीं और 19वीं सदी में सीरिया और इराक से अनेक यहूदी भारत आकर पुणे, कोलकाता और मुंबई में बस गये थे. बनी मेनाशे कबीले के यहूदी पूर्वोत्तर भारत के मणिपुर और मिजोरम क्षेत्रों में बस गये थे. इन लोगों को वापस ले जाने की प्रक्रिया के तहत रब्बियों (इस्राइली धर्मगुरुओं) का एक बड़ा प्रतिनिधिमंडल भारत आयेगा और इस कबीले के लोगों के इंटरव्यू लेगा. इस्राइल में बसने से पहले प्रवासी यहूदियों को धार्मिक इंटरव्यू, पहचान की पुष्टि और धार्मिक प्रक्रियाओं की औपचारिकता से गुजरना पड़ता है. रब्बियों की टीम तय करेगी कि कौन यहूदी धार्मिक मानकों को पूरा करते हैं. जांच के बाद लोगों के लिए कन्वर्जन क्लासेज शुरू होंगी, उनका दस्तावेजीकरण होगा, फिर इस्राइल के लिए उड़ानों की तैयारी की जायेगी. इस पूरी प्रक्रिया में लगभग 2.7 करोड़ डॉलर का खर्च आने का अनुमान है.

सिंध का भूगोल बदलने की रक्षा मंत्री की टिप्पणी के मायने

उमेश चतुर्वेदी
वरिष्ठ पत्रकार
uchaturvedi@gmail.com

राजनाथ सिंह का बयान इस तथ्य की ओर इशारा करता है कि सिंध में विभाजन को लेकर मांग बढ़ रही है. चौबीस साल पहले तत्कालीन उपप्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी ने भी कहा था कि अगर पाकिस्तान कश्मीर का सवाल उठायेगा, तो भारत जवाबी तौर पर सिंधियों के आत्मनिर्णय का सवाल उठायेगा.

रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने हाल ही में सार्वजनिक मंच से कहा है कि भविष्य में सिंध भारत का हिस्सा हो सकता है. भारत में इस संदर्भ में बलूचिस्तान और पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर पर ज्यादा बात होती है. सिंध अपेक्षाकृत कम चर्चित रहा है. हो सकता है कि यह राजनाथ सिंह का निजी विचार हो. पर रक्षा मंत्री होने के कारण उनके शब्द ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाते हैं. राजनाथ सिंह के इस बयान को चौबीस साल पहले की राजनीतिक घटना से जोड़ कर देखा जाना चाहिए. जुलाई, 2001 के दूसरे हफ्ते में राजधानी दिल्ली और आगरा में बड़ी हलचल थी. वजह थी, 15 जुलाई से शुरू हो रही परवेज मुशर्रफ की भारत यात्रा. वह तानाशाह राष्ट्रपति बन चुके थे. कारगिल का जख्म चूंकि हरा था, लिहाजा मुशर्रफ की यात्रा उत्सुकता, उम्मीद और आशंका के दायरे में थी.

उनकी यात्रा के ठीक पहले पाकिस्तान ने कश्मीरी आत्मनिर्णय को लेकर कूटनीतिक दबाव बनाना शुरू कर दिया था. मुशर्रफ की यात्रा के एक या दो दिन पहले दिल्ली में सिंधी समाज ने एक कार्यक्रम रखा था. उस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि तत्कालीन उपप्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी के सामने पाकिस्तान की उस कोशिश का जिक्र किया गया, तो भरे मंच से उन्होंने पाकिस्तान को चेता दिया था, 'अगर पाकिस्तान कश्मीर का सवाल उठायेगा, तो भारत जवाबी रूप से सिंध के आत्मनिर्णय का सवाल उठायेगा'. लालकृष्ण आडवाणी सिंध के वासी रहे हैं. उन्होंने लिखा है कि उनकी पीढ़ी के सिंध के लोग भारत के विभाजन को स्वीकार नहीं कर पाये. राजनाथ सिंह ने अपने व्याख्यान में इस लेख का भी जिक्र किया है. आडवाणी अपने राजनीतिक उत्कर्ष के दिनों में 'सिंधु दर्शन यात्रा' नाम से आयोजन करते रहे हैं, जिसका मकसद सिंधु के जरिये सिंध की माटी से बिछड़कर भारत आ गये लोगों को जोड़ना और उनकी स्मृतियों को जिंदा रखना रहा. बंटवारे से पहले सिंध की ज्यादातर आबादी हिंदू थी. गुजरात के कच्छ का रण और राजस्थान का थार रेगिस्तान इसके पूर्व में स्थित है, जबकि दक्षिण में इसका पांव अरब सागर पखार रहा है. अरब सागर के ही किनारे स्थित कराची पाकिस्तान का आर्थिक केंद्र है, जैसे भारत की आर्थिक राजधानी मुंबई है.

हिंदू समाज अर्चना में जिस जल का उपयोग करता है, उसे वह एक मंत्र के जरिये पवित्र करता है. वह मंत्र है, 'गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती, नर्मदे सिंधु कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु'. भारतीय संस्कृति के लिए सदियों से गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती , नर्मदा, सिंधु और कावेरी पवित्रतम नदियां रही हैं. उनका जल हमारी सभ्यता का वाहक रहा है. भारत की सप्त पवित्र नदियों में से एक सिंधु इसी सिंध प्रांत से होकर गुजरती है. इस लिहाज से देखें, तो भारत भूमि के लिए सिंध का महत्व समझ में आता है. सिंध के भीतर से भी भारत में विलय के लिए क्षीण ही सही, आवाजें उठती रही हैं. एक दौर में सिंध में मुहाजिर कौमी मूवमेंट चलता रहा, जिसके प्रमुख अल्ताफ हुसैन रहे. पाकिस्तान के प्रमुख राजनीतिक दल पाकिस्तान पीपल्स पार्टी, यानी पीपीपी का सबसे ज्यादा असर सिंध प्रांत में है, जिसकी प्रमुख कभी बेनजीर भुट्टो रही हैं. पीपीपी को भुट्टो परिवार की जागीर माना जाता है.

इन संदर्भों में देखें, तो राजनाथ सिंह का बयान इस तथ्य की ओर इशारा करता है कि सिंध में विभाजन को लेकर मांग बढ़ रही है. पाकिस्तान की बदहाली और उर्दू भाषी मुसलमानों के साथ दोयम दर्जे के व्यवहार की वजह से सिंध प्रांत में रह रहे मुहाजिर लोगों में भारत के प्रति अनुराग बढ़ रहा है. बेशक भारत से सीधी जुड़ी रही पीढ़ी अब नहीं रही, लेकिन उसने अपना दर्द, अपने सुहाने सपने और गौरवशाली अतीत को नयी पीढ़ी के साथ साझा किया है. नयी पीढ़ी के पास सूचना के तमाम साधन हैं, इसलिए वह देख पा रही है कि सीमा के उस पार की हालत कैसी है. आजादी से पहले सिंध की गिनती समृद्ध राज्यों में होती थी. सिंध कभी हिंदू बहुल राज्य था और कराची शहर हिंदू प्रधान था. आज पाकिस्तान की जनसंख्या में सिर्फ 2.17 प्रतिशत हिंदू हैं, जो करीब 52 लाख हैं. इनमें से करीब 49 लाख सिंध में ही रहते हैं. वर्ष 2023 की जनगणना के अनुसार, सिंध की जनसंख्या करीब 5.57 करोड़ है. वहां की जनसंख्या में हिंदुओं की हिस्सेदारी करीब 8.8 प्रतिशत है. ग्रामीण जनसंख्या में करीब 13.3 प्रतिशत हिंदू हैं. ये लोग ज्यादातर सिंध के थारपारकर और उमरकोट जिलों में रहते हैं.

विभाजन से पहले सिंध के कई जिलों में हिंदुओं की जनसंख्या लगभग 90 प्रतिशत थी. वर्ष 1941 की जनगणना के अनुसार, कराची में ही हिंदुओं की बड़ी जनसंख्या थी. आज भी उमरकोट जिले में मुस्लिम समुदाय की तुलना में हिंदुओं की संख्या ज्यादा है. इसकी दूरी भारतीय सीमा से सिर्फ 60 किलोमीटर है. राजनाथ सिंह के बयान ने वहां के हिंदू समुदाय के लोगों की उम्मीदें जगा दी होंगी. रक्षा मंत्री के बयान ने अतीत और इतिहास की एक धारणा को जिंदा तो कर ही दिया है, एक भूगोल की उम्मीदें भी जगा दी हैं. एक भूगोल कब हकीकत बन पायेगा, यह कहना फिलहाल मुश्किल है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को समाप्त करने के लिए सामूहिक प्रयास की जरूरत

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, वैश्विक स्तर पर हर तीन में से एक महिला किसी न किसी रूप में हिंसा का शिकार होती है. संयुक्त राष्ट्र यह भी मानता है कि तेजी से हो रही तकनीकी प्रगति के साथ, महिलाओं और लड़कियों के विरुद्ध तकनीक जनित हिंसा- साइबर बुलिंग, ऑनलाइन यौन उत्पीड़न, ट्रोलिंग, घृणा भरी बातें, पीछा करना, छवि आधारित दुर्व्यवहार और एआइ जनित डीपफेक- बढ़ रही है. नेपाल भी इस चिंताजनक प्रवृत्ति से अछूता नहीं है. डिजिटल दुनिया में महिलाओं और लड़कियों के विरुद्ध विभिन्न प्रकार की हिंसा व्याप्त है. नेपाल पुलिस की मानें, तो, महिलाओं के विरुद्ध होने वाले सभी अपराधों में घरेलू हिंसा का हिस्सा 78.3 प्रतिशत है, जिसके बाद यौन हिंसा का स्थान आता है. इस प्रकार नेपाली महिलाओं और लड़कियों को कई स्तरों पर हिंसा का सामना करना पड़ता है. पर डर और सामाजिक कलंक के कारण कई महिलाएं केस दर्ज करने से हिचकिचाती हैं. विभिन्न सरकारें यौन हिंसा से संबंधित हत्या के मामलों को सुलझाने और पीड़ितों को न्याय दिलाने का वादा तो करती हैं, पर अंततः इसकी परिणति अपराधियों को संरक्षण देने के रूप में होती है. नेपाल के सुदूर इलाकों तक व्यापक शिक्षा अभियान पहुंचाना, ऑनलाइन हिंसा के विभिन्न रूपों के बारे में जागरूकता फैलाना और महिलाओं को अपनी चुप्पी तोड़ने के लिए प्रोत्साहित करना बेहद जरूरी है. नेपाल को अब सुशीला कार्की के रूप में अपनी पहली महिला प्रधानमंत्री मिली है. ऐसे में लोगों का यह अपेक्षा करना स्वाभाविक है कि वह लैंगिक हिंसा को समाप्त करने और महिलाओं व लड़कियों के लिए एक सुरक्षित समाज बनाने की दिशा में काम करेंगी. पुरुषों को महिलाओं के खिलाफ जघन्य अपराध करने की अनुमति देने वाले पितृसत्तात्मक मूल्यों को चुनौती देना समाज में सभी की जिम्मेदारी है. हमारा लक्ष्य एक ऐसा समाज बनाना होना चाहिए, जहां पुरुष और महिलाएं, युवा और वृद्ध, लैंगिक हिंसा को एक सामूहिक नैतिक विफलता के रूप में देखना शुरू करें.

THE KATHMANDU POST

बोधि वृक्ष

सांसारिक सुख क्षणभंगुर है

सुख की लालसा हर सृजित प्राणी की स्वाभाविक प्रवृत्ति है. हर जीव सुख चाहता है और दुख से बचने की कोशिश करता है. पूरी सृष्टि शांति और आनंद की तलाश में निरंतर जुटी रहती है. लेकिन मनुष्य, जो सभी जीवों में सबसे विकसित और बुद्धिमान है, उसकी सुख खोज साधारण नहीं होती. मनुष्य और पशु में मूल अंतर यही है कि पशु का सुख पूरी तरह शरीर केंद्रित होता है. उन्हें अच्छा भोजन और आराम से सोने की जगह मिल जाये, तो वे प्रसन्न हो जाते हैं. वे मानसिक शांति या स्थायी आनंद की तलाश में नहीं भटकते. पर मनुष्य ऐसा नहीं है. उसकी बुद्धि उसे बताती है कि केवल भोजन या आराम कभी भी स्थायी संतुष्टि नहीं दे सकते. प्राचीन काल से ही मनुष्य समझ रहा है कि सांसारिक सुख क्षणभंगुर है. अच्छा भोजन हो या बढ़िया घर, इनसे मिलने वाला आनंद कुछ पल का होता है. जैसे रसगुल्ला खाने वाला व्यक्ति पहले कौर में आनंद पाता है, पर निगलने के बाद स्वाद भी खो जाता है और आनंद भी. जो चीज सीमित है, वह सीमित सुख ही दे सकती है. आज मौजूद है, कल मिट जायेगी. मनुष्य ने समझा कि स्थायी सुख केवल उसी से मिल सकता है जो स्वयं अनंत हो. वही अनंत सत्ता, जिसे शास्त्रों में ब्रह्म कहा गया है. जब सीमित मनुष्य उस असीम सत्ता से जुड़ता है, तभी उसे कभी न समाप्त होने वाला आनंद मिलता है. इसी खोज ने मनुष्य को ज्ञान की ओर अग्रसर किया.

परंतु सांसारिक ज्ञान कितना भी बड़ा हो, अंततः सीमित ही होता है. मान लीजिए, दुनिया में एक से दो अरब पुस्तकें हों, तब भी उनमें समाया ज्ञान सीमित ही रहेगा. परंतु ब्रह्मज्ञान या आध्यात्मिक ज्ञान असीम है. इसी कारण शास्त्रों में ब्रह्मविद्या को सच्चा विज्ञान कहा गया है, जबकि बाकी सबको 'अविद्या', अर्थात सीमित, अस्थायी ज्ञान. जब तक मनुष्य उस अनंत सत्ता को नहीं पा लेता, तब तक वह स्थायी सुख नहीं पा सकता. यही समझ मनुष्य को धर्म या अध्यात्म की ओर ले जाती है. बुद्धिमान जानते हैं कि सीमित सुखों के पीछे दौड़ना व्यर्थ है. इसलिए वे धर्म साधना के मार्ग पर चलते हैं.

-श्री श्री आनंदमूर्ति

कुछ अलग

रील का फील जुदा होता है

राकेश सोहम्
व्यंग्यकार
sohamsahitya@gmail.com

इन दिनों घटनाओं का रील में होना जरूरी है, वर्ना घटनाएं बेमानी हो जाती हैं. आजकल एकमात्र रील ही सत्य है. गो कि 'रील सत्यम् जगत मिथ्या' का अजब ब्रह्म वाक्य चरितार्थ हो रहा है. रील का जुनून लोगों के सिर चढ़ कर बोल रहा है. लोग 'रियल' पर नहीं, 'रील' पर भरोसा करने लगे हैं. रील सच है और रियल भ्रम! रील का आभासी चित्रण, रियल के भाव को भंग करने में लगा है. अब आंखों के सामने खड़ा साक्षात व्यक्ति रील में पहचाना जाता है.

कई बार तो रील का जुनूनी व्यक्ति अपने साथ हुई दुर्घटना से बेखबर अपनी ही रील बनाने में मशगूल रहता है. चोटिल अवस्था में भी रील को सोशल मीडिया पर अपलोड करके खुश होता है. बार-बार अनेक कोणों से मोबाइल में झांकने की कोशिश करता है. पर मजा देखिए कि रील पर मिले लाइक और कमेंट की बदौलत अपने साथ हुई दुर्घटना पर भरोसा जुटाता है. फिर रियलाइज करके कराह उठता है कि देखो दुनिया वालो, तुम भी देखो! कितने कष्ट में हूं मैं. कितनी मुसीबत से गुजर रहा हूं. बहरहाल, रील से दुनिया पर छा जाने का चलन नया नहीं है. रुपहले पर्दे के कलाकार रील की बदौलत ही दुनिया को आकर्षित करते रहे हैं. एक जमाना था, जब कोई फिल्म कितनी बड़ी है इसका हिसाब उसकी रील की लंबाई से लगाया जाता था. दर्शक सिनेमाघरों में टिकट खरीदते हुए पूछते थे कि भैया! यह फिल्म कितने रील की है? जवाब सुनकर आंखें फाड़ लेते, 'ओ अच्छा! सोलह रील!' प्रसिद्ध फिल्म 'शोले' रिकॉर्ड 'तेईस रील' की थी. इसकी कुल अवधि दो सौ चार मिनट थी. दर्शक तीन घंटे, चालीस मिनट सिनेमाघरों में सांस रोके बैठे रहते थे. इतना धैर्य तब होता था लोगों में. अब तो धैर्य ही रत्ती भर का बचा है. धैर्य मात्र तीस सेकंड की रील में सिमट गया है. उठते-बैठते, चलते-फिरते, यहां तक कि जरूरी विमर्श-बैठकों में भी वह बेमतलबी-उकसाऊ रील में डूबता-उतराता रहता है. दाह-संस्कार जैसे अवसरों पर भी रील-दर-रील सरकाता रहता है. बेचैनी में चैन तलाशने का यह अनोखा उपाय बन गया है.

जनकलाल का नाती साल भर से एक रील कन्या पर फिदा था. जब वह सामने आयी, तो बेचारा उसे पहचान ही न सका. उसने विवाह प्रस्ताव ठुकरा दिया. अब पछता रहा है. रील में सजी-धजी शोख हसीना उसके सामने होकर भी आकर्षित नहीं कर पायी. बतर्ज एक फिल्मी गीत, 'मेरी जिंदगी में आते, तो कुछ और बात होती...' वह पिनपिनाता है- 'तुम रील में जब आते, तो कुछ और बात होती... कुछ और बात होती... रील बार-बार सरकाते तो कुछ और बात होती... कुछ और बात होती... भई, रील का फील जुदा होता है.

आपके पत्र

जमीन के कारण विकास कार्य बाधित

बिहार में विकास की गति अक्सर जमीन आवंटन के बाद रुक जाती है. क्योंकि कई परियोजनाएं तकनीकी बाधाओं, प्रशासनिक देरी और स्थानीय विवादों के कारण आगे नहीं बढ़ पातीं. सीमांकन की त्रुटियां, कागजी गड़बड़ी, मुआवजे पर असहमति और पुराने भूमि विवाद निर्माण कार्य को वर्षों तक रोक देते हैं. सड़क, पुल, स्वास्थ्य संस्थान और शैक्षणिक परिसरों से जुड़ी परियोजनाएं सबसे अधिक प्रभावित होती हैं. इसके समाधान के लिए भूमि रिकॉर्ड का डिजिटलीकरण, पारदर्शी सीमांकन, सरल प्रक्रिया और समयबद्ध निगरानी आवश्यक है.

प्रभात कुमार भारती, मधुबनी

आत्महत्या के बढ़ते आंकड़े चिंताजनक

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की ओर से जारी बच्चों की आत्महत्या के आंकड़े देश के भविष्य पर गंभीर संकट की ओर इशारा कर रहे हैं. 2022 में 13,044 बच्चों ने आत्महत्या की, जिनमें 2,248 छात्र-छात्राओं ने परीक्षा में फेल होने पर जान दी है. यह हमारे समाज और शिक्षा प्रणाली पर प्रश्न चिह्न खड़ा करता है. 2001 के आंकड़ों के अनुसार, देश में 5,425 बच्चों ने आत्महत्या की थी. पिछले 21 वर्षों में बच्चों की आत्महत्या की घटनाओं में लगभग 2.4 गुना की वृद्धि हुई है.

प्रसिद्ध यादव, पटना

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013, ■ मेल करें : patna @prabhatkhabar.in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है.

Machine Translated by Google

सबूत का बोझ

SIR की एन्यूमरेशन प्रोसेस में एलिजिबिलिटी के लिए निवासियों पर ज़िम्मेदारी डालना हैरान करने वाला है

टी इलेक्शन कमीशन ऑफ़ इंडिया (ECI) की इलेक्टोरल रोल की SIR, जो 12 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों (UT) में हो रही है, इसके लागू होने और इसके बेसिक तरीके की वजह से तुरंत न्यायिक जांच की मांग करती है। जबकि सुप्रीम कोर्ट बिहार में शुरू की गई SIR प्रक्रिया की संवैधानिकता को चुनौती देने वाली सुनवाई जारी रखे हुए है, दूसरे राज्यों में भी यही तरीका अपनाया जा रहा है। वोटरों को ब्लॉक लेवल ऑफिसर्स (BLO) से मिले गिनती के फॉर्म भरने होते हैं और अपनी डिटेल्स को 2002-2005 की इलेक्टोरल रोल से मिलाना होता है। हालांकि बिहार के डेटा से पता चलता है कि इस प्रक्रिया से चुनाव के नतीजों में कोई बड़ा बदलाव नहीं आया, लेकिन इससे वोटरों के जेंडर रेश्यो में भारी गिरावट देखी गई। दूसरी लोकल गड़बड़ियां भी चिंता की बात हैं। ECI का दावा है कि 12 राज्यों और UTs में ज़्यादातर वोटरों को गिनती के फ़ॉर्म दे दिए गए हैं, लेकिन असली वोटर फ़ॉर्म के लिए अभी भी परेशान हैं, और अगले महीने आने वाले ड्राफ़्ट रोल में नाम दर्ज कराने के लिए ज़रूरी कागज़ात को लेकर कन्फ्यूजन बना हुआ है। BLO को घर-घर जाने की गाइडलाइन सिर्फ़ कागज़ पर लगती है। गुवाहाटी हाई कोर्ट ने डॉ. मनमोहन सिंह (1999) मामले में, रिप्रेजेंटेशन ऑफ़ द पीपल एक्ट, 1950 की ज़रूरतों का बड़े पैमाने पर मतलब निकाला: एक आम निवासी वह आदतन निवासी है जिसका इरादा हमेशा वहीं रहने का है — जिसे कोई भी समझदार व्यक्ति उस जगह का निवासी मान लेगा। इसी सिद्धांत से काम करते हुए, ECI और न्यायपालिका ने पुराने समय से यह मान लिया है कि कोई भी रहने वाला वयस्क, डिफ़ॉल्ट रूप से, एक वैलिड वोटर था।

SIR इस सोच को उलट देता है। पहले वोट देने के बावजूद, हर वोटर को अब ECI के लिस्ट किए गए पुराने रिकॉर्ड या डॉक्यूमेंट्स के आधार पर अपनी लेजिटिमेसी साबित करनी होगी। राज्य से नागरिकों पर बोझ डालने से, खासकर शादीशुदा महिलाओं और बिहार की तरह बाहर रहने वालों के वोट छीनने का बड़ा खतरा है। जैसा कि कोर्ट ने माना है, "आम तौर पर रहने वाले" की ज़रूरत का सख्त मतलब निकालने से डेमोक्रेटिक प्रोसेस खराब हो सकता है।

बिहार पर सुनवाई के दौरान, कोर्ट ने इसे लागू करने पर ध्यान दिया, और असली वोटरों की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी पार्टी के प्रतिनिधियों और कानूनी वॉलंटियर्स पर डाल दी। उसने यह नहीं देखा कि गिनती के फॉर्म का तरीका संविधान की कसौटी पर खरा उतरता है या नहीं, और न ही उसने बदले हुए रोल में लगातार गलतियों को ठीक किया – शायद यह परेशान BLOs के गलतियों को ठीक न करने का नतीजा है। ECI सबके लिए वयस्क वोटरशिप पक्का करने के लिए ज़्यादा सब्र से घर-घर जाकर वेरिफिकेशन कर सकता था, जिसे टेक्नोलॉजी से चलने वाले डी-डुप्लीकेशन से पूरा किया जा सकता था। इसके बजाय, उसने वोटरशिप की सुरक्षा के बजाय रोल को "साफ" करने को प्राथमिकता देने वाले तरीके पर ज़ोर दिया। जैसे-जैसे SIR बढ़ता है, कोर्ट को प्रोसेस की संवैधानिक बुनियाद की जांच करने के लिए प्रोसीजरल निगरानी से आगे बढ़ना होगा। ज़रूरी बात यह है कि एक साफ़ निर्देश हो जो सही एनरोलमेंट का बोझ ECI पर वापस लाए, न कि नागरिकों को यह साबित करने के लिए छोड़ दिया जाए कि वे उन रोल पर हैं जिन पर वे सालों से हैं।

घरेलू परेशानी

भारतीय क्रिकेट की पारंपरिक ताकतें अब कमजोरियों के रूप में देखी जा रही हैं

जैसे ही गुवाहाटी में धूल जमी बुधवार को बरसापारा क्रिकेट स्टेडियम में, घरेलू टेस्ट के तौर पर भारत का दबदबा बिखर गया था। घर पर अजेय लग रही और ऐसी चमक के साथ कि पूर्व ऑस्ट्रेलियाई कप्तान स्टीव वॉ ने भारत को आखिरी सीमा कहा था, विरोधी टीमें टिकने के लिए संघर्ष कर रही थीं।

लेकिन बादशाहत टूटती है और यह सच्चाई ऋषभ पंत की टीम पर भारी पड़ी, क्योंकि साउथ अफ्रीका ने दूसरा टेस्ट 408 रन से जीतकर सीरीज़ 2-0 से अपने नाम कर ली। पिछले साल, मेहमान न्यूज़ीलैंड ने टेस्ट सीरीज़ 3-0 से अपने नाम की थी, और अब टेम्बा बावुमा की बारी है कि वे तख्तापलट करें। साउथ अफ़्रीकी कप्तान ने कोलकाता और गुवाहाटी दोनों जगह होशियारी से लीड की, और उनकी टीम के शानदार प्रदर्शन ने ICC वर्ल्ड टेस्ट चैंपियनशिप में उनके डिफेंडिंग चैंपियन होने का सबूत दिया। कोच गौतम गम्भीर की कड़ी आलोचना हो रही है, हालांकि उनकी देखरेख में भारत ने इंग्लैंड में टेस्ट सीरीज़ ड्रॉ की और ICC चैंपियंस ट्रॉफी और एशिया कप जीता। लेकिन घर पर टेस्ट में अचानक कमज़ोरी एक दुखती रग की तरह बाहर है। यह सच है कि पिछले कुछ सालों में, खिलाड़ी बदल गए हैं और भारत में अब विराट कोहली, रोहित शर्मा, आर. अश्विन और चेतेश्वर पुजारा टेस्ट व्हाइट में नहीं हैं। इस बीच, अजिंक्य रहाणे को बाहर कर दिया गया है और मोहम्मद शमी की अभी वापसी बाकी है।

बदलाव तो होना ही है; लेकिन घरेलू टेस्ट मैचों में भारत की हार बहुत ज़्यादा हुई है। दूसरे टेस्ट में चोटिल कप्तान शुभमन गिल का न होना एक बड़ा झटका था, और बाकी बैट्समैन अपना गेम बेहतर नहीं कर पाए। लिमिटेड ओवर्स क्रिकेट में जो एड्रेनालाईन रश और तुरंत मिलने वाली खुशी मिलती है, उसने कई खिलाड़ियों की ज़िंदा रहने की आदत को कम कर दिया है। टेस्ट इनिंग्स बनाने का सब्र, समय लेकर बैटिंग करने की काबिलियत, और स्पिन का सामना करने का बारीक तरीका, ये सब अब टीम में कम हो गया है।

टीम में टैलेंट है, लेकिन खिलाड़ियों को लगातार बदलने और बहुत ज़्यादा ऑलराउंडरों पर ज़्यादा डिपेंडेंस ने प्लेइंग इलेवन को परेशान कर दिया है। ओ-स्पिनर साइमन हार्मर और बाएं हाथ के स्पीडस्टर मार्को जेनसन ने पूरी सीरीज़ में क्रमशः 17 और 12 विकेट लिए, और भारतीय बैटिंग की कमियों को उजागर किया। पिछले चार दशकों में, भारत के पास नंबर तीन और चार पर जाने-माने बैट्समैन रहे हैं। दिलीप वेंगसरकर-मोहिंदर अमरनाथ; राहुल द्रविड़-सचिन तेंदुलकर; और पुजारा-कोहली, सभी ने ड्यूटी की है। अब मज़बूती लाने का समय है, जबकि बैटिंग कोर गिल, केएल राहुल और यशस्वी जायसवाल के आस-पास घूमेगा। ऑलराउंडर रवींद्र जडेजा, जो आखिरी दिग्गज हैं, 36 साल के हैं। सच है, बदलाव अभी भी जारी है, लेकिन अगुआ जसप्रीत बुमराह और उनके बॉलिंग साथी अपने बैटिंग साथियों से ज़्यादा रन बचाने की उम्मीद कर रहे होंगे।

कमलेसन केस और उसका आसान सबक

संजय हेगड़े

द्वारा नामित एक वरिष्ठ अधिवक्ता है

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

हर लोकतंत्र ऐसे पलों का सामना करता है जब जो मूल्य ज़रूरी भी हैं और जो महत्त्वपूर्ण भी माने जाते हैं, वे टकराते हैं। लेफ्टिनेंट सैमुअल कमलेसन का मामला, ज़रूरी परेड के दौरान अपनी रेजिमेंट के मंदिर या गुरुद्वारे के पवित्र स्थान में जाने से मना करने पर इंडियन आर्मी से निकाल दिया जाना, ऐसा ही एक टकराव है। दिल्ली हाई कोर्ट ने (सैमुअल कमलेसन बनाम यूनियन ऑफ़ इंडिया) इस बर्खास्तगी को सही ठहराया, और सुप्रीम कोर्ट ऑफ़ इंडिया ने दखल देने से मना कर दिया। कानूनी नतीजा साफ़ है। नैतिक बेचैनी बनी हुई है।

कोर्ट ने मिलिट्री ज़रूरत पर भरोसा किया, अनुशासन और संविधान के आर्टिकल 33 के तहत दी गई ताकत। फैसले में उनके इनकार को निजी विश्वास के बजाय कानूनी आदेश न मानने के दायरे में रखा गया है। उस छोटी नज़र से देखें तो, अदालतों ने ठीक वैसा ही काम किया जैसा उन्हें लगता है कि उन्हें मिलिट्री मामलों में करना चाहिए: जनरलों की बात मानना। लेकिन उस सम्मान से देश की बातचीत खत्म नहीं होनी चाहिए। जब दो सही बातें टकराती हैं – ज़मीर और मेलजोल – तो दुख सिर्फ़ यह नहीं है कि एक पक्ष हार जाए। दुख तब होता है जब संस्थाएं यह भूल जाती हैं कि अक्सर समझौता करना मुमकिन होता है, और अक्सर समझदारी भरा भी होता है।

आर्मी का नज़रिया इंडियन आर्मी ने कोर्ट को जो बताया, उसे कोई भी खारिज नहीं कर सकता। एक फिक्स्ड-क्लास रेजिमेंट में एक कमांडिंग ऑफिसर को उन लोगों द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए जिन्हें वह युद्ध में लीड करता है। रस्में और समारोह, हालांकि विश्वास से जुड़े होते हैं, मनोबल बढ़ाने का काम करते हैं। ऑफिसर्स से उम्मीद की जाती है कि वे सैनिकों के साथ अपने रिश्ते को मजबूत करने के लिए पूरी तरह से हिस्सा लें। इंडियन आर्मी ने ऑफिसर के रुख को दूरी बनाने वाला माना, भले ही उसका मतलब सम्मान से हो। कोर्ट ने इस नज़रिए को मान लिया।

मिलिट्री का तरीका एकता मांगता है। और भारत में किसी भी संस्था ने इंडियन आर्मी से ज़्यादा सम्मान के साथ एकता को बनाए नहीं रखा है। चाहे कश्मीर हो या लद्दाख, बाढ़ में आम लोगों को बचाना हो या यूनाइटेड नेशंस के मिशन को लीड करना हो, इंडियन आर्मी का अलग-अलग तरह की चीज़ों का सम्मान करते हुए एक जैसा मकसद बनाने का एक गर्व भरा रिकॉर्ड रहा है।

हाल ही का एक उदाहरण दोहराने लायक है। कर्नल सोया कुरैशी को इंडियन आर्मी ने प्रेस ब्रीफिंग के दौरान ऑपरेशन सिंदूर के चेहरे के तौर पर पेश किया था। उनकी लीडरशिप, कॉन्फिडेंस और प्रोफेशनलिज़्म की पूरे देश में तारीफ़ हुई थी। यह याद दिलाता है कि इंडियन आर्मी अक्सर महिलाओं और हर धर्म और इलाके के ऑफिसर्स को जगह, सम्मान और ज़िम्मेदारी देने में सिविलियन सोसाइटी से आगे रही है। सबको साथ लेकर चलने की यह भावना इंडियन आर्मी की ताकतों में से एक है, और देश को इस पर गर्व है। इसीलिए कमलेसन केस चुभता है।

बिना देखे कोई भी तथ्य नहीं पढ़ सकता

उनके रुख में ईमानदारी थी। वह परेड में शामिल हुए। उन्होंने रीति-रिवाजों का सम्मान किया। उन्होंने अपने जूते उतारे, पगड़ी बांधी और अपने सैनिकों के साथ खड़े हो गए। उनकी बस एक ही रिक्वेस्ट थी कि पूजा के दौरान पवित्र जगह में न जाएं, जो कई प्रोटेस्टेंट ईसाइयों के लिए एक मुख्य धार्मिक मुद्दा था। यह स्थिति चैरियट्स ऑफ़ फायर की याद दिलाती है, एरिक लिडेल की कहानी, जो रविवार को रेस नहीं करता था। उसे सज़ा देने के बजाय, ब्रिटिश ओलंपिक टीम ने अपना पूरा प्लान फिर से बनाया। उसने एक अलग दिन मुकाबला किया। उसने गोल्ड जीता। दुनिया बिखरी नहीं। एक छोटी सी बात ने ज़मीर और टीम स्पिरिट दोनों को बनाए रखा। अगर एक ओलंपिक टीम अपनी सच्ची सोच को बनाए रखने के लिए थोड़ा भी झुक सकती है, तो क्या आर्मी के बड़े अधिकारी यहां ऐसा नहीं कर सकते थे?

एक खोया हुआ ओसर और एक खोया हुआ सिग्नल। इस मामले में नुकसान एक करियर से भी बड़ा है। इंडियन आर्म्ड फोर्सेज़ ने शायद एक नया ओसर खो दिया है। लेकिन, इससे भी ज़रूरी बात यह है कि इस फैसले से माइनॉरिटी सैनिकों को जो मैसेज जाता है, वह परेशान करने वाला है: कि जब आप परेड में शामिल होते हैं, यूनिट के साथ खड़े होते हैं, और सम्मान दिखाते हैं, तब भी आपके ज़मीर की हद कुछ भी नहीं होती।

भारत की मिलिट्री एकता कभी भी मेजॉरिटी के आराम पर नहीं बनी है। यह भरोसे पर बनी है। सिख, मुस्लिम, हिंदू और ईसाई सैनिकों ने 1965 और 1971 में एक साथ लड़ाई लड़ी, कारगिल में एक साथ खड़े रहे, और आज भी उग्रवाद वाले इलाकों में एक साथ सेवा कर रहे हैं। अल्पसंख्यक धर्मों के सैनिकों को कभी यह सोचने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए कि क्या उन्हें ऐसी लाइन पार करने के लिए कहा जाएगा जिसकी उनकी मान्यताएं मना करती हैं।

हो सकता है कि कोर्ट का यह इरादा न रहा हो। हो सकता है कि इंडियन आर्मी का भी यह इरादा न रहा हो। लेकिन संदेश सिर्फ़ इरादे पर निर्भर नहीं करते।

न्यायपालिका की सेना के आगे झुकने की आदत यह बात समझ में आती है। कोर्ट के पास टैक्टिकल या डिसिप्लिनरी फैसलों पर दोबारा सोचने के लिए टूल्स, अनुभव और इंस्टीट्यूशनल जानकारी की कमी है। फिर भी, यह कहना सही नहीं है कि कोर्ट हमेशा दूर रहे हैं। महिला ऑफिसर्स के मामलों में, सुप्रीम कोर्ट ने लंबे समय से चली आ रही मिलिट्री प्रैक्टिस पर फिर से सोचने पर मजबूर किया। इसने भर्ती नियमों, पेंशन नियमों और प्रमोशन पॉलिसी में दखल दिया है। कोर्ट ने पहले भी इंडियन आर्मी को बदला है, जब बराबरी की ज़रूरत थी।

इस मामले में, मुद्दा छोटा था: पूजा के दौरान पवित्र जगह में जाने पर सच्ची धार्मिक आपत्ति। ऑफिसर ने ड्यूटी से मना नहीं किया, अपनी पोस्ट नहीं छोड़ी, और कमांड की चेन को कमज़ोर नहीं किया। वह इज़्ज़त से बाहर खड़ा था, ताकि उसके लीडर उसे देख सकें। कोर्ट पूछ सकता था कि क्या इंडियन आर्मी का तरीका प्रोपोर्शनैलिटी के टेस्ट पर खरा उतरा, या हल्का-फुल्का बर्ताव।

जब कर्तव्य पूरा होता है

अंतरात्मा की आवाज़, असली परीक्षा दोनों के साथ रहने का रास्ता खोजने में है

अंतरात्मा की आवाज़ का सम्मान करते हुए भी यही मकसद हासिल किया जा सकता था। अगर ज्यूडिशियरी चाहती तो उसके पास जगह थी।

बिजोए इमैनुएल और अन्य बनाम में सिद्धांत केरल राज्य और अन्य का मामला याद आता है, जहाँ जो बच्चे राष्ट्रगान नहीं गाते थे, उन्हें भी सुरक्षा दी जाती थी क्योंकि वे सम्मान के साथ खड़े होते थे। जस्टिस चिन्नप्पा रेड्डी ने देश को याद दिलाया: "हमारी परंपरा सहनशीलता सिखाती है, हमारी सोच सहनशीलता का उपदेश देती है, और हमारा संविधान सहनशीलता का पालन करता है।" इस मामले में उन शब्दों को न सुनना मुश्किल है।

ड्रेफस से सबक ड्रेफस एयर के साथ समानता बिल्कुल वैसी नहीं है, और न ही होनी चाहिए। लेकिन इसमें जो चेतावनी है वह असली है।

फ्रांस की सेना, जो घमंडी और मज़बूत थी, उसने खुद को एक-एक करके छोटे-छोटे कदम उठाकर भेदभाव की तरफ़ बढ़ने दिया। विक्टर ह्यूगो ने चेतावनी दी थी कि सेनाएं अपनी धार तब खो देती हैं जब वे न्याय की अपनी समझ खो देती हैं। सबसे मज़बूत संस्था भी ऐसे पैटर्न में पड़ सकती है जहां रीति-रिवाज़ सख़्ती बन जाते हैं और सख़्ती अलग-थलग करने वाली बन जाती है। भारत को इस बहाव से बचना चाहिए। भारतीय सेना का सम्मान इसलिए किया जाता है क्योंकि यह सांप्रदायिक और राजनीतिक मतभेदों से ऊपर उठती है, क्योंकि इसके ऑफिसर मिसाल बनकर नेतृत्व करते हैं, और क्योंकि इसने कभी यह मांग नहीं की कि बैरक के गेट पर आस्था को छोड़ दिया जाए।

इस पूरे मामले में सबसे परेशान करने वाली बात कोर्ट का फैसला नहीं है, बल्कि यह है कि मामला कोर्ट तक पहुंचा ही नहीं। यह एक ऐसी समस्या थी जिसे सीनियर लीडरशिप एक बातचीत, एक निर्देश या एक सोची-समझी मदद से हल कर सकती थी। इसके बजाय, मामला और बिगड़ गया।

पोजीशन्स जम गईं। और कोर्ट उस चीज़ के लिए लड़ाई का मैदान बन गया जिसे रेजिमेंट की दीवारों के अंदर सुलझाया जाना चाहिए था।

इंडियन आर्मी की महानता हमेशा से ही ट्रेडिशन को मॉडर्निटी के साथ, डिसिप्लिन को एंपैथी के साथ, अथॉरिटी को फेयरनेस के साथ मिलाने की उसकी काबिलियत से आई है।

इस मामले में, वह बैलेंस बिगड़ गया।

कमलेसन केस एक आसान सबक देता है। जब ड्यूटी और ज़मीर का मेल होता है, तो असली टेस्ट एक को दूसरे से चुनना नहीं होता, बल्कि दोनों के साथ रहने का रास्ता खोजना होता है। कोर्ट अपने दायरे में रहा।

लेकिन इंडियन आर्मी, जिसने अक्सर बड़ा दिल और फुर्ती दिखाई है, वह यहां भी ऐसा ही कर सकती थी। थोड़ी सी मदद से भरोसा बढ़ता, डिसिप्लिन बना रहता, और यह मैसेज जाता कि भारत की यूनिफ़ॉर्म में हर धर्म का हर सैनिक बराबर है।

जस्टिस रेड्डी ने कहा कि "हमारा संविधान सहनशीलता का पालन करता है"। हम इस व्यवहार का सम्मान एक जैसापन थोपकर नहीं, बल्कि यह समझकर करते हैं कि कब एक जैसापन थोपने की ज़रूरत नहीं है।

एक आधुनिक और भविष्य के लिए तैयार लेबर इकोसिस्टम को सक्षम बनाना

Harsha Vardhan अग्रवाल

राष्ट्रपति हैं, भारतीय संघ के कक्ष वाणिज्य और उद्योग (फिक्की)

एन 21 नवंबर, 2025 को भारत के विकसित भारत के सफ़र में यह एक मील का पत्थर है — वह दिन जब भारत सरकार ने चार लेबर कोड लागू किए, जिनका बहुत इंतज़ार था। भारत ने चार मॉडर्न लेबर कोड (मज़दूरी पर कोड, 2019, इंडस्ट्रियल रिलेशन कोड, 2020, सोशल सिक्योरिटी पर कोड, 2020 और ऑक्यूपेशनल सेफ्टी, हेल्थ और वर्किंग कंडीशंस (OSH) कोड, 2020) को लागू करके लेबर अधिकारों में एक बड़ी छलांग लगाई है। ये सुधार एक सही, मॉडर्न और भविष्य के लिए तैयार लेबर इकोसिस्टम बनाते हैं — जो वर्कर्स को मज़बूत बनाता है, एंटरप्राइज़ कॉम्पिटिटिवनेस को बढ़ाता है और विकसित भारत और आत्मनिर्भर भारत की ओर भारत के रास्ते को मज़बूत करता है।

भारत का लेबर फ्रेमवर्क कई दशकों में धीरे-धीरे बदला है, जिससे अलग-अलग समय और आर्थिक हालात में काम करने वाले कई कानून बने हैं। हालांकि इन कानूनों ने नौकरी के रिश्तों को बनाने में अहम भूमिका निभाई है, लेकिन भारत के वर्कफोर्स के बढ़ते आकार और अलग-अलग तरह के लोगों ने उन्हें आसान बनाने और एक करने की ज़रूरत को सामने लाया है। दूसरे नेशनल कमीशन ऑन लेबर ने मौजूदा कानूनों को बड़े फंक्शनल कोड में बांटने की सिफारिश की। 2015 और 2019 के बीच इंडस्ट्री, एम्प्लॉयर, ट्रेड यूनियन और राज्य सरकारों के साथ काफी बातचीत के बाद ये चार बड़े लेबर कोड बनाए गए।

आज भारत में दुनिया की सबसे बड़ी और सबसे युवा वर्कफोर्स है, जिसमें 643 मिलियन से ज़्यादा वर्कर हैं, और आने वाले सालों में, जैसा कि वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम में कहा गया है, दुनिया भर में आने वाले नए वर्कफोर्स में इसका लगभग दो-तिहाई हिस्सा होने की उम्मीद है। हाल के लेबर मार्केट ट्रेंड्स एक पॉजिटिव मोमेंटम की ओर इशारा करते हैं: 2017-18 और 2023-24 के बीच, भारत ने 16.83 करोड़ नौकरियां बनाईं, बेरोज़गारी दर 6% से घटकर 3.2% हो गई, और फॉर्मल रोज़गार में काफी बढ़ोतरी हुई।

यह देखते हुए कि भारत के वर्कफ़ोर्स का एक बड़ा हिस्सा अभी भी इनफ़ॉर्मल सेक्टर में है, अनऑर्गनाइज़्ड सेक्टर की सुरक्षा बढ़ाने और प्रोडक्टिविटी को बेहतर बनाने में मदद के लिए एक आसान और सही लेबर फ्रेमवर्क की ज़रूरत खास तौर पर ज़रूरी रही है। कोड के तहत कवरेज

चार लेबर कोड से एक मॉडर्न लेबर रेगुलेटरी सिस्टम बनेगा जो भारतीय लेबर इंडस्ट्री की बढ़ती तेज़ी को सपोर्ट करेगा।

अर्थव्यवस्था

सोशल सिक्योरिटी को अनऑर्गनाइज्ड सेक्टर तक भी बढ़ाया गया है। ये डेवलपमेंट इकॉनमी की बढ़ती तेज़ी को दिखाते हैं और एक मॉडर्न लेबर रेगुलेटरी सिस्टम की ज़रूरत पर ज़ोर देते हैं जो इस रास्ते को सपोर्ट करे।

मज़दूरों के लिए, लेबर कोड ज़्यादा मज़बूत और एक जैसे सुरक्षा देते हैं।

यूनिवर्सल मिनिमम वेज, एक नेशनल लेवल वेज, ज़रूरी अपॉइंटमेंट लेटर, समय पर सैलरी का पेमेंट, और काम के घंटों पर साफ़ नियम — जिसमें 48 घंटे का वर्क वीक भी शामिल है — फेयरनेस और सिक्योरिटी को मज़बूत करते हैं। OSH कोड का सेफ्टी कमेटियों, फ्री प्रिवेंटिव हेल्थ चेक-अप और बेहतर वर्कप्लेस स्टैंडर्ड पर ज़ोर, वेल-बीइंग और प्रोडक्टिविटी पर फोकस को मज़बूत करता है।

सोशल सिक्योरिटी कोड, 2020 में बिना किसी भौगोलिक रोक के सभी के लिए एम्प्लॉई स्टेट इंश्योरेंस कॉर्पोरेशन (ESIC) कवरेज, जल्दी समाधान के लिए एम्प्लॉई प्रोविडेंट फंड (EPF) के आसान तरीके, और आसान सेस पेमेंट के ज़रिए कंस्ट्रक्शन सेक्टर को मदद देने का प्रावधान है। यह अलग-अलग वर्कर कैटेगरी के लिए एक नेशनल सोशल सिक्योरिटी फंड भी बनाता है।

इन कोड के तहत एक और बड़ा सुधार यह है कम्प्लायंस की ज़रूरतों का आसान होना। सिंगल रजिस्ट्रेशन, सिंगल लाइसेंस और सिंगल रिटर्न में बदलाव से एडमिनिस्ट्रेटिव बोझ काफी कम हो जाता है, खासकर माइक्रो, स्मॉल और मीडियम एंटरप्राइज़ (MSME) के लिए। वेतन की एक जैसी परिभाषा कई कानूनों में स्पष्टता लाती है, जिससे झगड़े कम होते हैं और वेतन से जुड़े कैलकुलेशन में अंदाज़ा लगाना बेहतर होता है। छोटे मामलों को अपराध की श्रेणी से हटाना और एल्गोरिदम-बेस्ड इंस्पेक्शन जैसे डिजिटल प्रोसेस शुरू करने से ट्रांसपेरेंसी और भरोसे पर आधारित कम्प्लायंस को बढ़ावा मिलता है।

काम के भविष्य की तैयारी भारत का वर्कफ़ोर्स अलग-अलग तरह का हो रहा है, जिसमें गिग और प्लेटफ़ॉर्म-बेस्ड रोज़गार, लचीले काम करने के मॉडल और डिजिटल-इनेबल्ड आजीविका तेज़ी से बढ़ रही है। इस संदर्भ में, सोशल सिक्योरिटी कोड में गिग और प्लेटफ़ॉर्म वर्कर्स को शामिल करना सही समय पर है। इस वर्कफ़ोर्स का साइज़ 2024-25 में एक करोड़ से बढ़कर 2029-30 तक 2.35 करोड़ होने की उम्मीद है, इसलिए सोशल प्रोटेक्शन के लिए एक फ्रेमवर्क बनाना एक आगे की सोच वाला कदम है।

काम के बदलते नेचर के साथ तालमेल बिठाता है।

कोड्स फॉर्मलाइज़ेशन पर भी ज़ोर देते हैं, जो लंबे समय तक चलने वाली आर्थिक तरक्की के लिए बहुत ज़रूरी है। साफ़ नियम, स्टैंडर्ड परिभाषाएँ और ट्रांसपेरेंट प्रोसेस ज़्यादा कंपनियों को फॉर्मल इकॉनमी में आने के लिए बढ़ावा देते हैं और वर्कफ़ोर्स के बड़े हिस्से को सुरक्षा देने में मदद करते हैं।

वर्कफोर्स में महिलाओं के लिए बढ़ावा वर्कफोर्स में महिलाओं की भागीदारी में सुधार हुआ है, फिर भी यह अपनी क्षमता से कम है।

इंटरनेशनल लेबर ऑर्गनाइज़ेशन की इंडिया एम्प्लॉयमेंट रिपोर्ट 2024 के अनुसार, भारत में महिला लेबर फ़ोर्स पार्टिसिपेशन रेट 32.8% है। लेबर कोड समान सैलरी को मज़बूत करके, मैटरनिटी बेनिफिट्स को बढ़ाकर और अनऑर्गनाइज़्ड, गिग और प्लेटफ़ॉर्म वर्कर्स को सोशल प्रोटेक्शन देकर एक अच्छा माहौल बनाने में मदद करते हैं। OSH कोड महिलाओं को उनकी सहमति से रात में काम करने की भी इजाज़त देता है और इसमें सुरक्षा के पर्याप्त इंतज़ाम हैं, जिससे कई सेक्टर्स में मौके बढ़ते हैं। ये सभी नियम मिलकर महिलाओं के लिए रोज़गार की ज़्यादा पहुँच और कंटिन्यूटी में मदद करते हैं क्योंकि इकॉनमी विकसित होती है। एक मॉडर्न लेबर फ्रेमवर्क को वर्कर प्रोटेक्शन की ज़रूरत और कॉम्पिटिटिव बिज़नेस माहौल की ज़रूरतों के बीच बैलेंस बनाना चाहिए। लेबर कोड का मकसद साफ़ इंडस्ट्रियल रिलेशन नॉर्म्स और तेज़ी से विवाद सुलझाने की पेशकश करके यह बैलेंस बनाना है, साथ ही यह पक्का करना है कि वर्कर्स को ज़रूरी अधिकार, सुरक्षा और सोशल सिक्योरिटी मिले। यह बैलेंस्ड अप्रोच इन्वेस्टमेंट को सपोर्ट करता है, स्टेबिलिटी को बढ़ावा देता है और ग्लोबल वैल्यू चेन्स में भारत की स्थिति को मज़बूत करने में मदद करता है।

अगले कुछ दिन बहुत ज़रूरी होंगे क्योंकि इन कोड्स को लागू करने का प्रोसेस आगे बढ़ेगा। राज्यों के लिए यह ज़रूरी होगा कि वे कोड्स में बताई गई कम से कम लिमिट और गाइडिंग प्रिंसिपल्स के साथ चलें ताकि पूरे देश में एक जैसा और साफ़ हो सके। गुड्स एंड सर्विसेज़ टैक्स (GST) सुधारों के बाद, यह सबसे ज़रूरी स्ट्रक्चरल सुधारों में से एक है। यह सुधार की रफ़्तार जारी रहनी चाहिए, जिससे ज़्यादा इन्वेस्टमेंट को सपोर्ट मिले, और इस तरह देश में ज़्यादा रोज़गार पैदा करने में मदद मिले।

द टर्सटूदएडिटर

असम बिल ऐसे समय में जब असम में बहुत ज़्यादा बेरोज़गारी, लगातार कम इन्वेस्टमेंट और भ्रष्टाचार से जूझ रहा एडमिनिस्ट्रेटिव कल्चर है, सरकार का एक सख़्त एंटी-पॉलीगैमी कानून को प्राथमिकता देने का फ़ैसला राज्य की असली ज़रूरतों से बिल्कुल अलग है (फ्रंट पेज, 26 नवंबर)। पॉलीगैमी, सभी भरोसेमंद बातों के हिसाब से, यह आंकड़ों के हिसाब से मामूली प्रैक्टिस है। इसे कानून का सेंटर बनाना, सिंबॉलिक लड़ाई को गवर्नेंस समझने की गलती करना है।

इसकी अहमियत इसके पॉलिटिकल ग्रामर में है। यह कदम राज्य के सबसे मुखर लोगों को भरोसा दिलाने के लिए किए गए इशारों के जाने-पहचाने पैटर्न को आगे बढ़ाता है।

दक्षिणपंथी निर्वाचन क्षेत्र: बड़े पैमाने पर बेदखली की मुहिम से लेकर मदरसों के बंद होने और डेमोग्राफिक 'असंतुलन' के बारे में बार-बार उठने वाली चिंताओं तक। इन दखल का एक ही लॉजिक है — वे विकास की महत्वाकांक्षा पर सांस्कृतिक सतर्कता को आगे रखते हैं और शासन को एक तरह की विचारधारा की कस्टोडियनशिप के तौर पर बदलते हैं।

नुकसान एडमिनिस्ट्रेटिव फोकस का है। पहचान से जुड़े कानून पर कम पॉलिसी ध्यान देकर, सरकार उसी डेवलपमेंट में रुकावट को और गहरा करने का रिस्क उठा रही है जिसे ठीक करने का दावा वह कर रही है। असम को एक और दौर के मुकाबले ट्रांसपेरेंट इंस्टीट्यूशन, जॉब-क्रिएटिंग इन्वेस्टमेंट और लगातार प्लानिंग की कहीं ज़्यादा ज़रूरत है।

सुधार के नाम पर सिंबॉलिक दखल।

एम. जमील अहमद, मैसूर

अधिकारी को निकालना। सेना में धार्मिक काम/पद्धति के सिस्टम पर फिर से सोचने की ज़रूरत है। मिलिट्री यह कहकर बच नहीं सकती कि सभी कर्मचारियों को सभी नियमों का पालन करना होगा।

धर्म/प्रथाएँ। धर्म/आध्यात्मिकता किसी की अपनी पसंद/अधिकार होना चाहिए और हमारे देश में कोई भी किसी को इसके लिए मजबूर नहीं कर सकता। रक्षा मंत्रालय को इस प्रैक्टिस में बदलाव शुरू करने की ज़रूरत है।

राजकुमार गणनाथिलागम, कोयंबटूर

letters@thehindu.co.in पर ईमेल किए गए पत्रों में डाक का पता होना चाहिए।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

राष्ट्रीय
सहारा
पटना। शुक्रवार • 28 नवम्बर • 2025
www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

कोई मनुष्य दूसरे मनुष्य को दास नहीं बनाता, केवल धन का लालच ही मनुष्य को दास बनाता है

-पंचतंत्र

धर्मेंद्र : एक अद्भुत यात्रा का अंत

के.के. भारती 'विद्यारण्य'

जब यह खबर आई कि धर्मेंद्र अब हमारे बीच नहीं रहे, तो यह केवल एक अभिनेता का जाना नहीं था, यह एक युग का विराम था। वह युग, जिसमें हिंदी सिनेमा सिर्फ परदे पर नहीं बल्कि लोगों के दिलों में बसता था; वह दौर, जब अभिनेताओं और दर्शकों के बीच कोई दूरी नहीं होती थी। धर्मेंद्र उस सुनहरे समय का सबसे चमकीला चेहरा थे। उनका निधन हमारे सामूहिक भावनात्मक इतिहास की एक मजबूत परत को अचानक उधेड़ देता है। धर्मेंद्र का नाम लेते ही दिमाग में किसी सुपरस्टार की चकाचौंध नहीं आती; बल्कि एक ऐसा इंसान सामने खड़ा दिखता है, जिसकी मुस्कान में अपनापन है और जिसकी पर्सनैलिटी में एक सहज विनम्रता समाई है। वे सितारे थे, लेकिन जमीन से जुड़े; वे नायक थे, पर अपने भीतर किसी किसान का बेटा छिपाए हुए; वे सुपरस्टार थे, पर कभी अभिनय को प्रदर्शन नहीं बनने दिया।यह गुण उन्हें अपने दौर के तमाम सितारों से अलग करता है, और यही कारण है कि धर्मेंद्र का जाना देश भर के लोगों के लिए किसी व्यक्तिगत क्षति जैसा महसूस हो रहा है। धर्मेंद्र की कहानी सिर्फ सितारों की कहानी नहीं है वह उस साधारण भारतीय की कहानी है जो अपनी ताकत, आस्था और कड़ी मेहनत के बल पर असंभव को संभव कर दिखाता है। पंजाब के एक साधारण किसान परिवार में जन्मे धर्मेंद्र के लिए फिल्मों तक पहुँचना आसान नहीं था। बचपन से ही उन्हें फिल्में देखने का जुनून था, लेकिन यह कल्पना भी शायद ही किसी ने की होगी कि वही लड़का एक दिन हिंदी सिनेमा का ही-मैन कहलाएगा। उनके संघर्ष के किस्से अब लोककथाओं जैसे लगते है।

फिल्मफेयर टैलेंट कॉन्टेस्ट से लेकर स्टूडियो के बाहर घंटों इंतजार तक, कई बार असफलताओं से जूझना, घर-परिवार की जिम्मेदारियों के बीच सपनों को जिंदा रखना यह सब धर्मेंद्र के जीवन में घटित हुआ। लेकिन हर कठिनाई के बावजूद वह कभी टूटे नहीं। इसी दृढ़ता ने उन्हें वह स्थान दिलाया, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा बन गया। 1960 के दशक में जब धर्मेंद्र पहली बार परदे पर आए, तो दर्शकों ने उनकी चमक पहचान ली। उनकी आँखों में एक सच्चाई थी, चेहरे में एक आकर्षण था और संवादों में एक सहजता थी, जिसने उन्हें तुरंत दर्शकों से जोड़ दिया। कई अभिनेताओं के लिए स्टारडम एक कृत्रिम निर्मित छवि होती है, लेकिन धर्मेंद्र के लिए यह छवि स्वाभाविक थी। उनमें हीरो बनने का अहंकार नहीं था; उल्टा ऐसा लगता था कि सिनेमा उन्हें चुन रहा है, वे नहीं। उनकी भूमिकाएँ चाहे रोमांटिक हों, भावनात्मक हों या एक्शन से भरपूर, उनकी सादगी और शालीनता हमेशा झलकती थी। यदि किसी दशक ने धर्मेंद्र को अमर बना दिया, तो वह 1970 और 80 का दशक था। इस दौर में उन्होंने इतनी विविध भूमिकाएँ निभाई कि हर फिल्म में एक नया धर्मेंद्र देखने को मिला। धर्मेंद्र रोमांस के ऐसे नायक थे जिनकी आँखें ही संवाद बोलने लगती थीं। उनका रोमांस लाउड नहीं होता था, बल्कि बेहद नर्म और दिल को छू लेने वाला होता था। उनकी कॉमिक टाइमिंग, खासकर चुपके चुपके जैसी फिल्मों में, दर्शकों को यह एहसास दिलाती थी कि विनोद बिना शोर-शराबे के भी पैदा किया जा सकता है।

धर्मेंद्र को ही-मैन यूं ही नहीं कहा गया। उनकी बॉडी, स्क्रीन प्रजेंस और एक्शन की शैली ने आने वाले दिग्गजों के लिए भी पैमाना तय किया। शोले का वीरू सिर्फ एक फिल्मी किरदार नहीं, बल्कि भारतीय लोकप्रिय संस्कृति का हिस्सा बन चुका है। आज भी वीरू की आवाज़, उसकी शरारतें, उसकी दोस्ती और बसंती को पुकारने का अंदाज़ दर्शकों की यादों में ताज़ा है। धर्मेंद्र ने वीरू को सिर्फ निभाया नहींउसे जी लिया। धर्मेंद्र की सबसे बड़ी खूबी थी।उनकी इंसानियत। फिल्म इंडस्ट्री की चमक-दमक के बीच भी उन्होंने अपना दिल कभी नहीं बदला। जूनियर कलाकारों से दोस्त जैसा व्यवहार, तकनीकी कर्मचारियों के साथ सम्मानजनक रिश्ता, किसी की मदद के लिए हमेशा तैयार रहना उनकी खूबी थी । कई युवा अभिनेताओं के लिए वे सिर्फ प्रेरणा नहीं, बल्कि गुरु थे। और सबसे खास बात उनकी विनम्रता उम्र के साथ और बढ़ती गई। धर्मेंद्र की व्यक्तिगत जिंदगी भी उतनी ही दिलचस्प रही जितनी उनकी फिल्में। बड़े परिवारों के रिश्तों में जो भावनाएँ होती है, धर्मेंद्र ने उन्हें हमेशा महत्व दिया। बच्चों के प्रति उनका प्रेम, परिवार की जिम्मेदारियाँ उठाने की क्षमता, और जीवन के हर उतार-चढ़ाव में सकारात्मक सोच इन सबने उन्हें एक मजबूत व्यक्तित्व बनाया। उन्होंने अपने बेटों और बेटियों को केवल 'स्टार किड नहीं बल्कि मेहनत से आगे बढ़ने की सीख दी। परिवार के प्रति उनकी यह प्रतिबद्धता उन्हें एक आदर्श पिता और पति के रूप में भी स्थापित करती है। धर्मेंद्र ने राजनीति में भी कदम रखा। हालांकि यह उनका प्रमुख क्षेत्र नहीं था, पर उन्होंने जनता के मुद्दों को समझने और उठाने की कोशिश की। इसका उद्देश्य कभी शक्ति नहीं बल्कि सेवा भावना रहा। सामाजिक स्तर पर भी वे कई पहल में शामिल रहे। किसानों, वंचित वर्गों और ग्रामीण विकास से जुड़े मुद्दों पर उन्होंने अपनी आवाज उठाई। यह उनका वही गाँव का लड़का वाला रूप था, जिसे उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। अधिकतर कलाकार उम्र ढलने पर छिप जाते है।

धर्मेंद्र ने खुद को कभी बूढ़ा नहीं माना। चाहे वह नई फिल्मों में छोटी भूमिकाएँ हों, परिवार के साथ समय बिताना हो, या सोशल मीडिया पर प्रशंसकों से संवाद धर्मेंद्र हमेशा जीवंत बने रहे। उनका चेहरा उम्र के साथ शांत होता गया, लेकिन उनके व्यक्तित्व की रोशनी और गहराती चली गई। धर्मेंद्र का जाना हमें उस दौर की याद दिलाता है जब अभिनेता केवल परदे के नायक नहीं होते थे, बल्कि दर्शकों के जीवन का हिस्सा बन जाते थे। उनके जाने से एक ऐसा भावनात्मक शून्य बन गया है, जिसे कोई भर नहीं सकता। आज के तकनीकी, तेज भागते, ग्लैमर-भरे सिनेमा में धर्मेंद्र जैसे कलाकार दुर्लभ है जो हँसी भी देते है, आँसू भी; जो नायक भी है और इंसान भी; जो अभिनय भी करते है और दिल भी जीत लेते है। धर्मेंद्र कितने बड़े कलाकार थे, इसका अंदाजा उनके द्वारा बनाए गए कीर्तिमानों से नहीं, बल्कि उन हजारों कलाकारों, निर्देशकों और दर्शकों से लगाया जा सकता है जिनकी प्रेरणा वे है। उनकी विरासत केवल फिल्मों में नहीं, बल्कि उनके विनम्र स्वभाव में, मेहनत की मिसाल में, परिवार के प्रति समर्पण में, जीवन की सरलता में और सबसे बढ़कर, उनके इंसान होने की खूबसूरती में दिखाई देती रहेगी। धर्मेंद्र का जीवन हमें यह सिखाता है कि सितारा बनने से पहले एक अच्छा इंसान बनना जरूरी है, क्योंकि चमकती रोशनी का अर्थ तभी है जब उसमें संवेदनाएँ भी हों। धर्मेंद्र के जाने से भारतीय सिनेमा का एक ऐसा पन्ना बंद हो गया है, जिसे फिर कभी नहीं लिखा जा सकेगा। लेकिन उनकी मुस्कान, उनकी आवाज़, उनकी आँखों की चमक और उनका निर्भीक, सादगी भरा व्यक्तित्व हमें हमेशा प्रेरित करता रहेगा। आज हम उन्हें विदाई नहीं देते हम उन्हें याद में बसाते है। क्योंकि असली कलाकार कभी मरते नहीं, वे यादों की रोशनी बनकर जीते रहते है। धर्मेंद्र जी को विनम्र श्रद्धांजलि। आपकी यात्रा समाप्त हुई, पर आपकी कहानियाँ सदैव जीवित रहेंगी।

बाल विवाह मुक्त की ओर भारत

राष्ट्रीय संकल्प

अन्नपूर्णा देवी

एक ऐसे देश में जहाँ महिलाएँ और बच्चे एक अरब से ज़्यादा जीवनों का आधार है, उनका सशक्तिकरण महज़ एक नीतिगत विकल्प नहीं है, बल्कि यह भारत की नियति का मार्ग है। माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के दूरदर्शी शासन में, भारत एक ऐतिहासिक बदलाव के दौर से गुज़र रहा है, जो वैश्विक महत्वाकांक्षाओं को मानव-केंद्रित प्रगति के साथ जोड़ रहा है। नए भारत की कहानी केवल आर्थिक उपलब्धियों और बढ़ते वैश्विक कद में ही नहीं, बल्कि उन कक्षाओं में भी आकार ले रही है, जहाँ युवा मन विकसित होते है, उन आंगनवाड़ी केंद्रों में जहाँ हमारे बच्चों का पालन-पोषण होता है, और उन घरों में जहाँ आकांक्षाएँ पनपती है।

&# 39;बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ:#39; के प्रति प्रधानमंत्री की अटूट प्रतिबद्धता, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के लिए एक मार्गदर्शक शक्ति बन गई है, जो विकसित भारत@2047 के लिए हमारे सामूहिक मिशन को भी आगे बढ़ा रही है। इसी सफर में एक अहम पड़ाव पिछले वर्ष 27 नवंबर को नई दिल्ली के विज्ञान भवन में बाल विवाह मुक्त भारत अभियान शुरू हुआ है। अपनी साहसिक और अटल दृष्टि के साथ, हमने वर्ष 2030 तक बाल विवाह को खत्म करने की अपनी राष्ट्रीय प्रतिबद्धता एक बार फिर दोहराई है, ताकि हर बालिका और बालक सुरक्षित रूप से बड़े हो सकें, अपनी शिक्षा जारी रख सकें और गर्व तथा आत्मविश्वास के साथ अपने भविष्य को आकार दे सकें। शुरू से ही, हमने :#39;संपूर्ण सरकार और संपूर्ण समाज:#39; के नज़रिए को अपनाया है, लिहाज़ा हम मानते है कि इस चुनौती का हल महज़ नीतियों से नहीं किया जा सकता। इसके लिए सामूहिक एकता की ज़रूरत है, जिसमें परिवार, समुदाय, अग्रिम पंक्ति के कार्यकर्ता, संस्थान और सरकार कंधे से कंधा मिलाकर, सदियों पुरानी प्रथा को तोड़ने और हर बच्चे की आकांक्षाओं की रक्षा करने के लिए एक साथ खड़े हों। हमारे साझा संकल्प के एक शक्तिशाली प्रतिबिंब के रूप में, गाँवों और कस्बों के करोड़ों लोग बाल विवाह को समाप्त करने का संकल्प लेने के लिए आगे भी आए है। बाल विवाह मुक्त भारत के लिए :#39;पूरी सरकार:#39; एकजुट बाल विवाह हमारे देश में पीढ़ियों से चली आ रही सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। यह अक्सर उन समुदायों में दिखती है, जहाँ शिक्षा, संसाधनों और जागरूकता की सीमित पहुँच है। अभाव और असमान अवसरों के कारण पैदा हुई ये कमियाँ, इस प्रथा को जारी रखने में मदद करती है, जिससे अनगिनत बच्चे अपने उज्ज्वल भविष्य को साकार करने से वंचित रह जाते है। वर्तमान में बेहतरी के लिए प्रयासः मोदी सरकार के तहत, हम उन जड़ों को खत्म कर रहे है, जिन्होंने कभी इस प्रथा को पोषित किया था। स्पष्ट नीतिगत दिशा, विचार विमर्श कर तैयार की गई योजनाओं और शासन में समुदायों के नए विश्वास के साथ, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय उन परिस्थितियों को खत्म करने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है, जिनके कारण बाल विवाह की प्रथा अब तक जारी रही।

आज हम जो प्रगति देख रहे है, वह सुनियोजित ढंग से तैयार की गई योजनाओं की वजह से है, जिनके तहत महिलाएं और बच्चे राष्ट्रीय विकास के केंद्र में है। हमारी नीतियां और पहल, संवेदनशील कारणों को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई है। हम यह सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध है कि हर अधिकार, देश के सबसे दूरस्थ गाँव और बस्तियों में सबसे कमजोर बच्चे के जीवन पर सकारात्मक असर डालते हुए अंतिम छोर तक पहुँचे। सरकार की हर योजना महिलाओं और बच्चों को जोखिम के हर चरण में सहारा देने के लिए तैयार की गई है, ताकि अजन्मे बच्चे से लेकर किशोरी तक, उनके जीवन के हर चरण की सुरक्षा, प्राथमिकता और सशक्तिकरण हो।

समावेशन के उत्प्रेरक के रूप में तकनीक की मदद से, मंत्रालय का प्रमुख डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म, पोषण ट्रैकर, 14 लाख आंगनवाड़ी केंद्रों को स्तनपान कराने वाली माताओं, छह साल से कम उम्र के बच्चों और किशोरियों से सहजता से जोड़ता है। इसने देश भर में 10.14 करोड़ से अधिक लाभार्थियों के लिए एक मज़बूत सुरक्षा तंत्र तैयार कर दिया है। हमारी नीतियाँ न केवल इरादे, बल्कि ज़मीनी स्तर पर कार्रवाई को भी दर्शाती है। राष्ट्रीय साधन-सह-योग्यता छात्रवृत्ति कार्यक्रम, जिसके लिए केवल 2025-26 के लिए 1,827 करोड़ रुपए का आवंटन किया गया है। इसी प्रकार, प्रधानमंत्री-दक्ष योजना, हाशिए पर पड़े समुदायों, खासकर अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के युवाओं को सशक्त बनाती है, जो बाल विवाह के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील है। उन्हें कौशल और अवसरों का लाभ देकर, हम समृद्ध और स्वतंत्र जीवन के मार्ग प्रशस्त कर रहे है और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक नई मिसाल कायम कर रहे है।

प्रभाव: बाल विवाह मुक्त भारत बनने के और नज़दीक कुछ साल पहले तक, बाल विवाह को समाप्त करने का विचार दूर की कौड़ी, यहाँ तक कि असंभव नज़र आता था। लेकिन भारत ने इसके विपरीत साबित कर दिया है। स्पष्ट नीतियों, निरंतर कार्रवाई, केंद्रित जमीनी प्रयासों और मापयोग्य प्रगति के ज़रिए, हमने उस धारणा को चुनौती दी है और दिखाया है कि बदलाव न केवल मुमकिन है, बल्कि पहले से ही उसके प्रयास जारी है। यह अभूतपूर्व बदलाव हज़ारों छोटी-बड़ी, सशक्त कोशिशों का नतीजा है। हमारे बाल विवाह निषेध अधिकारी (सीएमपीओ) इस मिशन की रीढ़ बनकर उभरे है। पिछले एक साल में ही, हमने देश भर में 37,000 से ज़्यादा सीएमपीओ नियुक्त करके अपनी अग्रिम पंक्ति को मज़बूत किया है। अब तक, हमने 6,30,000 से ज़्यादा, स्कूल न जाने वाली लड़कियों की पहचान की है और उन्हें कक्षाओं में फिर से दाखिला दिलाया है। चुप्पी से लेकर शिकायत तक, सामाजिक कलंक से लेकर समर्थन तक भारत ने चुना बदलाव का

रास्ता: आज, हम इस समस्या का हल अधिक सटीकता, पारदर्शिता और प्रभाव के साथ निकालने के लिए नवीनतम तकनीकी प्रगति की मदद ले रहे है। सार्वजनिक रूप से सुलभ, केंद्रीकृत मंच, बाल विवाह मुक्त भारत पोर्टल, इस प्रगति का प्रतीक है, जो देश भर के बाल विवाह निषेध अधिकारियों की जानकारी एक साथ लाता है, मामलों की रिपोर्टिंग के लिए एक प्रभावी तंत्र प्रदान करता है, और हितधारकों और नागरिकों के बीच जागरूकता को मज़बूत करता है। भारत सरकार का प्रत्येक अंग और समाज का प्रत्येक वर्ग इस साझा उद्देश्य और दृढ़ संकल्प के साथ मिलकर आगे बढ़ रहा है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के दूरदर्शी नेतृत्व में, हम आज न केवल अपने बच्चों की सुरक्षा कर रहे है, बल्कि विकसित भारत की एक मज़बूत, आत्मविश्वासी और सशक्त नींव भी रख रहे है। जैसे-जैसे भारत बाल विवाह के खिलाफ अपनी सामूहिक लड़ाई में एक निर्णायक मोड़ पर पहुँच रहा है, हम दुनिया के सामने एक नया मॉडल पेश कर रहे है, कि कैसे शासन और समुदाय मिलकर हर बच्चे की सुरक्षा के लिए काम कर सकते है और बाल विवाह के वैश्विक संकट को तत्काल और निश्चित रूप से खत्म कर सकते है। आखिरकार, ये बच्चे ही उस विकसित भारत के पथप्रदर्शक और सच्चे :#39;सारथी:#39; है, जिसका निर्माण हम सभी करना चाहते है।

(लेखिका भारत सरकार में केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री हैं)।

पिछले वर्ष 27 नवंबर को नई दिल्ली के विज्ञान भवन में बाल विवाह मुक्त भारत अभियान शुरू हुआ है। अपनी साहसिक और अटल दृष्टि के साथ, हमने वर्ष 2030 तक बाल विवाह को खत्म करने की अपनी राष्ट्रीय प्रतिबद्धता एक बार फिर दोहराई है, ताकि हर बालिका और बालक सुरक्षित रूप से बड़े हो सकें, अपनी शिक्षा जारी रख सकें और गर्व तथा आत्मविश्वास के साथ अपने भविष्य को आकार दे सकें।

- भारत की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद हजारों सालों से जड़ी-बूटियों और पेड़-पौधों की ताकत को पहचानती आई है। कई पौधे ऐसे हैं जिन्हें हम रोज अपने घरों या बगीचों में देखते हैं, लेकिन उनके अंदर छिपे औषधीय गुणों के बारे में हमें बहुत कम जानकारी होती है। ऐसा ही एक पौधा है 'हरसिंगार', जिसे अंग्रेजी में 'नाइट जैस्मीन' कहा जाता है, और इसका वैज्ञानिक नाम निक्टेन्थिस आर्बर-ट्रिस्टिस है
- हरसिंगार में छोटे-छोटे सफेद फूल होते हैं, जिनके बीच में हल्का नारंगी रंग होता है। ये फूल बरसात के मौसम में खूब दिखाई देते हैं। हरसिंगार कई गंभीर बीमारियों के इलाज में बेहद उपयोगी माना जाता है। वैज्ञानिक शोध में भी पुष्टि हो चुकी है कि हरसिंगार साइटिका जैसी बीमारियों के लिए भी असरदार हो सकता है

(मीडिया इनपुट्स)

संस्कृत के अक्षर बोल सकना ही पहुंचे हुए चमत्कारी साधु होने का प्रमाण है क्या? यह तो अक्षरशः बड़ा अटपटा पैमाना ठ्हरता है, काहे कि देवनागरी लिपि ने भी अपने सारे अक्षर संस्कृत से ही लिये हैं।

मृणाल पांडे, पत्रकार
@MrinalPande1

बिखर गया लालू यादव का कुनबा

संकट

शिव शंकर गोस्वामी

बिहार विधानसभा के चुनाव के बाद लालू यादव का परिवार बिखर चुका है। बेटी रोहिणी आचार्य की जिस तरह से घर के भीतर चप्पलों से पिटाई की गई वह माफ करने लायक कतई नहीं है। यह वही बेटी है जिसने अपने घर वालों की चोरी से लालू यादव के लिए अपनी किडनी दान की थी । लालू का छोटा बेटा तेजस्वी यादव कह रहा है की रोहिणी ने अपने पिता को जो किडनी दी वह गंदी थी और उसके एवज में रोहिणी ने एक करोड़ रुपए लिए थे जबकि इस बात को रोहिणी ने स्वयं सिरे से खारिज कर दिया है। लालू परिवार के इस झगड़े की चर्चा चारों ओर है और लोग तरह-तरह के , फब्तियां कस रहे है लेकिन लालू को अपने छोटे बेटे तेजस्वी यादव का मोह ऐसा सता रहा है मानो अंधे धृतराष्ट्र हो गए है। और रोहिणी को दो ऐसे बाहरी व्यक्तियों के सामने पिटा गया जो किसी कीमत पर इस परिवार के हितैषी नहीं है आश्चर्य के बात यह है कि जिस समय रोहिणी की पिटाई हो रही थी उसे समय लाल और रावड़ी देख देवी चुपचाप इस घटना को देखकर उसे पर आंसू बहा रहे थे। लेकिन किसी की हिम्मत नहीं पड़ी कि वह तेजस्वी यादव और उनके दो गुरगो पवन यादव तथा खान को रोक पाए।

रोहिणी इस घटना से इतनी आहत हुई कि वह सीधे एयरपोर्ट गई और वहां से फ्लाइट लेकर दिल्ली पहुंची जहां से सिंगापुर चली गई और जाते-जाते यह कह गई कि उसके मां-बाप उसके लिए मर चुके है अब वह कभी इस घर में लौटकर नहीं आऐगी । बताइए इस तरह की घटना के लिए लालू और उनके परिवार के लोगों को क्या कहा जाए। रोहिणी की कोई गलती भी नहीं थी बस उसने सिर्फ इतना कह दिया कि बिहार में जो हर हुई है उसकी समीक्षा की जानी चाहिए इस पर लालू के छोटे बेट तेजस्वी यादव ने उसको भद्दी- भद्दी गालियां दिया और कहा कि चुनाव को हराने के लिए जिम्मेदार तू ही है दूसरा कोई नहीं अब बताइए चुनाव के दौरान दो-दो हेलीकॉप्टर लेकर तेजस्वी यादव अकेले घूम रहा था ना तो वह अपने किसी कार्यकर्ता को हेलीकॉप्टर उपलब्ध कराया और ना ही रोहिणी या और किसी को ऐसे में रोहिणी यादव हार की जिम्मेदार है यह कैसे कहा जा सकता है।

कहा जाता है कि विनाश काले विपरीत बुद्धि। वही स्थिति इस समय तेजस्वी और उनके के गुट की हो गई है। यह तो तय हो गया इस घटना के बाद अब बिहार में तेजस्वी की वापसी कब होगी कुछ कहा नहीं जा सकता लेकिन लोग बहन के साथ मारपीट की घटना को बड़ी गंभीरता से ले रहे है और कह रहे है बताइए जो व्यक्ति परिवार में अपनी बहन की इज्जत नहीं कर सकता है वह बिहार की जनता की सेवा कैसे करेगा और लोगों को नौकरी कैसे देगा ।

वैसे भी बिहार में जितनी नौकरी का वादा तेजस्वी कर चुके है अगर उतनी दे दी जाए तो खजाना में एक पैसा तनख्वाह देने के लिए नहीं रह जाएगा यह हवा हवाई वादा चनाव में हवा हवाई जैसा हो गया और चुनाव भी हवा हवाई ही हो गया । लेकिन ना तो लालू यादव को होश आ रही है और ना ही राबड़ी देवी एवं तेजस्वी यादव को। लालू यादव तो वैसे भी चारा घोटाले में 32 साल की जेल की सजा काट रहे है और इस समय पैरोल पर आए हुए है उनकी सेहत भी बहुत अच्छी नहीं है लेकिन पता नहीं किस लालच में और किस मुंह में उन्होंने बड़े बेटे तेज प्रताप को किनारे कर दिया और अब रोहिनी को भी ठिकाने लगा दिया आने वाले बहुत दिनों तक बिहार की जनता इस बारे में लालू से सवाल जवाब करती रहेगी दूसरी ओर चुनाव में बंपर जीत हासिल करके यानी 243 में से 202 सिठ प्राप्त करके एनडीए गठबंधन अब सरकार बना चुकी है। सुशासन बाबू अर्थात नीतीश कुमार अब शपथ ले चुके है और आश्चर्यजनक रूप से गृह विभाग उन्होंने अपने पास नहीं रखा है उन्होंने भाजपा के सम्राट चौधरी को गृह विभाग सौप है और विभाग पाते ही सम्राट चौधरी ने घोषणा की है की उत्तर प्रदेश की भांति यहां भी गण्डो माफिया और और कट्टर बदमाशों को हर जिले में चिह्नित किया जाएगा और योगी आदित्यनाथ की भांति ऑपरेशन लंगड़ा और ऑपरेशन खल्लास चलाया जाएगा । चनाव के पहले नीतीश कुमार और भाजपा ने 121- 121 सीटे बाटली थी जिसमें से 79 सीट सुशासन बाबू को और 80 सीट भारतीय जनता पार्टी को मिली है इसके अलावा उनके घटक दल जैसे चिराग पासवान, उपेंद्र कुशवाहा और उनकी अन्य सहयोगी पार्टियों ने भी जिस हिसाब से टिकट मिला था उसे हिसाब से अच्छा प्रदर्शन किया लेकिन सबसे बुरी हाल कांग्रेस पार्टी की रही जिसे सिर्फ चार सीम मिली। अब यह कायदे से कहा जा सकता है कि वोर्ट चोरी का उनका नया जुमला भी काम नहीं आया।

ज्ञातव्य है कि लालू प्रसाद यादव जेपी आंदोलन की उपज है नीतीश कुमार भी उसी की उपज है। लालू को सत्ता मिली तो वह उसे बचा नहीं पाए बल्कि लूट खसोट में अपना ध्यान लगाने लगे और परिवारवाद को बढ़ावा दिया जब भी जेल गए तो अपनी निरीक्षण पत्नी राबड़ी देवी को बिहार के मुख्यमंत्री बना दिया और राबड़ी देवी के बाद अब वह तेजस्वी यादव को सत्ता सौपना चाहते है बिहार की जनता बहुत प्रबुद्ध है वह इन सब चीजों को भली भांति समझती है इसलिए अगर भविष्य में राजनीति करना है तो लालू परिवार को व्यक्तिगत और पारिवारिक हितों से ऊपर उठकर जनता की हितों के लिए काम करना होगा। और उन्हें इस बात का ध्यान रखना होगा की योगी मोदी को गाली देकर बहुत ज्यादा समय तक अपना अस्तित्व नहीं बनाए रख सकते।

परिधि

श्रीराम शर्मा आचार्य

मानवीय विकास का वास्तविक स्वरूप निर्धारित करना हो, तो यह मानकर नहीं चला जा सकता कि मनुष्य शरीर पाने तक ही उसकी अंतिम परिधि है। उसे विकासोन्मुख होने के लिए शरीरगत जीवन-यापन को भी सब कुछ न मानकर अपनी सत्ता चेतना के साथ जोड़नी पड़ेगी, जो इस ब्रह्माण्ड पर अनुशासन करती और अंतराल को सुविकसित, स्वच्छ बना लेने वालों पर अपनी उच्च स्तरीय अनुकंपा बरसाती है। साथ ही मनुष्य को इस प्रकार का चिंतन अपनाने के लिए भी प्रोत्साहित करती है कि उसके अंतराल में अति महत्त्वपूर्ण क्षमताओं का भी भंडार भरा पड़ा है, जिसे थोड़ा विकसित कर लेने पर वह काया की दृष्टि से यथावत रहते हुए भी व्यक्तित्व की दृष्टि से महानतम बन सकता है। इस अध्यात्म विकास के तत्वज्ञान के अनुरूप चेतना को विकसित, परिष्कृत, समर्थ, विलक्षण बनाने का द्वार मनुष्य शरीर मिलने के उपरांत खुलता है। इससे पूर्व तो वह मात्र जीवधारी ही बनकर रहता है। साथ ही प्रकृति का अनुशासन मानने के लिए बाधित रहता है। उसे प्रकृति पर अनुशासन करने, उसे अपने अनुकूल बनाने की विद्या का ज्ञान तक नहीं होता। प्रकृति पर परमात्मा का स्वामित्व है। दूसरा हस्तांतरण उसके युवराज मनुष्य को उसकी परिपता विकसित होते ही उपलब्ध होने लगता है। यह दूसरी बात है कि वह उस अनुदान का कितनी बुद्धिमत्ता के साथ प्रयुक्त करता है। विकास की मानवीय परत में उभरते ही उसे आत्मबोध की एक नई उपलब्धि हस्तगत होती है वह अनुभव करता है कि काय-कलेवर उसका समग्र स्वरूप नहीं वरन एक वाहन उपकरण आच्छादन मात्र है। उसके भीतर रहने वाली चेतना ही मनुष्य को ऊंचा उठाती, नीचे गिराती है। मनःस्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदाता है। मनुष्य अपने भाग्य निर्माता आप है। वरन व्यक्तित्व का स्तर उठाकर जीवन सज्जा को, अनेक उपलब्धियों-विभूतियों से अलंकृत करना भी एक विशिष्ट उद्देश्य है। जब तक यह विचारणा नहीं उठती, तब तक वस्तुतः मनुष्य नर-पशु ही रहता है और इंद्रिय लिप्ताओं तथा मानसिक तृष्णाओं तक ही उसकी गतिविधियां सीमित रहती हैं, न वह जीवन का महत्त्व समझ पाता है और न उसे चेतना की पृथकता, विशिष्टता संबंधी कुछ ज्ञान होता है।

रीडर्स मेल

राजनीति के अपराधीकरण पर रोक

सरकार द्वारा प्रस्तुत लोक सभा में 130वां संविधान संशोधन हालांकि वर्तमान में संयुक्त संसदीय समिति को सौंप दिया गया है, लेकिन इस विधेयक के पेश किए जाने का मुख्य उद्देश्य राजनीति के अपराधीकरण पर रोक लगाने एवं नैतिकता स्थापित करने की दिशा में एक प्रयास तो लग ही रहा है। इस विधेयक के पारित हो जाने के बाद यदि कोई मंत्री, मुख्यमंत्री और प्रधानमंत्री 30 दिन तक जेल में रह जाते हैं तो फिर उन्हें तत्काल अपने मंत्री पद से त्यागपत्र देना पड़ेगा। सत्ता पक्ष की यह दलील कि नैतिकता के प्रतिमान स्थापित होंगे, वहीं विपक्ष की आशंका संस्थाओं की मनमानेपन इस्तेमाल को लेकर है कि गंभीर आपराधिक आरोप के तहत तत्काल जेल में तो डाल दिया जाता है, लेकिन आपराधिक वारदात की पृष्ठभूमि सत्यापित न होने की स्थिति में जो पद चले जाते हैं वे तो लौटकर नहीं आते हैं, जो गरिमा चली जाती है वह तो लौटकर नहीं आती है। पक्ष और विपक्ष के तर्क को खारिज नहीं किया जा सकता। इन सबों के साथ स्वघोषित रूप में प्रत्येक राजनीतिक दल अपने नेताओं से नैतिकता की अपेक्षा करें कि वह उसे पर स्वयं खरे उतरे यह समय की मांग है। कानून के क्रियान्वयन के पूर्व उच्च नैतिक मापदंड व्यावहारिक धरातल पर अपनाएं यह भी जरूरी है।

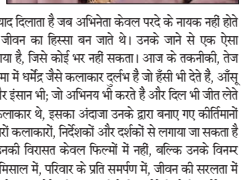

अतुल सक्सेना, ईमेल से

चुप रहना पीड़ा देता है

दहेज हत्या की घटनाएं केवल अदालतों के केस फाइलों तक सीमित नहीं बल्कि समाज के माथे पर काला धब्बा हैं। कानून किताबों में है, लेकिन बेटियों की चिताएं आज भी जल रही हैं। आंकड़े चीख कर कह रहे हैं कि 6450 केस दर्ज हुए और सजा दर महज 2 फीसद ही है। त्वरित और उचित सजा के अभाव में अदालतों में तारीखों के बढ़ते रहने गुनहगार निर्भिक हो जाते हैं और समाज बेटी को ससुराल की 'मालिकाना संपत्ति' मानकर चुप रह जाता है? मान-सम्मान की लाज में परिवार बेटियों को नरक में सौंप देता है। ऐसे में उनके साथ जो वीभत्स घटनाएं होती है वह पीड़ा देती है। इस बारे में सभी को सोचना होगा।

रमेश सिंह पोखरियाल, देहरादून

हवाई बातें न करें राहुल गांधी

लोक सभा में नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी ने दावा किया है कि निर्वाचन आयोग बिहार में वोट चोरी में शामिल है, और इस बारे में उनके पास पुख्ता सबूत हैं, जो एटम बम की तरह हैं। रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने इस पर पलटवार करते हुए कहा कि अगर पुख्ता सबूत हैं, तो देर किस बात की, धमाका कर दें। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि बिहार में गहन पुनरीक्षण के दौरान धांधली हुई होगी। लेकिन इसके लिए पुख्ता सबूत देने जरूरी होते हैं। केवल आरोप-प्रत्यारोप लगाने से प्रमाणित नहीं होता कि वोट चोरी हुई है। राहुल गांधी को रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह की चुनौती स्वीकारते हुए अपने दावे को सही और उसकी विश्वसनीयता के लिए एटम बम का धमाका करने में देरी नहीं करनी चाहिए। केवल हवा-हवाई बातें करने से न केवल स्वयं की विश्वसनीयता पर प्रश्न चिह्न लगते हैं, बल्कि उनके विरोधी भी मजाक बनाते हैं कि राहुल गांधी तो कुछ भी बेसिर पैर की बातें करते रहते हैं। राहुल गांधी को मय सबूत अपने दावे को सच साबित करना चाहिए ताकि वे विश्वसनीयता की कसौटी पर खरे उतर सकें।

हेमा बिष्ट, हि.प्र.

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

https://t.me/AllNewsPapersPaid

राष्ट्रीय सहारा
• राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक **जिया कादरी** द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन द्वारा हिन्दुस्तान मीडिया वेन्चर्स लिमिटेड प्रेस, मौजा-दरियापुर, पुलिस स्टेशन-शाहपुर, दानापुर, पटना से मुद्रित तथा चतुर्थ तल, सहारा इण्डिया विहार, बोरिंग रोड क्रासिंग, पटना से प्रकाशित। । **स्थानीय संपादक - संजय त्रिपाठी ***।

पटना कार्यालय- 3911448/417/454/422, **फैक्स :** 2535935,2520760 **विज्ञापन**-3911455/434, **प्रसार**- 3911451/428

वर्ष - 20, अंक 6844

आर.एन.आई. सं. -बीआईएचएचआईएन/2006/18082 Postal Reg. No. : R-10/NP-50/06-07

*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु उत्तरदायी

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

संविधान दिवस का सन्देश

निश्चित रूप से यह भारतीय संविधान की ताकत ही है कि इसके माध्यम से श्री नेरन्द्र मोदी जैसा चाय बेचने वाले गरीब परिवार में पैदा हुआ बच्चा आज देश का प्रधानमन्त्री बना हुआ है। इसका प्रमुख कारण यह है कि भारतीय संविधान प्रत्येक नागरिक को एक समान अधिकार देता है और प्रत्येक नागरिक को अपनी प्रतिभा के अनुसार विकास करने के अवसर सुलभ कराता है। भारत के प्रत्येक नागरिक को जो एक वोट का अधिकार दिया गया है उसी का यह कमाल है कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी देश के सर्वोच्च पद पर बैठने का सपना पाल सकता है। भारत के लोकतन्त्र की सबसे बड़ी खूबी यही है कि एक वोट की ताकत से आम आदमी सत्ता की कुर्सी पर जा बैठता है। अत: इस एक वोट की लोकतन्त्र में कोई भी कीमत नहीं लगाई जा सकती है। परन्तु यह तस्वीर का एक पहलू है।

दूसरा पहलू यह है कि संविधान जिस बराबरी का अधिकार नागरिकों को देता है उसकी मार्फत एक झोपड़ी में पैदा हुआ व्यक्ति महलों में पैदा हुए राजा-महाराजाओं का भी मुकाबला कर सकता है। इसका प्रमाण यह है कि 1971 के लोकसभा चुनावों में साधारण परिवेश से आने वाले लोगों ने देश के उद्योगपतियों से लेकर पूर्व राजा-महाराजाओं तक को चुनावों में परास्त किया। बेशक ये उद्योगपति या राजा-महाराजा किसी भी पार्टी के टिकट से खड़े हुए हों मगर इन्हें हराया साधारण वर्ग से आये हुए लोगों ने ही। इन चुनावों में देश के बिड़ला समूह के अधिपति स्व. के.के. बिड़ला को राजस्थान के झुंझुनू लोकसभा क्षेत्र से हार का मुंह देखना पड़ा। वहीं टाटा समूह के अधिपति मुम्बई से हारे और फरीदाबाद से एस्कार्ट्स ट्रैक्टर कम्पनी के मालिक एच.पी. नन्दा धराशायी रहे। जबकि गुड़गांव सीट से पटौदी रियासत के नवाब व क्रिकेट के मशहूर खिलाड़ी मरहूम मंसूर अली खान पटौदी अपनी जमानत तक जब्त करा बैठे।

भरतपुर के महाराज बृजेन्द्र सिंह अपनी रियासत के पूर्व कर्मचारी से चुनावी मैदान में हार गए। इसी प्रकार 1977 के आम चुनावों में मध्यप्रदेश की रीवा रियासत के महाराजा मार्तंड जू सिंह देव को एक नेत्रहीन प्रत्याशी स्व. के.के. शास्त्री ने चुनाव में हरा दिया। यह सब भारत के लोकतन्त्र में ही संभव था क्योंकि इसका संविधान सभी नागरिकों को एक तराजू पर रखकर तोलता है। इतना ही नहीं यदि हम भारत के उद्योगपतियों का इतिहास भी निकाले तो पायेंगे बहुत छोटे स्तर पर कारोबार करने वाले लोग कालान्तर में देश के जाने-माने उद्योगपति बने। इनमें स्व. रामकृष्ण डालमिया व किर्लोस्कर आदि का नाम लिया जा सकता है। परन्तु संविधान की सबसे प्रमुख बात यह है कि यह भारत की पांच हजार साल पुरानी संस्कृति में पहली ऐसी पुस्तक है जो लोगों को विभिन्न ऊंच-नीच के खांचों में नहीं रखती बल्कि मानवता के आधार पर हर व्यक्ति को एक बराबरी पर रखती है और सबके अधिकार बराबर देती है। इसमें न धर्म आड़े आता है और न जाति। इंसानियत के आधार पर इसमें प्रत्येक व्यक्ति को समान न्याय पाने का अधिकार है। इसी संविधान दिवस को पूरा देश 26 नवम्बर को मनाता है। इसी दिन 1949 में संविधान निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने इसे संविधान सभा को सौंपा था। डॉ. भीमराव अम्बेडकर स्वयं समाज के सबसे निचले तबके से आते थे और भारतीय समाज की विसंगतियों को बखूबी समझते थे। इसलिए उन्होंने संविधान में सन्त कबीर से लेकर गुरू नानक तक के फलसफों का समावेश किया और सभी भारतीयों को इंसानियत के नजरिये से देखा। भारत में राष्ट्रपति को इसी संविधान का संरक्षक माना जाता है अत: उन्होंने संविधान दिवस पर सन्देश दिया कि हमारा संविधान भारतीयों को दास मानसिकता से बाहर लाने का पुरअसर दस्तावेज है। इसकी वजह यह है कि भारत लगातार दो सौ साल तक अंग्रेजों की गुलामी में रहा है जिसकी वजह से इसके लोगों में गुलामी की मानसिकता घर कर गई थी। महात्मा गांधी ने इसी दास मानसिकता को बाहर निकालने के लिए जो स्वतन्त्रता आन्दोलन चलाया उसके केन्द्र में भारत का आम नागरिक ही था। बापू चाहते थे कि आम हिन्दुस्तानी में आत्मसम्मान व आत्मगौरव का भाव जगे इसके लिए उन्होंने 1928 में ही घोषणा की कि स्वतन्त्र भारत में प्रत्येक वयस्क नागरिक को एक वोट का ऐसा अधिकार दिया जायेगा जिसमें सरकारें बनाने व बदलने की ताकत होगी। इस एक वोट के अधिकार के माध्यम से भारत का नागरिक स्वयंभू बनेगा जिसके आगे बड़े से बड़े व्यक्ति को भी नतमस्तक होना पड़ेगा। इसीलिए आज हम देखते हैं कि हर पांच साल बाद चुनावों के मौके पर बड़े से बड़ा राजनीतिज्ञ आम नागरिकों की चौखट पर नतमस्तक होता है।

> संविधान जिस बराबरी का अधिकार नागरिकों को देता है उसकी मार्फत एक झोपड़ी में पैदा हुआ व्यक्ति महलों में पैदा हुए राजा-महाराजाओं का भी मुकाबला कर सकता है। इसका प्रमाण यह है कि 1971 के लोकसभा चुनावों में साधारण परिवेश से आने वाले लोगों ने देश के उद्योगपतियों से लेकर पूर्व राजा-महाराजाओं तक को चुनावों में परास्त किया। बेशक ये उद्योगपति या राजा-महाराजा किसी भी पार्टी के टिकट से खड़े हुए हों मगर इन्हें हराया साधारण वर्ग से आये हुए लोगों ने ही।

वास्तव में गांधी यह तय करके गये कि लोकतन्त्र में राजा का जन्म किसी रानी के पेट से नहीं होगा बल्कि वह जनता द्वारा डाले गये मतों की पेटियों से पैदा होगा। इस फलसफे को ही बाद में समाजवादी नेता डॉ. राम मनोहर लोहिया ने अपने शब्दों में गढ़ा। संविधान में नागरिकों के अधिकारों की रक्षा का दायित्व स्वतन्त्र न्यायपालिका को सौंपा गया है। न्यायपालिका जिस आधारभूत ढांचे की बात करती है वह नागरिकों के अधिकार ही हैं क्योंकि लोकतन्त्र में नागरिकों के ये अधिकार सबसे पवित्र माने जाते हैं। इन्हीं अधिकारों की वजह से लोगों द्वारा बनाई गईं सराकारें उनमें गैर बराबरी समाप्त करने के प्रयास करती हैं। मोदी सरकार ने पिछले कुछ वर्षों में गरीबी की सीमा रेखा से जिन 25 करोड़ लोगों को ऊपर उठाने का दावा किया है वह संविधान के विभिन्न प्रावधानों के माध्यम से ही संभव हो सका है। अत: भारतीय संविधान जाहिर तौर पर समता मूलक समाज की स्थापना का अलम्बरदार भी है।

कभी प्रकृति को मां कहते थे

गीता पाढा

''झूठी मुस्कराहट के पीछे लोग न जाने कितने गम छिपा रहे हैं,
कभी प्रकृति को मां कहते थे आज उसे ही रुला रहे हैं,,
हम सब कुछ अपने लिए सर्वश्रेष्ठ चाह रहे हैं,
पर प्रदूषित हवा अपने फेफड़ों में ले जा रहे हैं,,
अत्याधुनिक मशीनों से अपनी दिनचर्या सरल बना रहे हैं,
पर वास्तव में आज के इंसान अंदर से खोखले नजर आ रहे हैं...।।"

एक लद्दाखी का दर्द

कलम-दवात
कुमकुम चड्ढा

लद्दाख अब भी बेचैनी की स्थिति में है। हिंसा भले ही थम गई हो, लेकिन पहाड़ी राज्य के लोगों में गहरी निराशा और सरकार द्वारा जलवायु कार्यकर्ता सोनम वांगचुक को निशाना बनाए जाने को लेकर असंतोष बरकरार है। उन्हें रिहा करने की सभी अपीलें अनदेखी कर दी गई हैं और वांगचुक अब भी हिरासत में हैं। एपेक्स बॉडी के सह-अध्यक्ष चेरिंग दोरजे लाखरूक, जो राज्य का दर्जा और छठी अनुसूची सहित अन्य मांगों को लेकर सरकार से बातचीत कर रहे हैं, कहते हैं, “हम मानते हैं कि वह निर्दोष हैं। वह न तो जिम्मेदार हैं और न ही लद्दाख की हिंसा के पीछे उनका कोई हाथ है। वास्तव में, हमारी मांग पूरे भारत में इसलिए प्रमुख बनी क्योंकि उन्होंने उसे आवाज दी।”

वांगचुक पर भड़काऊ भाषण देने के आरोपों को खारिज करते हुए लाखरूक ने कहा, “उन्होंने लोगों को हिंसा के लिए उकसाया नहीं। उलटे, उन्होंने अहिंसा की बात की। संभव है कि कुछ लोगों ने उनकी बातों को गलत समझा हो। हमारे लिए वह निर्दोष हैं।”

सरकार द्वारा उन्हें निशाना बनाए जाने के पीछे का कारण बताते हुए लाखरूक ने कहा कि वांगचुक की वजह से “हमारे आंदोलन को गति मिली,” और दोहराया कि वांगचुक निर्दोष हैं और उन्हें रिहा किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा, “आरोपों को साबित किया जाना चाहिए और सरकार जांच करने के लिए स्वतंत्र है,” यह संकेत देते हुए कि जब तक ऐसा नहीं होता, उन्हें दोषी ठहराना अनुचित है।

उन्होंने रेखांकित किया कि प्रदर्शन और उसके बाद की हिंसा “संचित रोष” का परिणाम थे। लाखरूक ने आरोप लगाया कि सरकार “अपनी कमजोरियां छुपाने” के लिए दोषारोपण की राजनीति कर रही है। उनका कहना है कि असली मुद्दा बेरोजगारी है।

शिक्षित युवा सरकार से और उसके अधूरे वादों से तंग आ चुके हैं। छह साल पहले उन्हें छठी अनुसूची देने का वादा किया गया था, लेकिन उस पर कोई कार्रवाई नहीं हुई, इसलिए नाराजगी बढ़ती गई जैसे कि शिक्षित युवाओं को नौकरियां देने के मुद्दे पर भी और अन्य कई बातों पर।

एपेक्स बॉडी की मांगों की सूची पर नजर डालें तो गतिरोध साफ दिखता है। लाखरूक कहते हैं, “हम राज्य का दर्जा, एक अतिरिक्त सांसद और नौकरियां चाहते हैं।” इसी बीच एपेक्स बॉडी सरकार से इस बात पर बातचीत कर रही है कि वह कितनी दूर जा सकती है, उनकी मुख्य मांगें क्या हैं और सरकार वास्तव में क्या देगी या क्या नहीं देगी?

बातचीत के समानांतर चल रही एक और मांग वांगचुक की रिहाई की है, हालांकि यह बातचीत की पूर्व-शर्त नहीं है। लाखरूक कहते हैं, “हमने कभी नहीं कहा कि उनकी रिहाई बातचीत में शामिल होने की शर्त है। हमने सिर्फ इतना कहा है कि उन्हें बिना किसी शर्त के रिहा किया जाए। वह हमारी संस्था के सदस्य हैं, एपेक्स बॉडी का हिस्सा हैं, इसलिए उनका समर्थन करना हमारा कर्तव्य है। सिर्फ वही नहीं, और भी कई लोग जेल में हैं और हम उनकी रिहाई की भी मांग कर रहे हैं।”

अनुच्छेद 370 को हटाए जाने का स्वागत करने वालों में शामिल लाखरूक और उनके लोग अब निराश हैं। लाखरूक कहते हैं, “हम अलगाव चाहते थे, लेकिन एक अलग तरीके से। हम विधायिका के साथ केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा चाहते थे। हमें यूटी तो मिला, लेकिन विधायिका नहीं मिली। यह बहुत बड़ा अंतर है। पहले जब हम जम्मू-कश्मीर का हिस्सा थे, तब हमारे चार विधायक और दो एमएलसी होते थे, अब कुछ नहीं है। हमने अनुच्छेद 370 का विरोध इसलिए किया था क्योंकि यह लद्दाख के लिए यूटी का दर्जा पाने में बाधा था। हमें यूटी मिला, लेकिन वह संरक्षण खो दिया जो अनुच्छेद 370 हमें देता था, जमीन की सुरक्षा, नौकरियों की सुरक्षा, और बाहर के लोगों द्वारा भूमि खरीद पर रोक, अब यह सब बदल चुका है।”

इस बात को “दिलचस्प संयोग” बताया जा रहा है कि छह वर्षों से जमा गुस्सा ठीक उसी समय फूटा जब वांगचुक ने राज्य का दर्जा मांगने की बात उठाई। लाखरूक कहते हैं, “गुस्से को भड़कने के लिए एक चिंगारी की जरूरत होती है अगर लोगों में आक्रोश है तो वे अवसर का इंतजार करते हैं।” उन्होंने यह भी खारिज किया कि यह “चिंगारी” वांगचुक के विरोध प्रदर्शनों से लगी: “मुझे नहीं लगता,” उन्होंने कहा।

वांगचुक के पाकिस्तान से कथित संबंधों पर उन्होंने कहा, “अगर कोई व्यक्ति किसी सम्मेलन के लिए पाकिस्तान जाता है तो क्या वह पाकिस्तान-समर्थक या भारत-विरोधी हो जाता है? वह पर्यावरण पर बहस में हिस्सा लेने गए थे। वह दुनिया भर में जाते हैं- पाकिस्तान, चीन तो इसमें गलत क्या है? मैं भी पाकिस्तान गया था, तो क्या मैं राष्ट्र-विरोधी हूं?”

सरकार द्वारा लद्दाख के लोगों को राष्ट्र-विरोधी करार देने पर प्रतिक्रिया देते हुए लाखरूक ने कहा, “हम हमेशा भारत के साथ रहे हैं और हमारा संघर्ष मुख्यधारा के और करीब आने का है, न कि कश्मीर के अलगाववादियों की राह पर चलने का। हम भारत समर्थक थे, हैं और रहेंगे। इसलिए यह लेबलिंग लोगों को बहुत आहत करती है।”

छठी अनुसूची पर लोगों को ठगा गया महसूस होने के सवाल पर उन्होंने कहा, “यह सरकार का वादा था। अगर चुनाव के दौरान कोई वादा किया गया है, तो उसे पूरा करना चाहिए था। वरना यह वादा करना ही नहीं चाहिए था।”

भाजपा से नाता तोड़ चुके लाखरूक जो कभी मंत्री और प्रदेश अध्यक्ष रह चुके, ने कहा, “मैंने इस्तीफा इसलिए दिया क्योंकि महामारी के दौरान हमारे छात्र देशभर में फंसे हुए थे।

हमने पार्टी से मदद मांगी, लेकिन कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली। जब कोई सहायता नहीं मिली, तो मैंने पद छोड़ दिया।” सत्ता और प्रतिष्ठा छोड़ने के बावजूद, लाखरूक कहते हैं कि वह अपने लोगों और अपने क्षेत्र के लिए संघर्ष जारी रखेंगे।

नशे का ट्रांजिट पॉइंट बनी दिल्ली

आकाश चोपड़ा

किसी समाज और देश को भीतर से खोखला करना हो तो उसकी युवाशक्ति को नशे के गर्त में धकेलना काफी है। हाल के वर्षों में देश के अलग-अलग हिस्सों में नशीले पदार्थों की बरामदगी, जब्ती और मादक पदार्थों की आपूर्ति के संजाल के खुलासों पर नजर दौड़ाई जाए, तो कह सकते हैं कि नशे की गिरफ्त में जाती हमारी युवा पीढ़ी ऐसे ही संकट से दो-चार है।

मामला सिर्फ यह नहीं है कि चौकसी बरते जाने के कारण देश में मादक पदार्थों की भारी-भरकम खेपें पकड़ी जा रही हैं, बल्कि गंभीर पहलू यह भी है कि आखिर इस नेटवर्क में कौन लोग शामिल हैं, ये मादक पदार्थ कहां से आ रहे और कहां जा रहे हैं और इतनी भारी खपत हमारे देश के किन इलाकों व समाज के किन वर्गों के बीच हो रही है।इस समस्या का एक सिरा इससे भी जुड़ता है कि दिखावे की परंपरा, अमीरों जैसी रहन-सहन वाली शैली, परिवारों की टूटन, बेरोजगारी या अकेलेपन आदि ने ही तो कहीं हमारी युवा पीढ़ी को जाने-अनजाने नशे की अंधेरी गलियों में नहीं धकेल दिया है! देश के विभिन्न हिस्सों में मादक पदार्थों की धरपकड़ में इधर काफी तेजी आई है।दिल्ली के इतिहास में सबसे बड़ी नशे की खेप 1 अक्टूबर को महिपालपुर से पकड़ी गई। एक गोदाम से 562 किलोग्राम कोकीन और 40 किलोग्राम थाईलैंड के फुकेट से मंगाया गांजा जब्त किया गया। इंटरनेशनल मार्केट में इसकी कीमत 5640 करोड़ रुपये बताई गई। इससे पहले 360 किग्रा कोकीन पकड़ने का रिकॉर्ड था। नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो और स्पेशल सेल ने 20 नवंबर को साउथ दिल्ली के छतरपुर स्थित एक फ्लैट से 328 किग्रा मेथामफेटामाइन जब्त किया, जिसकी इंटरनैशनल मार्केट में 262 करोड़ रुपये की कीमत आंकी गई है। कई देशों से कुरियर समेत अन्य माध्यमों से ड्रग्स को दिल्ली भेजा जाता है, जिसके बाद इसे अलग-अलग राज्यों में सप्लाई किया जाता है। यह भी बात निकल कर आ रही है कि दिल्ली नशे के ट्रांजिट पाइंट के रूप में बदलती जा रही है। दिल्ली में ड्रग रैकेट के तार फिल्म जगत से जुड़े होते हुए भी नजर आ रहे हैं, जिनमें पॉपुलर इन्फ्लुएंसर ओरी और कई और फिल्मी हस्तियों के नाम जोड़े जा रहे हैं। दिल्ली पुलिस ने 'नशा मुक्त भारत' अभियान के तहत इस साल 31 अक्टूबर तक नारकोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सबस्टेंसएक्ट के तहत 1915 केस दर्ज किए। इनमें 2498 नशा तस्करों और सप्लायरों को अरेस्ट

किया। पारंपरिक नशे में चरस, अफीम, गांजा, स्मैक-हेरोइन और कोकीन की रिकॉर्ड जब्ती की गई। थाईलैंड, लाओस और म्यांमार की सीमाएं रुआक और मेकांग नदियों के संगम पर मिलती हैं और स्वर्ण त्रिभुज बनाती हैं।

गोल्डन क्रीसेंट में अफ़गानिस्तान के साथ, यह 1950 के दशक से दुनिया के सबसे बड़े अफ़ीम उत्पादक क्षेत्रों में से एक रहा है। 21वीं सदी की शुरुआत तक, दुनिया की ज़्यादातर हेरोइन गोल्डन ट्राइंगल से आती थी, जब अफ़गानिस्तान दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक बन गया। गोल्डन ट्राइंगल क्षेत्र से निकटता के कारण, भारत की जनता इस क्षेत्र से होकर गुजरने वाली नशीली दवाओं की भारी मात्रा से बुरी तरह प्रभावित है। यह समस्या छिद्रपूर्ण और अपर्याप्त सुरक्षा वाली सीमा के कारण और भी जटिल हो जाती है, जो नशीली दवाओं के तस्करों के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती है।

हेरोइन, जो सत्तर के दशक के मध्य में भारत के पूर्वोत्तर में प्रचलित हुई थी, 1984 के बाद इस क्षेत्र में आसानी से उपलब्ध हो गई और 1990 तक इस क्षेत्र में हेरोइन की खपत में भारी वृद्धि देखी गई। इस तथ्य का प्रमाण नशेड़ियों की संख्या में भारी वृद्धि से मिलता है, जो 1990 में एक प्रतिशत से भी कम से बढ़कर 1991 में 50 प्रतिशत से अधिक और 1997 में 80.01 प्रतिशत हो गई।

हालांकि, पूर्वोत्तर में तस्करी की जाने वाली हेरोइन बड़े पैमाने पर व्यावसायिक बिक्री के लिए नहीं, बल्कि मुख्य रूप से स्थानीय खपत के लिए होती है। आंकड़े यह भी बताते हैं कि दक्षिण-पूर्व एशियाई मूल की हेरोइन देश में जब्त की गई कुल हेरोइन का केवल एक से दो प्रतिशत ही है। साथ ही, यह तर्क दिया जा सकता है कि नशीले पदार्थों की कम ज़ब्ती का एक कारण अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर कम निगरानी भी हो सकती है। गुवाहाटी और कोलकाता व दिल्ली जैसे अन्य शहरों में अधिकारियों द्वारा हेरोइन की खेपों को लगातार ज़ब्त करना इस बात का संकेत है कि म्यांमार से हेरोइन की तस्करी में वृद्धि हो रही है। नि:संदेह मादक पदार्थों की खेप बरामद किया जाना यह बताता है कि नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो ने अपनी चौकसी बढ़ाई है, लेकिन अभी यह नहीं कहा जा सकता कि उसकी सक्रियता के चलते नशे का कारोबार करने वाले हतोत्साहित हो रहे हैं। उनकी सक्रियता पर रोक लगानी होगी और यह तब संभव होगा, जब जिला स्तर पर पुलिस भी नशे के कारोबार के खिलाफ सख्ती का परिचय देगी। वास्तव में पुलिस और नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो के बीच तालमेल बढ़ाने की आवश्यकता है। यह अच्छा है कि केंद्र और राज्य सरकारों के स्तर पर कायम तालमेल को जिला स्तर पर भी स्थापित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। तस्कर छोटे शहरों के स्कूली बच्चों को भी अपने निशाने पर ले रहे हैं। नशे का बढ़ता चलन केवल युवा पीढ़ी को खोखला ही नहीं कर रहा है, बल्कि वह देश की अर्थव्यवस्था को भी प्रभावित कर रहा है। इससे भी खतरनाक बात यह है कि नशे के तस्कर देश विरोधी तत्वों और आतंकियों के साथ मिल गए हैं। स्पष्ट है कि नशे के कारोबारी देश की सुरक्षा के लिए भी खतरा बन गए हैं। इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि उन क्षेत्रों की संख्या बढ़ती जा रही है, जो हाल तक नशे के कारोबार से अछूते थे। अभी तक आम तौर पर देश के सीमावर्ती इलाके ही नशे के कारोबार के गढ़ के रूप में जाने जाते थे, लेकिन अब देश के अंदरूनी इलाकों में भी मादक पदार्थ पहुंच रहे हैं। नशे के कारोबार पर लगाम लगाने के लिए जहां यह आवश्यक है कि नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो अपनी चौकसी बढ़ाए, वहीं यह भी जरूरी है कि समाज में भी मादक पदार्थों के खिलाफ जागरूकता पैदा हो। किशोरों और युवाओं के बीच यह संदेश पहुंचाना ही होगा कि मादक पदार्थों का सेवन केवल तबाही की ओर ले जाता है। एक चैलेंज हमारे सामने सबसे बड़ा है डार्क वेब का, डार्क वेब जो अलग-अलग ऐप, सोशल मीडिया साइट्स और सोशल मीडिया के अलग-अलग प्लेटफार्म के जरिए तस्करी का काम हो रहा है,हाल ही में बहुत बड़े नेक्सस को पकड़ा है जो डार्क वेब के जरिए काम कर रहा था।

टोक्यो को पीछे छोड़ जकार्ता कैसे बना दुनिया का सबसे अधिक आबादी वाला शहर

जकार्ता दुनिया का सबसे अधिक आबादी वाला शहर कैसे बना, इसकी कहानी किसी एक कारण से नहीं बल्कि कई दशकों में जमा हुए सामाजिक-आर्थिक बदलावों से मिलकर बनी है। संयुक्त राष्ट्र की नई शहरी आकलन रिपोर्ट (वर्ल्ड अर्बनाइजेशन प्रॉस्पेक्ट्स 2025) के बाद यह साफ हो गया कि जकार्ता केवल इंडोनेशिया की राजधानी भर नहीं रहा, बल्कि एक ऐसा विशाल महानगरीय इलाका बन चुका है जिसने आबादी के मामले में टोक्यो को भी पीछे छोड़ दिया है। आज जकार्ता और उसका विस्तृत महानगर क्षेत्र (जिसे जबोदेताबेक कहा जाता है) 4 करोड़ से अधिक लोगों को अपने भीतर समेटे हुए हैं, और यह संख्या लगातार बढ़ रही है।

जकार्ता की आबादी बढ़ने का सबसे बड़ा कारण देश के अंदर से हुआ भारी पैमाने का प्रवास है। इंडोनेशिया के ग्रामीण इलाकों, छोटे शहरों और दूर-दराज द्वीपों से लाखों लोग शिक्षा, रोजगार और बेहतर जीवन की तलाश में लगातार यहां आते रहे।

1970 के दशक तक यह शहर कुछ ही मिलियन की आबादी वाला था, लेकिन आर्थिक उदारीकरण, उद्योगों के विस्तार और सेवा क्षेत्र के तेज विकास ने जकार्ता को पूरे देश के युवाओं के लिए एक चुंबक की तरह आकर्षक बना दिया। यहां आने वाला अधिकांश प्रवासी युवा होता है, जिससे प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि भी तेज रहती है और हर दशक में महानगर की कुल जनसंख्या में बड़ा इजाफा दर्ज होता है।

आर्थिक दृष्टि से जकार्ता इंडोनेशिया की धड़कन है। सरकार, कॉरपोरेट, बैंकिंग, स्टार्ट-अप, व्यापार, बंदरगाह और अंतर्राष्ट्रीय निवेश-सबका केंद्र यही है। यही कारण है कि देश की आंतरिक माइग्रेशन स्ट्रीम का सबसे बड़ा हिस्सा यहीं ठहरता है। शहर के आसपास बन रहे उपनगर जैसे बोगोर, तंगेरांग और बेकासी-ने जनसंख्या घनत्व को कई गुना बढ़ा दिया है। लोग भले ही काम के घंटे जकार्ता में बिताते हों, लेकिन रात में वे इन उपनगरों में लौट जाते हैं। इस तरह पूरा क्षेत्र एक विशाल शहरी जाल में बदल गया है, जो संयुक्त रूप से दुनिया का सबसे बड़ा 'शहरी समुच्चय' बनाता है। इतनी बड़ी आबादी के साथ चुनौतियां भी उतनी ही बड़ी हैं। ट्रैफिक जाम, अव्यवस्थित निर्माण, जल-भराव, प्रदूषण, भू-धंसान, कचरा-प्रबंधन और भीड़-भाड़ ने जकार्ता को रहने की दृष्टि से मुश्किल शहरों में शामिल कर दिया है। सरकार ने राजधानी को बोर्नियो स्थित नए शहर नुसंतारा में स्थानांतरित करने का फैसला भी इसी अत्यधिक बोझ को देखते हुए किया, लेकिन इसके बावजूद जकार्ता की जनसंख्या घटती नहीं, बल्कि लगातार बढ़ती जा रही है, क्योंकि लोगों का मानना है कि अवसरों का असली केंद्र अभी भी यही है।

इस प्रकार जकार्ता का दुनिया की सबसे ज्यादा आबादी वाला शहर बनना किसी अचानक हुए बदलाव का परिणाम नहीं, बल्कि दशकों से जमा होते आए माइग्रेशन, आर्थिक महत्व, युवाओं की प्राकृतिक वृद्धि, और महानगर क्षेत्र के अनियंत्रित विस्तार की संयुक्त कहानी है।

--आईएएनएस

जीएसटी सुधारों से आर्थिक वृद्धि की गति मजबूत

- वित्त मंत्रालय की अक्टूबर माह की मासिक आर्थिक समीक्षा : देश में खपत को महत्वपूर्ण बढ़ावा मिला

नई दिल्ली, (पंजाब केसरी): माल एवं सेवा कर (जीएसटी) की दरों को युक्तिसंगत बनाने से खपत को महत्वपूर्ण बढ़ावा मिला है और भारतीय अर्थव्यवस्था चालू वित्त वर्ष 2025-26 के दौरान जोखिमों से निपटने तथा वृद्धि की गति बनाए रखने के लिए मजबूत स्थिति में है। वित्त मंत्रालय की बृहस्पतिवार को जारी एक रिपोर्ट में यह कहा गया।

वित्त मंत्रालय की अक्टूबर माह की मासिक आर्थिक समीक्षा में कहा गया कि मुद्रास्फीति के दबाव में कमी आने तथा हाल के कर सुधारों से खर्च योग्य घरेलू आय में वृद्धि से निकट भविष्य में उपभोग का परिदृश्य सकारात्मक लग रहा है। खुदरा मुद्रास्फीति अब तक के सबसे निचले स्तर पर पहुंच गई है। यह अक्टूबर 2025 में 0.25 प्रतिशत रह गई है जबकि सितंबर 2025 में यह 1.44 प्रतिशत थी। मंत्रालय ने कहा कि इस गिरावट का मुख्य कारण जीएसटी दरों में कमी, अनुकूल तुलनात्मक आधार प्रभाव और खाद्य मुद्रास्फीति में उल्लेखनीय गिरावट है। अक्टूबर की मासिक आर्थिक समीक्षा में कहा गया, '' जीएसटी दरों को युक्तिसंगत बनाने से उपभोग को उल्लेखनीय बढ़ावा मिला है। यह उच्च आवृत्ति संकेतकों (पीएमआई, जीएसटी सग्रह, ई-वे बिल आदि) में मजबूती से पता चलता है। इसमें अधिक ई-वे बिल सृजन, त्योहारों के दौरान मोटर वाहन की रिकॉर्ड बिक्री, यूपीआई लेनदेन और ट्रैक्टर की बिक्री में उल्लेखनीय वृद्धि शामिल है।'' इसने कहा कि ये चीजें शहरी व ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में मांग की स्थिति में व्यापक सुधार की ओर इशारा करते हैं।

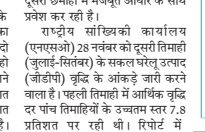

मासिक आर्थिक समीक्षा के अनुसार, '' जीएसटी युक्तिकरण का व्यय व्यवहार पर पूरा प्रभाव अगली दो तिमाहियों में और अधिक स्पष्ट हो जाएगा।''जीएसटी को युक्तिसंगत बनाने के तहत 5, 12, 18 और 28 प्रतिशत के बजाय पांच प्रतिशत तथा 18 प्रतिशत की दो दरों में तब्दील किया गया है। इससे 99 प्रतिशत दैनिक उपयोग की वस्तुओं की कीमतें कम हुई हैं। नई दरें 22 सितंबर से लागू हुईं।

वित्त मंत्रालय की रिपोर्ट में कहा गया कि बाह्य माहौल में व्यापार नीति संबंधी अनिश्चितता बनी हुई है हालांकि वैश्विक दबाव पहले की तुलना में कम हुआ है। वृद्धि संभावनाओं के बारे में इसमें कहा गया कि विभिन्न स्वतंत्र आर्थिक आकलनों के अनुसार वित्त वर्ष 2025-26 की दूसरी तिमाही के लिए वास्तविक जीडीपी वृद्धि दर सात से 7.5 प्रतिशत के दायरे में है जो आर्थिक गतिविधियों में निरंतर मजबूती का संकेत देता है। अर्थव्यवस्था वित्त वर्ष 2025-26 की दूसरी छमाही में मजबूत आधार के साथ प्रवेश कर रही है।

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) 28 नवंबर को दूसरी तिमाही (जुलाई-सितंबर) के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वृद्धि के आंकड़े जारी करने वाला है। पहली तिमाही में आर्थिक वृद्धि दर पांच तिमाहियों के उच्चतम स्तर 7.8 प्रतिशत पर रही थी। रिपोर्ट में अर्थव्यवस्था में रोजगार सृजन को बनाए रखने और उसमें तेजी लाने के लिए संरचनात्मक सुधारों का आह्वान किया गया है। गौरतलब है कि श्रम बाजारों में सुधार के लिए भारत सरकार ने चार श्रम संहिताएं वेतन संहिता, 2019, औद्योगिक संबंध संहिता, 2020, सामाजिक सुरक्षा संहिता, 2020 और व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्यदशा संहिता, 2020 लागू की हैं।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

प्रवाह
7 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 ■ आगरा

हादसा तो बस संकेत मात्र है, अक्सर असल संकट बहुत बड़ा होता है। - डॉन ब्राउन

गर्व, चुनौती और जिम्मेदारी

स्कॉटलैंड के ग्लासगो में कॉमनवेल्थ स्पोर्ट्स की महासभा में अहमदाबाद को वर्ष 2030 के राष्ट्रमंडल खेलों की मेजबानी के लिए औपचारिक स्वीकृति मिलना पूरे देश के लिए गर्व की बात है, जिसमें चुनौती और जिम्मेदारी, दोनों का संदेश छिपा है। हालांकि, भारत को यह सम्मान मिलने की पूरी संभावना तभी से जताई जा रही थी, जब राष्ट्रमंडल खेल महासंघ की कार्यकारी समिति ने सौवें राष्ट्रमंडल खेलों के प्रस्तावित मेजबान शहर के रूप में अहमदाबाद के नाम की सिफारिश की थी। ग्लासगो में लिया गया निर्णय एक तरह से उसकी आधिकारिक पुष्टि ही है। घोषणा के कुछ ही क्षण बाद जिस तरह से बीस गरबा नर्तक और तीस भारतीय ढोल वादकों ने महासभा में समृद्ध सांस्कृतिक प्रदर्शन किया, उससे वहां मौजूद सभी लोगों को उस विरासत व गौरव का एहसास जरूर हुआ होगा, जिसकी उम्मीद सभी देशों के खिलाड़ी और प्रशंसक गुजरात में आयोजित हो रहे खेलों से कर सकते हैं। आयोजन में शामिल होने वाले खेलों की अंतिम सूची तय करने की प्रक्रिया अगले महीने से शुरू होगी, लेकिन माना जा रहा है कि 2030 में खेलों की संख्या अगले वर्ष ग्लासगो में होने वाले खेलों से कहीं अधिक होगी। चूंकि भारत की नजर 2036 में आयोजित होने वाले ग्रीष्मकालीन ओलंपिक पर भी है, इसलिए उम्मीद की जानी चाहिए कि अहमदाबाद राष्ट्रमंडल खेलों के जरिये यह साबित करने की कोशिश जरूर होगी कि देश अब बगैर किसी रुकावट के बड़े खेल आयोजन कर सकता है। इस लक्ष्य के मद्देनजर ही शायद देश के राजनीतिक और खेल नेतृत्व ने यह सुनिश्चित किया कि भारत कई प्रमुख आयोजनों की शृंखला आयोजित करे, जिससे देश भर में मजबूत खेल बुनियादी ढांचा विकसित करने में मदद मिले। हाल ही में, नई दिल्ली में पैरा एथलेटिक्स चैंपियनशिप और अपने पहले विश्व एथलेटिक्स इंटरकॉन्टिनेंटल टूर की मेजबानी इसी दिशा में उठाए गए कदम समझे जा सकते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर के खेलों की मेजबानी का मतलब सिर्फ खेल नहीं होता, बल्कि यह अर्थव्यवस्था को भी ताकत देता है। जाहिर है कि पर्यटन

में उछाल, होटल उद्योग का विस्तार, स्थानीय हस्तशिल्प और खान पान को वैश्विक मंच, हजारों नई नौकरियां और शहर की ब्रांड वैल्यू में कई गुना बढ़ोतरी, ये सब इसके स्वाभाविक परिणाम होंगे। 2023 के क्रिकेट विश्वकप फाइनल की याद अब भी ताजा है, उम्मीद की जानी चाहिए कि 2030 में उससे कई गुना बड़े आयोजन का फायदा न सिर्फ गुजरात, बल्कि पूरे देश को मिलेगा।

हांगकांग अग्निकांड से जो सीख सकते हैं

हांगकांग की बहुमंजिली इमारतों में लगी आग यहां हुआ अब तक का सबसे घातक हादसा है, जिसमें दर्जनों लोगों की मौत हो गई है, और सैकड़ों लापता बताए जा रहे हैं। हादसे का सबक साफ है कि ऊंची इमारतों से लोगों को निकालने के लिए किसी एक तरीके पर निर्भर नहीं रह सकते।

हांगकांग में एक बड़े आवासीय परिसर की कई इमारतों में लगी आग में दर्जनों लोगों की मौत हो गई है, और सैकड़ों लोग लापता बताए जा रहे हैं। इसके अलावा दर्जनों लोग गंभीर रूप से घायल होकर अस्पताल में भर्ती हैं। बहुमंजिली इमारतों में लगी यह आग हांगकांग की अब तक की सबसे घातक है, और 1996 में गार्ले बिल्डिंग में लगी आग के बाद से सबसे खराब है। हालांकि, 1,000 से ज्यादा लोगों को निकाले जाने की खबर है, लेकिन यह साफ नहीं है कि कितने लोग अब भी फंसे हुए हैं। कहा जाता है कि यह आग जलते हुए बांस के मचान और तेज हवाओं के कारण एक इमारत से दूसरी इमारतों तक फैली, जो दिखाती है कि ऐसी आपात स्थिति में ऊंची इमारतों से लोगों को निकालना कितना मुश्किल होता है। बांस का मचान सदियों से इस शहर की खासियत रहा है। इसका कारण कुछ हद तक इतिहास, कुछ हद तक इंजीनियरिंग और कुछ हद तक अर्थव्यवस्था है।

मिलाद हघानी
एसोसिएट प्रोफेसर
मेलबर्न यूनिवर्सिटी

इस तरह की आपात स्थिति में ऊंची इमारतों से लोगों को निकालने का काम हर रोज नहीं होता, लेकिन अक्सर होता है। और जब भी ऐसा होता है, तो उसके नतीजे गंभीर होते हैं। सबसे ज्यादा खतरा उन इमारतों में होता है, जो भरी रहती हैं, जैसे रात के समय घरों में या दिन के समय कार्यालयों में। अमेरिका में वर्ल्ड ट्रेड सेंटर से लेकर ब्रिटेन में ग्रेनफेल टॉवर तक हमने ऐसा देखा है। हर बार ऐसा ही होता है कि जब आग लग जाती है, तो हजारों लोगों को बहुमंजिली इमारतों से सुरक्षित नीचे उतारना एक बड़ी चुनौती बन जाती है। केवल लोगों को निकालने की बात नहीं होती, बल्कि इमारतों की भौतिक सीमाएं और तनाव में इन्सानी व्यवहार के बीच जद्दोजहद होती है।

सबसे बड़ी बाधा ऊंची इमारतों से जमीन की दूरी होती है। ज्यादातर इमारतों में सीढ़ियां ही बचने का एकमात्र भरोसेमंद रास्ता होती हैं। वास्तव में इमारत खाली करने के दौरान सीढ़ियों से नीचे उतरना ज्यादातर लोगों की उम्मीद से बहुत धीमा होता है। आमतौर पर अभ्यास (ड्रिल) के दौरान लोग लगभग 0.4–0.7 मीटर प्रति सेकंड की रफ्तार से नीचे उतरते हैं। लेकिन जब वास्तव में आपात स्थिति होती है, खासकर ऊंची इमारतों में आग लगने पर, तो यह रफ्तार काफी धीमी हो सकती है। 9/11 के दौरान, जिस गति से बचे हुए लोग सीढ़ियों से नीचे उतरे, वह अक्सर 0.3 मीटर प्रति सेकंड से धीमी थी। यह धीमी गति ऊंचाई से नीचे उतरने पर बहुत ज्यादा बढ़ जाती है।

थकान एक और बड़ी वजह है। ज्यादा देर तक चलने से नीचे उतरने की गति काफी कम हो जाती है। घटनाओं के बाद किए गए सर्वे से पता चलता है कि ऊंची इमारतों से निकलने वाले ज्यादातर लोग कम से कम एक बार रुकते हैं। 2010 में शंघाई में एक ऊंची इमारत में लगी आग के दौरान, बचे हुए लगभग आधे बुजुर्गों ने बताया कि उनकी रफ्तार सुस्त हो गई थी। लंबी सीढ़ियां, लैंडिंग और ऊंची सीढ़ियों की बनावट, ये सभी जाम की वजह बनते हैं, खासकर तब, जब कई मंजिलों से लोगों का हुजूम एक ही जगह मिल जाता है। इनमें बुजुर्ग, शारीरिक या चलने-फिरने में परेशानी वाले लोग और एक साथ निकलने वाले समूह शामिल होते हैं। ये लोग स्वस्थ लोगों की तुलना में नीचे उतरने की कुल गति को कम कर देते हैं। इससे रुकावटें आ सकती हैं। खासतौर पर रिहायशी इमारतों में धीरे चलने वाले लोगों के कारण आने-जाने की गति में बहुत अंतर होता है।

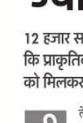

दृश्यता (विजिबिलिटी) भी मायने रखती है। प्रायोगिक अध्ययन से पता चलता है कि कम रोशनी में सीढ़ियों से नीचे उतरते समय लोगों की चाल काफी धीमी हो जाती है। इससे पता चलता है कि जब असल में धुएं से दृश्यता कम हो जाती है, तो उतरने की गति और भी धीमी हो सकती है, क्योंकि लोग हिचकिचाते हैं, कदमों का गलत अंदाजा लगाते हैं। ऊंची इमारतों को खाली कराने में देरी की सबसे बड़ी वजह इन्सानी व्यवहार है। अलार्म बजने पर लोग शायद ही कभी तुरंत सक्रिय होते हैं। वे रुकते हैं, पुष्टि करते हैं, हालात देखते हैं, सामान इकट्ठा करते हैं, या परिवार के सदस्यों से बात करते हैं। ऊंची इमारतों से निकलने के समय ये शुरुआती क्षण बेहद महत्वपूर्ण होते हैं। वर्ल्ड ट्रेड सेंटर खाली कराने के अध्ययन से पता चलता है कि लोगों ने जितने ज्यादा खतरे देखे (धुआं, कंपन, शोर), उन्होंने आगे बढ़ने से पहले उतनी ही ज्यादा जानकारी मांगी। इससे देरी होती है। लोग साथ काम करने वालों से बात करते हैं, खिड़कियों से बाहर देखते हैं, परिवार को फोन करते हैं, या किसी घोषणा का इंतजार करते हैं। साफ न दिखने वाले इशारे उन्हें और भी धीमा कर देते हैं।

आवासीय इमारतों में परिवार, पड़ोसी और दोस्तों के समूह आमतौर पर एक साथ निकलने की कोशिश करते हैं। वे इस तरह एक साथ इकट्ठा होते हैं, जिससे उतरने की रफ्तार कम हो जाती है। लेकिन हमारे अध्ययन से पता चलता है कि जब कोई समूह 'सांप' की तरह एक के पीछे एक चलता है, तो वे तेजी से चलते हैं, कम जगह घेरते हैं, और दूसरों को ज्यादा आसानी से निकलने देते हैं। यह पैटर्न ऊंची इमारतों में मायने रखता है।

बहुमंजिली इमारतों में पूरी इमारत को खाली कराने में बहुत समय लग सकता है और जिन्हें सीढ़ियां चढ़ने-उतरने में परेशानी होती है, उनके लिए ऊंची इमारतों से नीचे उतरना लगभग नामुमकिन होता है। इसीलिए कई देशों ने रिफ्यूज फ्लोर का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है-टावरों में आग और धुएं से सुरक्षित तल बनाए गए हैं, जो सुरक्षित जगह के तौर पर काम करते हैं। इनसे रुकावटें कम हो सकती हैं और लंबी लाइनों से बचा जा सकता है। ये लोगों को आराम करने, साफ सीढ़ियों पर जाने या अग्निशमन दस्ते का इंतजार करने के लिए सुरक्षित जगह देते हैं। असल में, ये उन इमारतों में सीधे उतरने को ज्यादा सुविधाजनक बनाते हैं, जहां लगातार नीचे उतरना मुमकिन नहीं है। इनके साथ इवैक्युएशन एलिवेटर भी हैं। ये लिफ्ट आग लगने पर काम करने के लिए तैयार की गई हैं, जिनमें प्रेशर वाले शाफ्ट, सुरक्षित लॉबी और बैकअप पावर होती है। इमारतों को खाली कराने का सबसे अच्छा तरीका वह है, जिसमें सीढ़ियों और लिफ्ट, दोनों का इस्तेमाल होता है, जिनका अनुपात इमारत की ऊंचाई, घनत्व और लोगों की संख्या के हिसाब से तय किया जाता है। सबक साफ है-ऊंची इमारतों से लोगों को निकालने के लिए किसी एक तरीके पर निर्भर नहीं रह सकते। सीढ़ियां, रिफ्यूज फ्लोर और सुरक्षित लिफ्ट, इन सभी का इस्तेमाल यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि ऊंची इमारतों से लोगों को निकालना ज्यादा सुरक्षित हो।

-साथ में, एरिका कुलिगोवस्की एवं रगिएरो लोवरेग्लियो (द कन्वर्सेशन से)

आपदा

इथियोपिया के ज्वालामुखी की गूंज

12 हजार साल पुराने ज्वालामुखी विस्फोट ने दिखा दिया कि प्राकृतिक आपदाओं को सीमाएं नहीं बांध सकतीं। सभी को मिलकर पर्यावरणीय समस्याओं का हल ढूंढना होगा।

बीते रविवार इथियोपिया में हुए ज्वालामुखी विस्फोट ने न केवल स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र को हिलाकर रख दिया, बल्कि इसका असर भारतीय उपमहाद्वीप पर भी महसूस हुआ। डीजीसीए की चेतावनी के बाद कुछ विमानन कंपनियों ने अपनी उड़ानें रद्द तो कर दीं, लेकिन समझना होगा कि यह खतरा केवल हवाई यात्रा तक सीमित न होकर पर्यावरण पर व्यापक असर डालने वाली घटना है। पूर्वी अफ्रीका के 'हॉर्न ऑफ अफ्रीका' में स्थित इथियोपिया, जो अपनी भौगोलिक विविधता व 'ईस्ट अफ्रीकन रिफ्ट वैली' के लिए मशहूर है, भूगर्भीय हलचलों का केंद्र बना हुआ है।

इथियोपिया और भारत के बीच विशाल अरब सागर मौजूद है। लंबी दूरी के कारण शायद यह असंभव लगे कि वहां का धुआं भारत तक पहुंचे। लेकिन, मौसम विज्ञान की भाषा में, क्षोभमंडल व समताप मंडल में चलने वाली तेज हवाएं, खासकर 'जेट स्ट्रीम्स', किसी भी प्रदूषण को एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक ले जाने में सक्षम हैं। इंडियामेटस्काई वेदर के अनुसार, यह गुबार पहले गुजरात में पश्चिम से घुसा। फिर जामनगर, राजस्थान, उत्तर-पश्चिम महाराष्ट्र, दिल्ली, हरियाणा और पंजाब की ओर तेजी से बढ़ने के बाद अब यह हिमालय और उत्तरी क्षेत्रों की ओर बढ़ रहा है। विस्फोट का मलबा समताप मंडल तक पहुंच रहा है, जहां तेज हवाएं इसे पूर्व की ओर (भारत की दिशा में) बहा ले जा रही हैं। इसका सबसे चिंताजनक पहलू सल्फर डाइऑक्साइड का उत्सर्जन है। ज्वालामुखी विस्फोट के बाद भारी मात्रा में राख, धूल और गैसें-मुख्य रूप से सल्फर डाइऑक्साइड-वायुमंडल में पहुंचती हैं। उपग्रह इमेजरी ने हाल ही में अरब सागर के ऊपर सल्फर डाइऑक्साइड के बादलों की पुष्टि की है। जब ये बादल रासायनिक क्रिया करते हैं, तो सल्फ्यूरिक एसिड के महीन कणों (एरोसोल) में बदल जाते हैं। इससे 'ज्वालामुखीय स्मॉग' या 'वोग' (वॉल्केनो स्मॉग) का निर्माण होता है। ज्वालामुखी से निकले सल्फेट एरोसोल पीएम 2.5 के स्तर को बढ़ा रहे हैं। सल्फर डाइऑक्साइड से भरपूर ये गुबार दिल्ली-एनसीआर, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के आसपास से गुजर रहे हैं। ठीक इसी समय सेन्यार चक्रवात का भी खतरा बना हुआ है और आने वाले दिनों में बारिश होना तय है। ऐसे में, अम्लीय वर्षा की आशंका बढ़ जाती है, खासकर सुंदरबन और पश्चिमी घाट में, जो अपनी जैव विविधता के लिए प्रसिद्ध हैं। यह घटना भारतीय मानसून को भी प्रभावित कर सकती है। इसे 'एरोसोल डिमिंग' या 'सोलर डिमिंग' कहा जाता है। ज्वालामुखी की राख और सल्फेट एरोसोल सूर्य की किरणों को वापस अंतरिक्ष में भेज देते हैं। इससे ठंड तो बढ़ती ही है, मानसून भी कमजोर होता है। भारतीय मानसून जमीन व समुद्र के तापमान के अंतर पर निर्भर करता है। यदि एरोसोल के कारण भारतीय भू-भाग ठंडा हो जाता है, तो अरब सागर से आने वाली नम हवाएं कमजोर पड़ सकती हैं। इसका असर खरीफ की फसलों व खाद्य सुरक्षा पर पड़ सकता है। बड़े ज्वालामुखी विस्फोटों, जैसे 1991 में माउंट पिनातुबो, के बाद वैश्विक तापमान में कमी व वर्षा पैटर्न में बदलाव देखा गया है। ज्वालामुखी से उत्पन्न सूक्ष्म कण श्वास नली के जरिये फेफड़ों में जा सकते हैं। इससे अस्थमा, ब्रोंकाइटिस और अन्य श्वसन संबंधी बीमारियां बढ़ सकती हैं, खासकर बुजुर्गों व बच्चों में।

पंकज चतुर्वेदी

भारत सरकार व मौसम विभाग को वायु गुणवत्ता की निरंतर निगरानी करनी चाहिए। यह घटना हमें जीवाश्म ईंधन के अलावा प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले जलवायु परिवर्तन के प्रति भी आगाह करती है। प्रकृति जब करवट लेती है, तो उसका असर पूरी दुनिया पर होता है, और हमें इसके लिए तैयार रहना होगा।

edit@amarujala.com

चालीस का पड़ाव युवाओं के लिए वृद्धावस्था की उम्र है, जबकि पचास में बुजुर्गों की जवानी शुरू होती है। -विक्टर ह्यूगो

नए दरवाजे खोलने का समय

उम्र बढ़ना दरवाजों के बंद होने की नहीं, बल्कि नए दरवाजे खोलने की प्रक्रिया है। जिंदगी में किसी चीज का अंत नहीं होता, सिर्फ बदलाव होता है और उसी में जीवन की सबसे चमकदार रोशनी छिपी होती है।

जब हम जवान होते हैं, तब हमें हमेशा लगता है कि असली जिंदगी अभी शुरू ही नहीं हुई है। हम सोचते रहते हैं कि असली जिंदगी अगले हफ्ते, अगले महीने, अगले साल, या फिर किसी लंबी छुट्टी के बाद शुरू होगी। और इसी इंतजार में आधी से ज्यादा उम्र निकल जाती है। फिर एक दिन अचानक महसूस होता है कि हम तो ताउम्र यही सोचते रह गए, लेकिन वह 'सही वाली जिंदगी' तो कभी आई ही नहीं। तब मन पूछता है, जो समय बीत गया, वह बेचैनी, वह सपनों के पीछे दौड़ना, वह भागमभाग, आखिर था क्या?

डगलस कूपलैंड

मुड़-मुड़ के देख

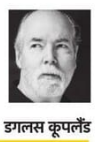

बचपन से बताया जाता है कि हमें जिंदगी में कई कॅरिअर बदलने पड़ेंगे, लेकिन कोई यह नहीं बताता कि उनके साथ हम नए इन्सान भी बनेंगे। हम हर मोड़ पर बदलेंगे, टूटेंगे, और फिर नए रूप में तैयार होंगे। बीस की उम्र में लगता है कि हम कुछ नहीं बन पाएंगे, पच्चीस में लगता है कि कुछ बड़ा करना हमारे बस की बात नहीं, और तीस आते-आते एहसास होने लगता है कि सफलता तो छोड़ो, क्या असली संतोष भी मिल पाएगा? पैंतीस के पड़ाव पर हम सोचते हैं कि अब सब तय हो चुका है, और यही हमारी किस्मत है, और हम परिस्थितियों से समझौता कर लेते हैं।

पर सच तो यह है कि इन्सान को लंबी उम्र इसलिए मिलती है कि वह हरदम सीखता रहे, बदलता रहे, और विकास करता रहे। यदि सीखना बंद कर दें, तो कहानी पचपन या शायद उससे पहले ही खत्म हो जाए। पर जिसने सीखते रहना चुना, वह वास्तव में कभी वृद्ध नहीं होता।

पचपन और पचहत्तर की उम्र में फर्क सिर्फ समय का नहीं, बल्कि उन नई चीजों का भी है, जो हमने खुद में जोड़ीं, उन अनुभवों का है, जो हमने जुटाए, उन रिश्तों का है, जिन्हें हमने कमाया। यही तो जीवन है। जीवन के हर दशक में एक नई पारी शुरू होती है। उम्र बढ़ना दरवाजों के बंद होने की नहीं, बल्कि नए दरवाजे खोलने की प्रक्रिया है। जिंदगी में किसी चीज का अंत नहीं होता, सिर्फ बदलाव होता है। और उसी में जीवन की सबसे चमकदार रोशनी छिपी है।

दूसरी पारी

भरोसा रखें, बच्चे उतने भी नादान नहीं होते

मेरठ की उमा देवी को अपने पोते की धार्मिक परवरिश संबंधी दुविधा पर मनोवैज्ञानिक नीलकंठ ने दी यह सलाह-

मेरी बहू नास्तिक है, वह ईश्वर को नहीं मानती, लेकिन मैं अपने पोते को पारिवारिक रीति-रिवाजों और ईश्वर के बारे में बताना चाहती हूं, क्या मेरा ऐसा करना ठीक रहेगा?

मुझे लगता है कि आपके पोते के साथ आपका रिश्ता बिल्कुल वैसा ही होगा, जैसा आमतौर पर दादा-दादी का रिश्ता होता है- कुछ अलग, कुछ खास और मधुर। दादा-दादी सिर्फ अभिभावक नहीं होते, बल्कि वे अलग-अलग नजरिये, अलग-अलग कहानियां, अलग-अलग इतिहास और जीने के अलग-अलग तरीके लेकर आते हैं।

जिस तरह आपको ईश्वर को मानने का हक है, उसी तरह आपकी बहू को भी भगवान को नहीं मानने का हक है। यह कोई समस्या नहीं है, जिसका समाधान तलाशा जाए। आप बस दो अलग-अलग सोच वाले लोग हैं, और आपका पोता खुशकिस्मत है कि वह आप दोनों के साथ बड़ा हो रहा है।

मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूं, क्योंकि बच्चे इतने नादान नहीं होते कि दो विरोधाभासी चीजों को देखकर टूट जाएं। आपका पोता सीखेगा कि दादी भगवान में विश्वास करती हैं और प्रार्थना करती हैं, और उसके माता-पिता भगवान में विश्वास नहीं करते और प्रार्थना नहीं करते। वह देखेगा कि कुछ लोग मंदिर जाते हैं और कुछ नहीं। कुछ लोग भजन गाते हैं और कुछ नहीं। सबसे जरूरी बात है कि वह सीखेगा कि जिन लोगों से वह प्यार करता है, वे दुनिया को अलग-अलग तरह से देख सकते हैं और फिर भी एक-दूसरे से प्यार कर सकते हैं। बच्चे आखिर में इसी तरह अपनी सोच बनाते हैं: अलग-

अलग विचारों के संपर्क में आकर, सवाल पूछकर और यह देखकर कि उनकी जिंदगी में बड़े लोग कैसे अलग-अलग राय रखते हैं। समय के साथ, वह समझ जाएगा कि उसे क्या पसंद है।

बच्चे अपने माता-पिता या अभिभावकों के वैचारिक प्रतिच्छवि (क्लोन) नहीं होते। इसलिए आप यदि चाहती हैं कि पारिवारिक रीति-रिवाजों, अपनी संस्कृति और अपने धर्म-परंपराओं का ज्ञान आपके पोते को हो, तो आप अपने बेटे एवं बहू से बात कर सकती हैं। परिवार तो ऐसा होना चाहिए, जहां अलग-अलग मान्यताओं को न सिर्फ इजाजत दी जाए, बल्कि उनका सम्मान भी किया जाए। आपका पोता जब बड़ा होगा, तो वह अपनी इच्छानुसार धार्मिकता के बारे में फैसला ले सकेगा।

अंततः आपके पोते को यही याद रहेगा कि उसकी दादी उसके साथ सच्ची थीं, जो उसके दिल को छू लेने वाले गाने गाती थीं, उन परंपराओं में शामिल होती थीं, जिनसे उन्हें खुशी मिलती थी, अपनापन और प्यार देती थीं, और उसे दिखाती थीं कि किसी चीज पर गहराई से विश्वास करते हुए भी उन लोगों से प्यार करना मुमकिन है, जो अलग तरह से विश्वास करते हैं।

*जिंदगी की **दूसरी पारी** बहुत महत्वपूर्ण होती है। हर शुक्रवार इस पर आपको नया पढ़ने को मिलेगा। आप अपने विचार, अनुभव या समस्याएं edit@amarujala.com पर भेज सकते हैं, विशेषज्ञों की मदद से हम कोशिश करेंगे कि संवाद का पुल बन सके।*

देर से शुरुआत, कुछ न करने से बेहतर है

81 साल की उम्र में जहां अधिकतर बुजुर्ग अपनी रफ्तार धीमी कर देते हैं, वहीं विविएन ट्रुरन दुनिया को यह दिखा रही हैं कि देर से शुरुआत करना कुछ नया शुरू न करने से कहीं बेहतर है। वह इस बात की जीती-जागती मिसाल हैं कि आपकी ऊर्जा, आपका दृष्टिकोण और आपके सपने ही आपकी असली उम्र तय करते हैं। उनकी जीवनशैली का मंत्र है कि जब तक दिल धड़क रहा है, तब तक जीवन का हर पल नया है। विविएन कार्डिफ की 81 वर्षीय कंटेंट क्रिएटर हैं, जो इंस्टाग्राम और टिकटॉक पर अपने कपड़ों, चश्मों और आत्मविश्वास भरी मुस्कान के माध्यम से संदेश देती हैं कि शरीर बूढ़ा हो सकता है, लेकिन स्टाइल, हिम्मत, जिज्ञासा और कुछ नया करने का जुनून हमेशा जवान रहता है। सोशल मीडिया पर उनके करीब तीन लाख फॉलोअर्स हैं और उनके वीडियो पर लाखों व्यूज आते हैं। वह सिल्वर इन्फ्लुएंसर के रूप में मशहूर हैं। विविएन का उदाहरण इस बात का प्रमाण है कि 80 पार करके भी आप खुद को व्यक्त कर सकते हैं, खुद को बदल सकते हैं, और दूसरों को प्रेरित कर सकते हैं।

वरिष्ठ नागरिकों के

काम की संस्थाएं

- *इंपीरियल सर्विस डेवलपमेंट सोसाइटी (आईएसडीएस)* एक गैर-लाभकारी संगठन है, जो बुजुर्गों को मेडिकल केयर जैसी मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराकर उनकी मदद करता है। यह वृद्धाश्रमों में जरूरतमंद बुजुर्गों को वॉकिंग स्टिक्स, व्हीलचेयर और ऑक्सीमीटर जैसी जरूरी चीजें उपलब्ध कराता है। अधिक जानकारी के लिए इसकी आधिकारिक वेबसाइट www.isdsngoindia.org/old-age-ngo.php या 9717973878 पर संपर्क कर सकते हैं।
- *नित्या फाउंडेशन* गांवों और झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले वृद्धजनों के लिए कैंप लगाकर मेडिकल सेवाएं प्रदान करता है। इसमें खून, रक्तचाप (बीपी) व मधुमेह आदि की जांच की जाती है तथा खाने के लिए नाश्ते का प्रबंध भी किया जाता है। यह बुजुर्गों की समस्याओं को सुनकर उन्हें उचित अधिकारियों तक पहुंचाने का काम करता है, ताकि समस्या का वक्त रहते बेहतर समाधान मिल सके। अधिक जानकारी के लिए इसकी आधिकारिक वेबसाइट www.nityango.org/old-age या 9818885691 पर संपर्क कर सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

अमेरिका और आतंक

वॉशिंगटन डीसी में व्हाइट हाउस के पास दो अमेरिकी नेशनल गार्ड पर गोलियों की वर्षा बहुत दुखद और चिंताजनक है। अमेरिकी प्रशासन ने इसे आतंकी हमला करार दिया है। इस हमले से अमेरिका में चिंता की लहर है। राष्ट्रपति ट्रंप ने इसके लिए अफगानिस्तान की तालिबान सरकार को घेरा है, तो तालिबान सरकार ने इसके लिए पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आईएसआई को जिम्मेदार ठहरा दिया है। मतलब, दोष या जिम्मेदारी टालने की कवायद तेज हो गई है। सुरक्षा गार्डों पर गोली चलाने वाले अफगानी नागरिक को गिरफ्तार कर लिया गया है। अब पूछताछ से ही यह स्पष्ट होगा कि इस हमले के पीछे केवल एक आतंकी का हाथ है या कोई पूरा संगठन है। पहली नजर में यह बहुत बड़ी घटना नहीं लगती, पर अमेरिका ने इसे बहुत गंभीरता से लिया है, तो यह अच्छी बात है। अब अमेरिकी सुरक्षा एजेंसियों को इस मामले की तह में जाना चाहिए। पूरी ईमानदारी से देखना चाहिए कि आतंक की नई आग कहां से सुलग रही है और इसे कैसे शांत किया जाए?

हालांकि, यह वाकई चिंतन का विषय है कि अमेरिका में अफगानी नागरिक क्या कर रहे हैं? यह अफगानी हमलावर भी अमेरिकियों की मदद से ही अफगानिस्तान से बाहर निकला है। यह हमलावर पूर्व में सीआईए या अमेरिकी सेना का सहयोगी था। अमेरिकी फौज जब अफगानिस्तान से आनन-फानन में भागी, तब अमेरिका के सहयोगी रहे अफगानिस्तानियों पर शामत आ गई। इस हमलावर पर भी शामत आई थी और वह साल 2021 में अमेरिका आ गया। अमेरिकी प्रशासन उसे लेकर आया, पर उसे अभी तक अमेरिकी नागरिकता नहीं मिली है। पचास हजार से ज्यादा अफगानी तब आए थे, लेकिन उनमें से ज्यादातर अब भी उपेक्षित हैं। नतीजा यह कि अमेरिका में फंसे अफगानी नाना प्रकार की समस्याओं का सामना कर रहे हैं। हालांकि, ऐसे में भी हमलावर से कोई सहानुभूति नहीं हो सकती। अब अमेरिका में मौजूद तमाम अफगानियों के साथ कड़ाई शुरू हो जाएगी। अमेरिका का आतंकवाद के खिलाफ लड़ना जरूरी है, लेकिन उसे सोलह आना ईमानदार होना पड़ेगा। ऐसा हो नहीं सकता कि दुनिया में अनेक देशों में आतंकवाद हो और अमेरिका अछूता रह जाए।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अमेरिका को आतंकवाद के खिलाफ चल रही वैश्विक लड़ाई का नेतृत्व करना चाहिए, ताकि आतंक का अंत हो। अमेरिका क्या ऐसा कर रहा है?

कोई संदेह नहीं, अमेरिका को आतंकवाद के खिलाफ चल रही लड़ाई का नेतृत्व करना चाहिए। अमेरिका क्या ऐसा कर रहा है? अफसोस की बात है, अमेरिका ने अफगानिस्तान में हस्तक्षेप तो किया, पर समस्या का समाधान नहीं कर पाया। दूसरी ओर, पाकिस्तान के साथ अमेरिकी प्रशासन की जो इन दिनों करीबी बढ़ी है, उससे खुद पाकिस्तान को आतंकवाद के स्तर पर कोई लाभ नहीं हुआ है। वहां भी आतंकी हमले हो रहे हैं। ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि ये देश आतंकवाद के खिलाफ ईमानदार नहीं हैं। नतीजा यह कि हाल के वर्षों में अमेरिका में आतंकी हमलों व साजिशों में वृद्धि हुई है। बीते 10 सितंबर को 'टर्निंग पॉइंट यूएसए' के सह-संस्थापक चार्ली किर्क की हत्या एक दुखद मिसाल है। क्या अमेरिका में राजनीतिक हत्याओं की वापसी हो रही है? बेशक, आतंकी समूह- अल कायदा और इस्लामिक स्टेट को अमेरिका ने कमजोर कर दिया है, लेकिन आतंकी संगठनों के समूल विनाश का काम अभी बाकी है। अमेरिका में किसी एक हमले को 'हम सब पर हमला' बताने की आदत अच्छी है, पर काश, अमेरिका अपनी वैश्विक जिम्मेदारियों को भी समझे। अगर वह ऐसा करेगा, तो दुनिया में सच्चे अर्थों में आतंक के खिलाफ लड़ाई शुरू होगी।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 28 नवंबर, 1950

रक्तपात बन्द किया जाये

विचारशील लोगों का यह ख्याल बनता जा रहा है कि कोरिया में अनावश्यक तौर पर रक्तपात को जारी रखा जा रहा है, जबकि उसे बन्द करके शांतिपूर्ण तरीकों से समस्या को हल किया जा सकता है। अमरीका संयुक्त राष्ट्र संघ के नाम पर कोरिया में जिस नीति का अनुसरण कर रहा है, उसके आलोचकों की संख्या बढ़ गई है। स्वयं ब्रिटिश लोकसभा के मजदूर सदस्यों में एक वर्ग ऐसा उत्पन्न हो गया है, जो यह महसूस करने लगा है कि ब्रिटेन को अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अमरीका का पिछलग्गू मात्र बनकर नहीं रहना चाहिए, बल्कि विश्व-शांति की रक्षा के लिए अपनी ओर से पहल करनी चाहिए। ब्रिटेन के विदेश मंत्री मि. बेविन की मौजूदा विदेश नीति से असंतुष्ट मजदूर सदस्यों की संख्या 80 जितनी पहुंच चुकी है। एक प्रस्ताव ब्रिटिश लोकसभा में इस आशय का पेश किया जाने वाला है कि कोरिया में संयुक्त राष्ट्रीय सेनाओं का आगे बढ़ना अब रोक दिया जाये। ब्रिटेन के एक वामपक्षी समाचार-पत्र 'न्यू स्टेट्समैन ऐंड नेशन' ने लिखा है कि ब्रिटिश सरकार को कोरिया में संयुक्त राष्ट्रीय सेनाओं को एक रक्षात्मक पंक्ति पर हटाने की मांग करनी चाहिए और यदि जरूरी हो तो इस मांग को मनवाने के लिए अंग्रेजी फौजों को कोरिया से हटा लेने की धमकी देने से भी संकोच नहीं करना बाहिए। पत्र ने चीन की सीमा और संयुक्त राष्ट्रीय सेना के बीच एक मध्यवर्ती प्रदेश बनाने की हिमायत की है। इस प्रकार के मध्यवर्ती प्रदेश की रचना का सुझाव पिछले कुछ समय से चर्चा का विषय बना हुआ है। चीन की सरकार का एक प्रतिनिधि-मंडल लेकसक्सेस पहुंच चुका है और यह आशा की जाती थी कि उसके साथ चर्चा करके कोरिया की लड़ाई को समाप्त करने का कोई रास्ता निकाला जायेगा।

हुआ इसके विपरीत ही। जिस दिन चीन का प्रतिनिधि-मंडल लेकसक्सेस पहुंचा, उसी दिन कोरिया में संयुक्त राष्ट्रीय सेनाओं ने मंचूरिया की समस्त सीमा पर पहुंचने के लिए बड़ा आक्रमण शुरू किया। इसमें एक लाख सेनायें हिस्सा ले रही हैं। जनरल मैकार्थर इस आक्रमण के प्रारम्भ को देखने के लिये स्वयं मोर्चे पर गये थे। उनके सदर मुकाम से प्रकाशित विज्ञप्ति में यह कहा गया कि यह आक्रमण यदि सफल हो गया तो कोरिया के युद्ध को प्रायः समाप्त कर देगा और कोरिया में शांति और एकता की स्थापना हो जायेगी।

आदिवासियों को अब जवाब दें माओवादी

आदिवासियों की बर्बादी के लिए क्यों न माओवादियों को जवाबदेह ठहराया जाए? आदिवासी समाज ने न सिर्फ अपने लोगों को खोया है, बल्कि एक लंबा वक्त भी गंवाया है।

यहां स्कैन करें

शशांक रंजन | पूर्व कर्नल व आंतरिक सुरक्षा विशेषज्ञ

माओवादी विद्रोह अपने आखिरी गढ़ दंडकारण्य के आदिवासी इलाकों में भी खत्म हो रहा है। माओवादी नेतृत्व के एक बड़े हिस्से ने हाल ही में मीडिया में बयान जारी करके लोगों से माफी मांगी है और कहा है कि क्रांति की प्रक्रिया में माओवादी नेतृत्व ने कई रणनीतिक गलतियां कीं। निस्संदेह, दंडकारण्य में करीब आधी सदी से चल रही माओवादी कार्रवाई और आदिवासियों की 'भलाई' के कामों का रिपोर्ट कार्ड काफी खराब है। यह माओवादियों द्वारा अपनी कुत्सित मंशा के लिए आदिवासियों की उम्मीदों से फायदा उठाने जैसा रहा।

दरअसल, आंध्र प्रदेश में सफलता न मिल पाने के बाद, माओवादी काडर 1980 के दशक की शुरुआत में दंडकारण्य में घुसे थे। उनका मकसद एक सुरक्षित ठिकाना हासिल करना था, न कि अपने राजनीतिक संघर्ष में स्थानीय आदिवासी आबादी को शामिल करना। चूंकि आंध्र प्रदेश में हालात फिर कभी उनके अनुकूल नहीं हुए, इसलिए उन्होंने दंडकारण्य में ही रहने का मन बनाया। इसके बाद उन्होंने आदिवासियों से जुड़े मुद्दों को उठाना शुरू किया, क्योंकि वे गुजारे के लिए स्थानीय आदिवासी समाज का समर्थन चाहते थे।

उन्होंने पहला मुद्दा तेंदू पत्ता की मजदूरी का उठाया। तेंदू पेड़ के पत्ते, जिसका इस्तेमाल बीड़ी बनाने में होता है, जमा करने के लिए ठेकेदार आदिवासियों को मजदूरी देते हैं। लिहाजा, माओवादी अच्छी मजदूरी के लिए मोल-भाव करने लगे। यह उनके हित में था, क्योंकि स्थानीय आदिवासियों की रोजी-रोटी इसी तेंदू पत्ते पर निर्भर थी। हालांकि, इसके साथ ही उन्होंने तेंदू ठेकेदारों से जबरन वसूली भी शुरू कर दी, जिसका नकारात्मक असर यह हुआ कि आदिवासियों की कमाई कम हो गई। माओवादियों ने इलाके में काम कर रही खनन कंपनियों से भी आहिस्ता-आहिस्ता वसूली शुरू कर दी। इस दौरान, वह अपना ज्यादातर समय संगठन चलाने, हमले करने और काडर तैयार करने में लगाते रहे, जिसके कारण आदिवासियों के लिए लड़ने के

अपने मूल वायदे से वे भटक गए।

माओवादी कई तरह से उगाही करते थे। वे सुरक्षा देने के नाम पर, वसूली करके, फिरौती मांगकर और दूसरे कामों से अच्छी-खासी कमाई करने लगे। कहा जाता है कि इस आमदनी का कमोबेश आधा हिस्सा लड़ाकों को तैयार करने और उनकी क्षमता बढ़ाने में खर्च किया जाता था। जाहिर है, ये काम विकास के अन्य एजेंडे की कीमत पर किए जाते रहे। अब क्रांति के नाम पर प्राथमिकताएं तय की जाने लगी थीं।

माओवादी भारत में लोकतांत्रिक राजनीति को खत्म करने की सोच रखते हैं। वे लोकतांत्रिक कामों को नकारने और कमजोर करने का काम करते हैं, जबकि इनसे हाशिये के लोगों को ताकत ही मिलती है। आदिवासी समाज को चुनावों का बहिष्कार करने के लिए उकसाकर माओवादी आम लोगों को अपनी ताकत का इस्तेमाल करने और इसे दिखाने के एक बड़े मौके से वंचित करते रहे। इसी तरह, वे आमतौर पर स्थानीय चुनावों और ग्राम संस्थाओं (ग्राम सभा आदि) के कामों को भी नियंत्रित करने में जुट गए, ताकि उनकी अपनी जरूरतों की पूर्ति हो सके। बेशक, ग्राम सभा को ताकतवर बनाने के मामले में सरकार का रिकॉर्ड भी बहुत अच्छा नहीं रहा है, लेकिन माओवादी भी अपने कामों को लेकर पारदर्शी नहीं रहे। अलबत्ता, वे अपने नियंत्रण वाले इलाकों में कंगारू कोर्ट के जरिये राज करना पसंद करते थे।

आदिवासी माओवादी संगठनों की रीढ़ रहे हैं। भले ही इन संगठनों के नेतृत्व में अमूमन गैर-आदिवासी और पढ़े-लिखे पृष्ठभूमि के लोग रहे, लेकिन आम लड़ाकों में ज्यादातर आदिवासी ही हैं। आज भी यहां के संगठन में नीतियां बनाने वाले पदों पर आंध्र प्रदेश के गैर-आदिवासी काबिज रहे हैं, जबकि काडर की जिम्मेदारी आदिवासियों के कंधों पर रही है। नेताओं का यही खास वर्ग आजकल खबरों में है, फिर चाहे वह बसवराजू हो, वेणुगोपाल राव हो, रूपेश, भास्कर, देवूजी या चंद्रन्ना हो। हां, हाल ही में जिस माओवादी नेता मादवी हिडमा को मार गिराया गया है, वह बेशक आदिवासी था, लेकिन उसे अपवाद ही मानना चाहिए। इन माओवादी नेताओं के पास आदिवासियों का एक बड़ा समूह था और वे इस बात को लेकर दृढ़ थे कि सरकार के खिलाफ लड़ाई आखिरी आदिवासी तक जारी रहेगी।

दुर्भाग्य से, इस संघर्ष ने आदिवासी समाज को ही हथियार बना दिया। अब डिस्ट्रिक्ट रिजर्व गार्ड (डीआरजी) या बस्तरिया बटालियन का हिस्सा बनकर आदिवासी अपने उन्हीं भाइयों को मार रहे हैं, जो माओवादियों के साथ हैं। इस सबमें कोई भी आदिवासियों से यह जानने की कोशिश नहीं कर रहा कि आखिर वे क्या सोचते हैं? जाहिर है, आदिवासियों के लिए मध्यमार्ग की स्थिति लगातार सिकुड़ रही है। वे या तो माओवादियों के खेमे में डाल दिए गए हैं या फिर सरकार के खेमे में, जबकि उनका इस अतिवादी विचारधारा से कोई लेना-देना नहीं है। उन्हें तो अपने जल, जंगल और जमीन की रक्षा के लिए इस विद्रोह में शामिल होने का लालच दिया गया था, जिसका खामियाजा उन्होंने तकलीफें सहकर, घर-बार छोड़कर और विकास-कार्यों से दूर रहकर भुगता है।

मीडिया खबरों के मुताबिक, पिछले 25 वर्षों में छत्तीसगढ़ में माओवादियों और सुरक्षा बलों के संघर्ष के 3,404 मामले सामने आए हैं, जिनमें 1,541 माओवादियों, 1,315 सुरक्षा बल के जवानों और 1,817 आम नागरिकों की जान गई है। इन आम नागरिकों में ज्यादातर आदिवासी ही हैं। यह आंकड़ा आदिवासियों के उजड़े हुए परिवारों और जले हुए गांवों की कहानी बयां करता है। हालांकि, तबाही की इस घिनौनी तस्वीर के पीछे शासन तंत्र की गलती को नजरंदाज नहीं किया जा सकता, लेकिन लोकतांत्रिक व्यवस्था में माओवादी सोच के औचित्य की भी संजीदगी से पड़ताल आवश्यक है। क्यों नहीं माओवादियों को आदिवासी समाज की इस बर्बादी के लिए जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए, जिनके कारण उसने न सिर्फ अपने लोगों को खोया है, बल्कि इतना लंबा वक्त भी गंवाया है? उनके साथ यह सब क्रांति के भ्रम को बनाए रखने के लिए किया गया।

इतिहास माओवादियों को कैसे याद रखेगा, इसका ठीक-ठीक जवाब दे पाना तो फिलहाल जल्दबाजी होगी, मगर यह भी एक सच्चाई है कि अगर वे नहीं होते, तो बस्तर और दंडकारण्य के अंदरूनी इलाकों पर इस कदर ध्यान भी नहीं जाता।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नए श्रम सुधारों से बढ़ाई जाए श्रमिकों की सुरक्षा

यहां स्कैन करें

नवीन कुमार श्रीवास्तव | श्रम विशेषज्ञ व प्रोफेसर, बिमटेक

बीते शुक्रवार को भारत ने अपने श्रम कानूनों के इतिहास में एक नया अध्याय लिखा। केंद्र सरकार ने इस दिन से चार श्रम संहिताओं को लागू कर दिया। इसे आजादी के बाद के सबसे महत्वपूर्ण और व्यापक श्रम सुधारों में से एक माना जा रहा है। यह कदम 29 पुराने केंद्रीय श्रम कानूनों को साथ लाकर एक सरल, भविष्योन्मुखी ढांचा तैयार करता है। जाहिर है, इसका मुख्य उद्देश्य करोड़ों श्रमिकों, खासकर असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को व्यापक सुरक्षा प्रदान करना, उनके वेतन का समय पर भुगतान सुनिश्चित करना और भारत को वैश्विक मानकों के अनुरूप लाना है।

अब तक 1930 और 1950 के दशक में बने श्रम कानूनों के तहत देश काम करता रहा है। ये नियम एक ऐसे युग के लिए बनाए गए थे, जिसमें डिजिटल क्रांति, गिग इकोनॉमी और वैश्वीकरण जैसी अवधारणाएं अस्तित्व में नहीं थीं। टुकड़ों में बंटे नियमों के कारण इनके अनुपालन में जटिलताएं, पुरानी प्रणालियां और औपचारिक क्षेत्र के बाहर के कामगारों के लिए सीमित सुरक्षा जैसी समस्याएं आम थीं। नई श्रम संहिताएं इस जटिल ढांचे को एक समान, आधुनिक कानूनी ढांचे से बदलती हैं, जिससे एक 'सुरक्षित भविष्य के लिए तैयार श्रमबल और लचीले उद्योग' का निर्माण हो सके। यह परिवर्तन भारत को वैश्विक मानकों की कतार में खड़ा करता है और उन कामगारों तक लाभ को विस्तार देता है, जो पहले असुरक्षित थे।

यह देखना महत्वपूर्ण होगा कि सरकार गिग श्रमिकों के सामाजिक सुरक्षा कोष का सही तरीके से प्रबंधन करा पाती है या नहीं?

वेतन संहिता, 2019 न्यूनतम वेतन, बोनस और वेतन भुगतान के समय से संबंधित कानूनों को एक साथ लाती है। इसका मकसद सभी कर्मचारियों के लिए समय पर न्यूनतम वेतन का भुगतान सुनिश्चित करना है। औद्योगिक संबंध संहिता, 2020 में मजदूर संगठनों, औद्योगिक विवाद, छंटनी और हड़ताल जैसे मुद्दों को शामिल किया गया है। इसका लक्ष्य औद्योगिक संबंधों को सरल बनाना और विवादों का तेजी से समाधान करना है।

सामाजिक सुरक्षा संहिता, 2020 पीएफ, ग्रेच्युटी, मातृत्व-अवकाश और बीमा जैसी सामाजिक सुरक्षा योजनाओं को एक मंच पर लाती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता गिग और प्लेटफॉर्म कामगारों को सामाजिक सुरक्षा के दायरे में लाना है, तो व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य और कार्य शर्त संहिता, 2020 कार्यस्थलों की सुरक्षा, स्वास्थ्य मानकों व काम के घंटों से संबंधित है। इसका लक्ष्य सभी कामगारों के लिए काम का सुरक्षित और स्वस्थ माहौल बनाना है।

इन संहिताओं की सबसे क्रांतिकारी विशेषता यह है कि पहली बार गिग व प्लेटफॉर्म कामगारों (जैसे ओला, उबर, स्विगी, जोमैटो के ड्राइवर व डिलीवरी पार्टनर) एवं एग्रीगेटरों (कंपनियों) को कानूनी रूप से परिभाषित किया गया है। इससे लाखों कामगार सामाजिक सुरक्षा के दायरे में आ गए हैं। अब कंपनियों के लिए अपने सालाना कारोबार का दो प्रतिशत सामाजिक सुरक्षा कोष में योगदान करना अनिवार्य होगा। नई श्रम संहिताओं ने श्रम-बल में महिलाओं के अधिकारों, सुरक्षा व अवसरों को काफी विस्तार दिया है। समान काम के लिए समान वेतन का प्रावधान तो इसमें है ही, अब सहमति व सुरक्षा प्रोटोकॉल के साथ महिलाओं को रात की पाली में और सभी श्रेणी की नौकरियों में काम करने की अनुमति है।

वैसे, इन नियमों को लागू करने में चुनौतियां आएंगी। एक ओर, गिग श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा, डिस्कनेक्ट करने का अधिकार, यानी निर्धारित घंटों से इतर समय में किसी प्रतिक्रिया से इनकार करने का अधिकार व कौशल विकास जैसे कदम श्रमिकों के हित में हैं, तो वहीं छंटनी के नियमों में ढील देना नौकरी की सुरक्षा को लेकर सवाल खड़े करता है। सरकार को हितधारकों के साथ नियमों और योजनाओं को अंतिम रूप देते समय परामर्श करना जारी रखना होगा।

इन कानूनों की सार्थकता उनके क्रियान्वयन में निहित है। यह देखना अहम होगा कि कंपनियां 'डिस्कनेक्ट करने के अधिकार' का पालन करती हैं या नहीं, और सरकार गिग श्रमिकों के सामाजिक सुरक्षा कोष का सही तरीके से प्रबंधन करती है या नहीं? इन बदलावों को सफल बनाने के लिए सरकार, उद्योग मंडल और श्रमिक संघों के बीच लगातार संवाद आवश्यक होगा।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

अच्छे-बुरे को खुद परखें

एक बादशाह ने दो गुलाम खरीदे। दोनों दोस्त थे। बादशाह ने दोनों गुलामों की परीक्षा लेने का फैसला किया। एक से बातचीत की, तो वह बड़ा बुद्धिमान और मीठा बोलने वाला मालूम हुआ। जब उसकी परीक्षा ले चुका, तो उसे नहा-धोकर फिर से आने को कह बादशाह ने दूसरे गुलाम को बुलाया। दूसरे गुलाम का भद्दा चेहरा देखकर बादशाह खुश नहीं हुआ, परंतु वह उसकी योग्यता परखने लगा। उसने दूसरे गुलाम से कहा, 'तू अकेला सौ गुलामों के बराबर है, ऐसा मालूम तो नहीं होता और तुम्हारे बारे में जो कुछ तेरे साथी ने बताया है, उसे सुनकर तो हम तुम्हें लेकर बिल्कुल निराश हो गए हैं।'

गुलाम ने जवाब दिया, 'जहांपनाह, वह बड़ा सच्चा आदमी है। वह स्वभाव से सत्यवादी है। इसलिए उसने जो कुछ मेरे में बारे में कहा है, यदि मैं वैसा ही उसके बारे में कहूं, तो झूठा दोष लगाना होगा। बादशाह सलामत! मुमकिन है कि वह मुझमें जो ऐब देखता है, वह मुझे शायद खुद से न दिखते हों?' बादशाह ने कहा, 'तू उसके अवगुणों का बखान कर, जैसा कि उसने तेरे दोषों का किया है, ताकि मुझे यकीन हो सके कि तू मेरा हितैषी है और शासन के प्रबंध में मेरी सहायता कर सकता है।'

दूसरा गुलाम बोला, 'बादशाह सलामत! उसमें नम्रता और सच्चाई है। वीरता व उदारता भी ऐसी है कि मौका पड़ने पर प्राण तक न्योछावर कर सकता है। वह अभिमानी नहीं है और स्वयं ही अपने अवगुण प्रकट कर देता है। वह दूसरों के लिए अच्छा और अपने लिए बुरा है।' बादशाह ने कहा, 'अपने साथी की प्रशंसा में अति न करो, क्योंकि अगर मैंने उसे तुम्हारे सामने बुला दिया, तो तुझको लज्जित होना पड़ेगा।' दूसरे गुलाम ने कहा, 'हुजूर, अपने मित्र के बारे में मैं जो जानता हूं, यदि उस पर आपको यकीन नहीं, तो मैं और क्या ही कहूं!'

बादशाह ने कुरूप गुलाम की अच्छी तरह परीक्षा कर ली, तो उसे भेजकर सुदर्शन चेहरे वाले पहले गुलाम को बुलाया और कहा, 'मालूम नहीं, तेरे साथी को क्या हो गया था कि उसने पीठ-पीछे तेरी बुराई की!' पहले गुलाम ने पूछा, 'जहांपनाह! उसने क्या कुछ कहा, उसका जरा-सा संकेत तो मुझे मिलना चाहिए?'

बादशाह ने कहा, 'सबसे पहले तुम्हारे दोगलेपन का

बादशाह ने पहले गुलाम को रोकते हुए कहा, बस, हद हो गई। उसका सिर्फ चेहरा सुदर्शन नहीं, तेरी तो आत्मा गंदी है। तू दूर बैठ। वही गुलाम अधिकारी बनेगा, तू अब से उसके अधीन रहेगा।

जिक्र किया कि तू प्रकट में दवा और परोक्ष में दर्द है।' यह सुनते ही पहला गुलाम भड़क उठा। वह अपने साथी की बुराइयां करता ही चला गया। थोड़ी देर में बादशाह ने उसे रोकते हुए कहा, बस, हद हो गई। उसका सिर्फ चेहरा सुदर्शन नहीं, तेरी तो आत्मा गंदी है। तू दूर बैठ। वह गुलाम ही अधिकारी बनेगा और तू अब से उसके अधीन रहेगा।

लुभावना रूप होते हुए भी यदि मनुष्य अवगुणों से भरा हो, तो उसका कभी मान नहीं हो सकता और चरित्रवान कुरूप के चरणों में बैठना भी श्रेष्ठकर है।

रूमी

ओम बिरला | लोकसभा अध्यक्ष

दुनिया के राजनीतिज्ञ जब यह अनुमान लगा रहे थे कि अपनी विविधता के कारण भारत एक नहीं रह पाएगा, तब हमारे राष्ट्र निर्माताओं ने एक महान संविधान की रचना की, जिसने देश की विविधता को उसकी शक्ति में बदला, संसदीय लोकतंत्र को नई ऊर्जा दी।

कोच और कप्तान जिम्मेदारी समझें

अपने ही घर में, अपने ही मैदान पर प्रिंस शुभमन गिल की अगुवाई वाली भारतीय क्रिकेट टीम जब कोलकाता के ईडन गार्डेन में दक्षिण अफ्रीका के हाथों पहले टेस्ट में तीसरे ही दिन बुरी तरह पराजित होकर पैवेलियन लौटी थी, तभी क्रिकेट के जानकारों ने साफ कर दिया था कि गुवाहाटी में खेले जाने वाले दूसरे टेस्ट में भी अफ्रीकी गेंदबाजों की रफ्तार के आगे भारतीय टीम बिखर जाएगी। मगर वह इतनी बुरी तरह बिखर जाएगी, ऐसी कल्पना शायद क्रिकेट के पंडितों ने भी नहीं की थी! खेलों में हार और जीत चलती रहती है, लेकिन संघर्ष करके हारने वाली टीम अक्सर जीतने वाले से भी अधिक सम्मान पाती है। भारतीय टीम के साथ ऐसा नहीं हुआ।

टीम इंडिया के साथ संभवतः यह विडंबना है कि वह चाहे जीते या हारे, दोनों ही परिस्थितियों में रिकॉर्ड अपने नाम करती ही है। गुवाहाटी टेस्ट में हार के बाद उसके नाम टेस्ट क्रिकेट में 408 रनों से सबसे बड़ी हार का कीर्तिमान भी दर्ज हो गया। विराट कोहली, रोहित शर्मा और आर अश्विन के संन्यास के बाद भी टीम इंडिया के पास बेहतरीन खिलाड़ी मौजूद थे, लेकिन नए अनुभवहीन कप्तान और कोच के अड़ियल रवैये के चलते खिलाड़ियों को मैदान में कभी खुलकर खेलने का मौका ही नहीं मिला। इसी कारण अपने ही घर में भारत को इस तरह करारी शिकस्त मिली है। जब जीत का सेहरा कप्तान और कोच, दोनों बराबर बांटते हैं, तो हार की जिम्मेदारी भी उनको समान रूप से स्वीकार करनी चाहिए। खिलाड़ियों पर दोषारोपण कर देने मात्र से कप्तान और कोच अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकते।

असलियत यही है कि टीम इंडिया के कोच अक्सर हाथ बांधे, मुंह चढ़ाए बैठे रहते हैं। उन्हें शायद ही कभी खिलाड़ियों को मुस्कराकर प्रेरित करते या उनमें जोश भरते देखा गया है। वह अपना चेहरा इतना 'गंभीर' बनाए रखते हैं कि युवा खिलाड़ियों से सजी टीम अपना नैसर्गिक खेल ही नहीं खेल पाती। यह तस्वीर अब बदलनी चाहिए। कोच और कप्तान को मिलकर ऐसी रणनीति बनानी चाहिए, जिससे टीम इंडिया फिर से अर्श पर पहुंचती दिखे।

यह सच है कि अपने ही घर में एक छोटे कद के अफ्रीकी कप्तान ने टेस्ट क्रिकेट में हमें इतनी बड़ी हार दी है कि उसके घाव जल्द भर नहीं पाएंगे, लेकिन उम्मीद का दामन हमें छोड़ना नहीं चाहिए। अगर आज हम फर्श पर हैं, तो कल फलक पर फिर चमकेंगे। कोच और कप्तान चाहें, तो आपस में मिलकर यह भरोसा क्रिकेटप्रेमियों को दे सकते हैं।

अरविंद रावल, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

टेस्ट शृंखला की हार

भारी पड़ गई चयनकर्ताओं की चूक

भारतीय क्रिकेट टीम कभी अपनी तकनीक, संतुलन और आत्मविश्वास के कारण दुनिया में सबसे मजबूत टीमों में गिनी जाती थी, लेकिन हाल के वर्षों में लगातार हार, अस्थिर टीम संयोजन और कमजोर प्रदर्शन ने यह सवाल खड़ा कर दिया है कि आखिर टीम इंडिया को होता क्या जा रहा है? ग्रेग चैपल के दौर में जो संकट आया था, कमोबेश वैसा ही कुछ अब दिखने लगा है। टीम प्रबंधन में बार-बार के बदलाव, खिलाड़ियों के चयन में अनिश्चितता और सही रणनीति के अभाव ने टीम का मनोबल गिराया है।

सबसे बड़ी समस्या यह है कि टीम में भरोसे की जगह प्रयोगों ने ले ली है। खिलाड़ियों के बल्लेबाजी-क्रम में लगातार फेरबदल किया जा रहा है। कभी लेफ्ट-राइट कॉम्बिनेशन के नाम पर, तो कभी 'फ्लेक्सिबिलिटी' के बहाने बल्लेबाजों को उनके स्वाभाविक नंबर से हटाने से उनका प्रदर्शन प्रभावित होता है। दूसरा बड़ा संकट अनुभवी खिलाड़ियों की उपेक्षा है। उम्र के नाम पर सीनियर खिलाड़ियों को बाहर करना और युवा खिलाड़ियों को बिना तैयारी के बड़े मैचों में उतार देना टीम को अस्थिर कर रहा है। अनुभव और युवा ऊर्जा, दोनों का सही संतुलन ही टीम को मजबूती दे सकता है। विडंबना ही है कि खिलाड़ियों में तकनीक, धैर्य और पारी को संभालने की क्षमता लगातार कम होती जा रही है। तेज क्रिकेट की प्रवृत्ति ने 'लंबी पारी खेलने' की कला को लगभग खत्म कर दिया है। नतीजतन, टीम में ऐसे बल्लेबाज नहीं तैयार हो पा रहे, जो क्रीज पर टिककर टीम को मुश्किल हालात से बाहर निकाल सकें। यही हाल गेंदबाजों के चयन में भी है। ऑलराउंडर की तलाश में कई ऐसे खिलाड़ियों को प्राथमिकता दी जा रही है, जो किसी एक विभाग में भी पूरी मजबूती से योगदान नहीं दे पा रहे। ऐसे में, टीम का संतुलन टूट जाता है व मैच जीतना और मुश्किल हो जाता है।

साफ है, बीसीसीआई को समय रहते कुछ ठोस कदम उठाने होंगे। उसे सबसे पहले चयन-प्रक्रिया पारदर्शी और प्रदर्शन-आधारित बनानी चाहिए। खिलाड़ियों को उनकी स्वाभाविक भूमिका में टिककर खेलने दिया जाए, ताकि उनका आत्मविश्वास और प्रदर्शन, दोनों निखरें। घरेलू क्रिकेट को मजबूत करना भी बेहद जरूरी है, ताकि तकनीकी रूप से तैयार खिलाड़ी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर टिक सकें। अनुभवी खिलाड़ियों के मार्गदर्शन और युवा खिलाड़ियों की ऊर्जा का संतुलित मिश्रण भी जरूरी है। इससे टीम में स्थिरता आती है। निस्संदेह, भारतीय क्रिकेट की नींव काफी मजबूत है, इसलिए यदि प्रबंधन और खिलाड़ी सही रणनीति अपनाएं, तो हमारी टीम शीर्ष पर फिर आ सकती है।

नृपेंद्र अभिषेक नृप, टिप्पणीकार

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

आत्मिक सौंदर्य का आकर्षण स्थायी होता है

आवश्यक कार्य में अड़ंगा

मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर के विरोध में सुप्रीम कोर्ट में जैसे तर्क दिए जा रहे हैं, उससे यही स्पष्ट होता है कि संकीर्ण राजनीतिक कारणों से इस आवश्यक प्रक्रिया में अड़ंगा लगाने की कोशिश हो रही है। सुप्रीम कोर्ट ने यह कहकर अड़ंगा लगाने वालों को आईना ही दिखाया कि बिहार में तो एक भी व्यक्ति यह शिकायत करने नहीं आया कि उसका नाम वोटर लिस्ट से हटा दिया गया है। यह भी उल्लेखनीय है कि बिहार में एसआइआर के समय कुछ खास लोगों के वोट काटे जाने का आरोप उछालने वाले भी ऐसे कथित पीड़ित लोगों का उदाहरण नहीं दे सके थे। हालांकि बिहार में एसआइआर पर उन्हें मुंह की खानी पड़ी, लेकिन वे बाज नहीं आ रहे हैं और अब 12 राज्यों में जारी एसआइआर की प्रक्रिया को रोकने के लिए सुप्रीम कोर्ट के समक्ष खड़े हैं। यह तब है, जब एसआइआर वाले राज्यों में करीब 65 प्रतिशत फार्म भरे जा चुके हैं। इसका मतलब है कि लोग इस प्रक्रिया में भाग ले रहे हैं। एसआइआर होना इसलिए आवश्यक है, क्योंकि मतदाता सूचियों में बड़ी संख्या में ऐसे लोगों के नाम दर्ज हैं, जिनकी मृत्यु हो गई है या फिर जो अन्यत्र चले गए हैं। इसके अलावा ऐसे भी लोग हैं, जिनके पास दोहरे मतदाता पहचान पत्र हैं। चुनाव आयोग एसआइआर के जरिये इन्हीं विसंगतियों को दूर कर रहा है, लेकिन विपक्षी दलों को पता नहीं क्यों यह रास नहीं आ रहा है। वे मतदाता सूचियों में गड़बड़ी की शिकायत भी कर रहे हैं और एसआइआर भी नहीं होने देना चाहते। यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट ने यह स्पष्ट कर दिया कि एसआइआर के दौरान चुनाव आयोग को दस्तावेजों की सत्यता जांचने का अधिकार है। उसे यह अधिकार मिलना ही चाहिए, क्योंकि यह एक तथ्य है कि फर्जी दस्तावेजों के सहारे मतदाता पहचान पत्र से लेकर आधार तक हासिल कर लिए गए हैं। यह आशंका निराधार नहीं कि बंगाल जैसे राज्यों में बड़ी संख्या में बांग्लादेशी घुसपैठिए मतदाता बन बैठे हैं। उनके बांग्लादेश लौटने से इसकी पुष्टि भी होती है। यह ठीक है कि पहचान पत्र के रूप में आधार भी मान्य है, लेकिन उसे भी फर्जी तरीके से बनवाया गया हो सकता है। ऐसे में चुनाव आयोग को दस्तावेजों के सत्यापन का अधिकार मिलना ही चाहिए। यह सही है कि चुनाव आयोग को किसी की नागरिकता जांचने का अधिकार नहीं, लेकिन इसका यह मतलब भी नहीं कि वह उन दस्तावेजों का सत्यापन ही न करे, जो एसआइआर की प्रक्रिया के तहत उसे उपलब्ध कराए जा रहे हैं। यह सही समय है कि सुप्रीम कोर्ट गृह मंत्रालय को राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर के जरिये नागरिकता जांचने का आदेश दे। यदि यह काम नहीं किया जाता तो घुसपैठिए फर्जी दस्तावेजों के जरिये भारत के मतदाता बनते ही रहेंगे।

अनुकूल माहौल जरूरी

किसी भी कार्य की सफलता के लिए जरूरी है कि माहौल उसकी जरूरतों के अनुकूल हो। यह तभी संभव है जब कानून व्यवस्था के साथ-साथ आमजन में भी सहयोग की भावना और कुछ बेहतर करने की इच्छा हो। नीतीश सरकार ने कानून व्यवस्था को हमेशा प्राथमिकता में रखा। नई सरकार के गठन के बाद लोगों का यह विश्वास और प्रबल हुआ है कि राज्य में कानून व्यवस्था और सुदृढ़ होगी। इन सबके बीच कुछ ऐसे विषय भी हैं, जो समाज को प्रभावित करते रहे हैं। राज्य में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए कई प्रयास हुए। इनमें अहम है लाखों की संख्या में शिक्षकों की नियुक्ति। हालांकि अब भी कई कमियां हैं। समय के साथ इन्हें भी दूर कर लिया जाएगा। लेकिन, सरकारी विद्यालयों के प्रति विद्यार्थियों और उनके अभिभावकों में विश्वास जगे, इस पर काम करने की जरूरत है। पटना सिटी के काली स्थान परिसर स्थित दो विद्यालयों का मामला प्रकाश में आया है। एक तो इन विद्यालयों के भवन जर्जर हैं। दूसरा, इन भवनों में नशेड़ियों का हमेशा जमावड़ा लगा रहता है। विद्यार्थियों की संख्या न्यून हो रही है। यदि यहां का माहौल अनुकूल बनाने पर काम नहीं हुआ तो अभिभावक भी अपने बच्चों को भेजना नहीं चाहेंगे। राज्य के विभिन्न हिस्सों में ऐसी और भी शिकायतें हो सकती हैं। इसके लिए जरूरी है कि शिक्षा विभाग एक शिकायत निवारण सेल का गठन करे और ऐसे स्थलों पर सख्ती के साथ संयुक्त कार्रवाई हो।

> विद्यालय परिसर के आस-पास सुरक्षा के प्रति संवेदनशील होने की जरूरत है।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या घरेलू शृंखलाओं में भारत के दयनीय प्रदर्शन के पीछे कोच गौतम गंभीर की रणनीति जिम्मेदार है?

आज का सवाल

क्या राष्ट्रमंडल खेलों की मेजबानी से ओलिंपिक के लिए भारत का दावा मजबूत होगा?

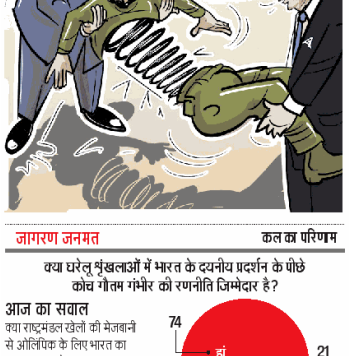

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

अर्थव्यवस्था को गति देने वाला कदम

गौरव वल्लभ

नए श्रम सुधार श्रमिकों और उद्यमियों को सशक्त बनाने के साथ ही एक समृद्ध, समावेशी और प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था की भी नींव रखने वाले हैं

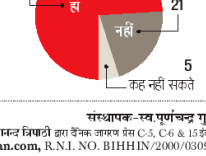

चार नई श्रम संहिताओं पर अमल समय की मांग को पूरी करने वाली एक बड़ी पहल है। इससे पहले की व्यवस्था में नियोक्ताओं को वेतन, कार्य स्थितियों और रोजगार श्रेणियों को असंगत तरीकों से परिभाषित करने वाले 29 अलग-अलग कानूनों का पालन करना पड़ता था। उनके स्थान पर नई संहिताओं में कानूनों को सुगम बनाया गया है। ये संहिताएं राज्यों में समान परिभाषाएं, सभी श्रमिकों के लिए लिखित नियुक्ति पत्र, समय पर वेतन भुगतान के लिए स्पष्ट नियम, गिग-प्लेटफार्म श्रमिकों की मान्यता, अद्यतन स्वास्थ्य और सुरक्षा मानकों के साथ ही एक सरल राष्ट्रीय अनुपालन संरचना की रूपरेखा तैयार करती हैं। पुरानी व्यवस्था में अस्पष्ट परिभाषाएं, सीमाओं में दखल और राज्यों के स्तर पर भिन्नताओं से कंपनियों को तमाम अनिश्चितताओं का सामना करना पड़ता था। किसी राज्य में प्रवेश से पहले कंपनी के समक्ष नए सिरे से अनुपालन की सिरदर्दी बढ़ जाती थी। इसके चलते विनिर्माण और लाजिस्टिक्स कंपनियों का विस्तार सीमित ही रहा। नई संहिताओं में अनिश्चितताओं को दूर किया गया है। स्पष्ट एवं एकसमान परिभाषाएं, पंजीकरण और रिटर्न की एकल प्रणाली, विस्तार के लिए नियामकीय परिदृश्य में सुसंगति इनके मूल में हैं। ये सुधार कारोबारी सुगमता बढ़ाते हैं। स्मरण रहे कि किसी देश की नियामकीय गुणवत्ता केवल सुधारों से ही नहीं, बल्कि नियमों के पूर्वानुमान से भी आंकी जाती है। जब कंपनियां कानूनी जटिलताओं से मुक्त होकर अपनी जिम्मेदारियों को समझती हैं तो अनुपालन भी आसान एवं नियमित हो जाता है। तब निवेश निर्णय से लेकर सब्सिडी को लक्षित करना कहीं बेहतर हो जाता है। जोखिम घटने से कारोबारी परिवेश के प्रति भरोसा बढ़ता है।

आर्थिक दृष्टिकोण से यह परिवर्तन औपचारिक या संगठित रोजगारों को प्रोत्साहन देता है। नियुक्ति पत्र, स्पष्ट वेतन दायित्व और समन्वित श्रेणियां उन अनिश्चितताओं को दूर करती हैं, जो पहले अनौपचारिक रोजगारों को जारी रखने की गुंजाइश देती थीं। याद रहे कि रोजगारों की औपचारिक प्रवृत्ति उत्पादन को बढ़ाने में भी सहायक बनती है। दस्तावेजीय अनुबंध और वेतन चक्र को लेकर सुनिश्चित होने से श्रमिक न केवल अधिक समय तक कार्य करने को लेकर तैयार रहते हैं, बल्कि नए कौशल सीखने के प्रति तत्पर होकर अपनी कुशलता बढ़ाने को भी प्रेरित होते हैं। अंततः इसका लाभ कंपनियों के लिए कार्यबल की क्षमताओं में सुधार और समग्र परिणामों में प्रत्यक्ष होता है। ये परिवर्तन भी किसी जबरन तरीके के बजाय संगठित एवं संस्थागत माध्यम से श्रम बाजार की दक्षता को बढ़ाते हैं।

अवधेश राजपूत

भारतीय श्रम बाजार स्थापित कानूनों की तुलना में कहीं तेजी से विकसित हुआ है। शहरी सेवाओं का बड़ा हिस्सा अब प्लेटफार्म आधारित कार्यों से संचालित हो रहा है। यह नई व्यवस्था पुराने कानूनों में फिट नहीं हो पा रही थी। ऐसे में इन श्रमिकों को मान्यता देकर और उनकी सामाजिक सुरक्षा के लिए नई राहें खोलकर एक बड़े अंतर की भरपाई की गई है। एक बेहतर श्रम बाजार वही होता है, जो नवाचार से किनारा करने के बजाय नई आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालकर नए कार्यों को मान्यता प्रदान करने को प्राथमिकता दे।

कामकाजी आबादी में महिलाओं की भागीदारी को भी नई श्रम संहिताओं से मदद मिलेगी। पुराने कानून नाइट शिफ्ट में महिलाओं के कामकाज को बाधित कर उनके समक्ष विकल्प सीमित करते थे। उनके लिए उचित सुरक्षा व्यवस्थाओं के साथ भागीदारी की अनुमति देना एक अधिक समावेशी श्रम आपूर्ति का आधार तैयार करता है। वैश्विक उदाहरण इसके प्रमाण हैं कि श्रम बल में महिलाओं की ऊंची भागीदारी वाली अर्थव्यवस्थाएं कहीं अधिक लचीली, विविधतापूर्ण और व्यापक रूप से उत्पादक होती हैं। यह भी अक्सर देखने को मिलता है कि नियमों में जटिलता और अनुपालन लागत का बढ़ना निवेश के प्रति कंपनियों को उदासीन बनाता है। वे विस्तार को टालती हैं। इससे भर्तियों पर भी असर पड़ता है। इस कड़ी में नई संहिताओं के माध्यम से स्पष्ट नियमों और सरल प्रक्रियाओं के माध्यम से कई बाधाएं दूर हुई हैं। एकल लाइसेंस एकल राष्ट्रीय रिटर्न और सुव्यवस्थित पंजीकरण प्रशासनिक हीलाहवाली को दूर करते हैं।

श्रम नियमन किसी देश की संस्थागत अवसंरचना का हिस्सा है। इनका विरूपित, अस्पष्ट या असमान रूप से लागू होना कंपनियों को रक्षात्मक बनाता है। इसके चलते वे अतिरिक्त सतर्कता का सहारा लेती हैं। नियमन के सुसंगत, सुस्पष्ट एवं पूर्वानुमानित होने से कंपनियों की आकांक्षाएं परवान चढ़ती हैं। इस संदर्भ में नई श्रम संहिताएं सकारात्मक संकेत करती हैं। वे जटिलताओं के जाले हटाने, प्रोत्साहन को नए सिरे से आगे बढ़ाने और टकराव के बिंदुओं को घटाने का काम करती हैं। सम्मिलित रूप में ये परिवर्तन विकास की गति को बढ़ावा देने का काम करते हैं। हालांकि किसी भी सुधार के माध्यम से अभीष्ट की प्राप्ति तभी संभव है, जब उन पर सही ढंग से अमल किया जाए और नई श्रम संहिताएं भी इसमें कोई अपवाद नहीं। इन्हें अपेक्षित रूप से आगे बढ़ाने के लिए कुछ उपाय करने होंगे। इसमें राज्यों को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। उन्हें नियमों को सरल बनाना होगा। सुधारों की सफलता के लिए डिजिटल सिस्टम को भी सुचारु रूप से कार्य करना होगा।

कुछ पहलुओं को छोड़ दिया जाए तो नई श्रम संहिताएं आवश्यक संतुलन साधने में सफल दिखती हैं। वे नियामकीय आधार को आधुनिक बनाने, औपचारीकरण के समर्थन और अनिश्चितताओं को दूर करती हैं। इससे उद्यमियों के लिए कारोबारी संचालन का अनुकूल परिवेश तैयार होता है। यह परिवर्तन आत्मविश्वास से ओतप्रोत एवं कार्य की दृष्टि से बेहतर आर्थिक परिदृश्य का आधार बनाता है। प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में ये नई श्रम संहिताएं वर्ष 2047 तक विकसित भारत के निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। ये परिवर्तन श्रमिकों और उद्यमियों दोनों को सशक्त बनाने के साथ ही एक समृद्ध, समावेशी और प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था की संस्थागत नींव रखते हैं।

(लेखक प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के अंशकालिक सदस्य एवं वित्त के प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

बेलगाम होती भाषाई अराजकता

उमेश चतुर्वेदी

भाषाई अराजकता के पीछे स्थानीय भाषाई स्वाभिमान से कहीं ज्यादा सियासी नाकामी से उपजी कुंठा है

इसे विडंबना ही कहेंगे कि जब भारत दुनिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की ओर तेजी से बढ़ रहा है और विकसित भारत की बातें हो रही हैं, तब देश के कुछ हिस्सों में भाषाई अराजकता बेलगाम हो रही है। मान्यता है कि शिक्षा और समृद्धि के साथ असमानता और संकीर्णता का भाव तिरोहित हो जाता है, लेकिन अपेक्षाकृत समृद्ध और शिक्षित महाराष्ट्र, कर्नाटक और तमिलनाडु में जिस तरह भाषाई असहिष्णुता फैल रही है, उससे यह मान्यता गलत साबित होती दिख रही है। ताजा मामला महाराष्ट्र के कल्याण का है, जहां एक नौजवान ने इसलिए अपनी जीवनलीला खत्म कर ली, क्योंकि उसे हिंदी बोलने के लिए अपमानित किया गया। लोकल ट्रेन से कालेज जाते वक्त सहयात्री से संवाद के लिए हिंदी के कुछ लफ्जों का इस्तेमाल कुछ मराठीभाषियों को इतना नागवार गुजरा, उन्होंने उस पर थप्पड़ों की बारिश कर दी। इससे आहत नौजवान ने घर लौटकर आत्महत्या कर ली। यह नौजवान मराठीभाषी ही था।

क्या हिंदी बोलना इतना बड़ा गुनाह हो गया कि किसी को सरेआम अपमानित किया जाए, पीटा जाए। इस आघातकारी मामले में राजनीतिक दलों और सामाजिक संगठनों की चुप्पी समस्या बनकर उभर रही है। ये संगठन भूल जाते हैं कि राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने की हिंदी की क्षमता जिन लोगों ने पहचानी, उनमें गुजराती भाषी महात्मा गांधी एवं नर्मदाशंकर उपाध्याय, बांग्लाभाषी केशवचंद्र सेन एवं सुभाष चंद्र बोस और मराठा लोकमान्य तिलक जैसे अनेक अहिंदी भाषी थे। इन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा बनाने का सपना देखा था। राजनीतिक कुचक्रों के चलते हिंदी राष्ट्रभाषा के स्थान पर आसीन नहीं हो सकी, लेकिन उसकी सामर्थ्य किसी से छिपी नहीं। कई क्षेत्रीय राजनीतिक ताकतें हिंदी से भयाक्रांत हैं, जबकि हिंदी के विस्तार के पीछे राजभाषा की ताकत नहीं, बल्कि उसका अभिव्यक्ति का सशक्त जरिया बनना है। चूंकि हिंदी भारतीय भाषाओं के बीच सहज संवाद की क्षमता से युक्त है, इसलिए संकीर्णता से ग्रस्त क्षेत्रीय सियासी ताकतें उससे डरती हैं। हिंदी के जरिये उन्हें अपनी सियासी अस्मिता खतरे में नजर आती है। इसीलिए ये ताकतें हिंदीभाषियों को निशाना बनाती हैं। इसमें सबसे आगे राज ठाकरे और उनकी पार्टी महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना है। राज जब-जब हाशिए की ओर जाते दिखते हैं, भाषाई अराजकता उनका हथियार बन जाती है।

भाषाई कट्टरता की भेंट चढ़ा मराठीभाषी युवक ● फाइल

अव्वल तो आजादी के 75 सालों में भारतीय अस्मिता की बात होनी चाहिए, लेकिन मौजूदा राजनीति ने उपराष्ट्रीयताओं के साथ बांग्ला, मराठी, कन्नड़, तमिल जैसी खंडित अवधारणाएं प्रस्तुत कर दी हैं। क्षेत्रीय राजनीतिक ताकतों के लिए इन दिनों अपनी भाषा का सवाल उठाना चुनावी सफलता की गारंटी माना जाने लगा है। महाराष्ट्र की राजनीति में अस्तित्व के संकट से जूझ रहे ठाकरे बंधु राज ठाकरे और उद्धव साथ आ चुके हैं। बाला साहेब के सियासी उत्तराधिकारी माने जाते रहे राज को खास सियासी कामयाबी नहीं मिली। लिहाजा राजनीतिक रूप से खुद को प्रासंगिक बनाए रखने के लिए उनके हाथ में एक ही औजार है, मराठी के नाम पर गैर मराठीभाषियों को प्रताड़ित करना। राज ऐसा करके बाला साहेब की विरासत को आगे बढ़ाने का भ्रम पाले हैं। सवाल उठता है कि जिस हिंदी सिनेमा के लिए मुंबई जानी जाती है, राज ठाकरे और उनके लोग उस बालीवुड को क्यों नहीं मुंबई से खदेड़ देते? बालीवुड महाराष्ट्र की न सिर्फ वैश्विक पहचान है, बल्कि रोजी-रोटी के साथ ही टैक्स का बड़ा जरिया भी है। राज ठाकरे की मराठी अस्मिता की वीरता कमजोर हिंदीभाषियों पर ही फूटती है।

भाषाई अराजकता के पीछे स्थानीय भाषाई स्वाभिमान से ज्यादा सियासी नाकामी से उपजी कुंठा है। बाल ठाकरे की राजनीति का उभार पहले दक्षिण भारतीय लोगों के विरोध की बुनियाद पर हुआ। उनकी विरासत से वंचित राज ठाकरे को खुद को स्थापित करने के लिए पुराना हथकंडा ही नजर आया। महाराष्ट्र की तर्ज पर कर्नाटक में भी भाषाई अराजकता को बढ़ावा देने की कोशिश होती रहती है। तमिलनाडु में भाषाई अराजकता की नींव तो 1913 में ही पड़ गई थी, जब कथित ब्राह्मणवाद और उत्तर भारत विरोध के नाम पर जस्टिस पार्टी की स्थापना हुई। इसी पार्टी के जरिये रामास्वामी पेरियार का उभार हुआ, जिन्होंने द्रविड़ आंदोलन की नींव डाली। तमिल राजनीति में डीएमके की जड़ें मजबूत करने में हिंदी विरोधी आंदोलन की केंद्रीय भूमिका रही। इसी वजह से मुख्यमंत्री स्टालिन और उनके बेटे उदयनिधि कभी हिंदी का विरोध करते हैं तो कभी संस्कृत को मृत भाषा बताकर गर्व महसूस करते हैं। कर्नाटक में कर्नाटक रक्षणा वेदिके भी डीएमके की तर्ज पर भाषाई अराजकता का हथकंडा अपनाती है।

अतीत के अराजक भाषा विरोधी आंदोलन हों या मौजूदा हिंदी विरोधी बयान, कांग्रेस आम तौर पर मूकदर्शक की भूमिका में रही है। आज कांग्रेस महाराष्ट्र में उसी महागठबंधन का हिस्सा है, जिसका एक प्रमुख घटक शिवसेना का उद्धव गुट है। माना जा रहा है कि मुंबई महानगर पालिका चुनाव में सफलता की उम्मीद के चलते कांग्रेस भाषाई अराजकता पर चुप्पी साधे है। कर्नाटक में तो वह सरकार में ही है, लेकिन अराजकता के खिलाफ कभी उसका प्रभावी रवैया नहीं दिखा। अगर भाषाई अराजकता पर प्रभावी रोक नहीं लगाई गई तो यह अराजकता लोगों के बीच कटुता का वाहक बनेगी, जिसका खामियाजा आखिरकार देश को भुगतना पड़ेगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

सीमाएं तय करना

जटिलताओं से भरे जीवन में एक महत्वपूर्ण बिंदु है अपनी सीमाओं को तय करना। यह वह विवेक है, जो व्यक्ति को अपनी ऊर्जा, समय और भावनाओं की रक्षा करना सिखाता है। मनुष्य की सबसे बड़ी थकान परिस्थितियों से नहीं, बल्कि उन अनियंत्रित अपेक्षाओं से उपजती है, जिन्हें वह 'न' कहने के साहस के अभाव में लगातार ढोता रहता है। सीमाएं केवल दूरी खड़ी नहीं करतीं, बल्कि व्यक्ति को अपने भीतर स्थिर और संतुलित रहने का मार्ग प्रदान करती हैं। व्यावहारिक जीवन में जब कोई व्यक्ति हर अनुरोध, हर अपेक्षा और हर दबाव को स्वीकार करता जाता है, तब उसकी प्राथमिकताएं धीरे-धीरे धुंधली होने लगती हैं। सीमाएं तय करना वस्तुतः अपने मूल्य, अपनी क्षमता और अपनी सीमाओं को चिह्नित करने की प्रक्रिया ही है। यह आग्रह नहीं, अपितु आत्म-समझ का परिपक्व एवं परिष्कृत स्वरूप है। परिस्थितियां कब, कितना और कैसे प्रभावित करेंगी इसका निर्णय तब संभव है, जब व्यक्ति स्वयं के लिए यह रेखा स्पष्ट करता है कि वह किन बातों को स्वीकार करेगा और किनसे दूर रहेगा।

प्रायः कहा जाता है कि रिश्ते त्याग पर टिके होते हैं, परंतु सच यह है कि स्वस्थ रिश्ते पारस्परिक सम्मान पर आधारित होते हैं। सम्मान वहीं जन्म लेता है, जहां अपनी भावनाओं की सुरक्षा का अधिकार स्पष्ट हो। जो व्यक्ति सीमाएं तय करता वह केवल अपने भीतर की स्पष्टता को दृढ़ करता है। यही स्पष्टता आगे चलकर उसके निर्णयों को स्थिर और उसके जीवन को संगठित करती है। जीवन में संतुलन, शांति और मानसिक स्वच्छता तभी संभव है जब मनुष्य यह समझ ले कि हर अपेक्षा पूर्ण करना कर्तव्य नहीं और हर आग्रह स्वीकारना उदारता नहीं। सीमाएं तय करना आत्म-सुरक्षा का उपकरण है। जो व्यक्ति इसका अभ्यास कर लेता है, वही अपने समय, मन और संबंधों का वास्तविक संरक्षक बन पाता है।

अमन सिंह गौर

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

पाकिस्तान से सतर्कता आवश्यक

'पाकिस्तान से और बढ़ा खतरा पढ़ा' शीर्षक से प्रकाशित शिवकांत शर्मा का आलेख पढ़कर यही समझ आया कि समय के साथ भारत की सुरक्षा चुनौतियां भी बदल रही हैं। पाकिस्तान से उत्पन्न खतरा आज भी बहुत गंभीर बना हुआ है। पाकिस्तान को चीन और अमेरिका का साथ, आंतरिक अस्थिरता, बढ़ती कट्टरता और आतंक के प्रति उसकी राजनीतिक-रणनीतिक नीति भारत के लिए चिंता का प्रमुख कारण बन गई है। पाकिस्तान की सेना और कट्टरपंथी संगठन सत्ता और नीतियों का वास्तविक नेतृत्व कर रहे हैं। पाकिस्तान में आतंकवादी संगठनों को दोबारा सक्रिय किया जा रहा है और कश्मीर को लेकर भड़काऊ बयान दिए जा रहे हैं। यह भारत की संप्रभुता और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा है। दिल्ली में हुए हालिया बम धमाके के तार पाकिस्तान के प्रतिबंधित जिहादी संगठन जैश-ए-मोहम्मद से जुड़े हैं। पाकिस्तान को हर युद्ध में करारी हार का सामना करना पड़ा है, इसलिए वह सीधी लड़ाई के बजाय सीमा पार से आतंकवाद के जरिये भारत को अस्थिर करने का प्रयास करता रहा है। भारत विरोधी दुष्प्रचार, डिजिटल कट्टरता और फेक न्यूज के जरिये युवाओं को भ्रमित करने की कोशिशें लगातार बढ़ रही हैं। हाल के वर्षों में भारत ने सर्जिकल स्ट्राइक, एयर स्ट्राइक और आपरेशन सिंदूर के जरिये पाकिस्तानी आतंकवाद को गहरी चोट पहुंचाई है, लेकिन पाकिस्तान अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है। भारत की राष्ट्रीय एकता, सीमाओं की सुरक्षा, आंतरिक सुरक्षा, मजबूत नेतृत्व और सुरक्षा तंत्र की तैयारियां भविष्य की चुनौतियों के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

हिमांशु शेखर, केसपा (गयाजी)

बंद नहीं हो रही रिश्वतखोरी

बिहार में सरकारी अधिकारियों के ठिकानों पर निगरानी अन्वेषण ब्यूरो की छापेमारी रुकने का नाम नहीं ले रही। कहने को लोक सेवक हैं, परंतु सेवा से अधिक मेवे पर ध्यान है, उनकी अवैध कमाई सुरसा के मुंह की तरह बढ़ती जा रही है। सुशासन में अधिकारियों की काली कमाई का बढ़ना कहीं न कहीं यह दर्शाता है कि आमजन को कोई काम कराने में रिश्वत देनी ही पड़ती है। राहत की बात है कि भ्रष्ट लोक सेवकों में अबतक कोई शिक्षक सामने नहीं आए हैं। कनीय अभियंता से लेकर सचिव स्तर के पदाधिकारी भी निगरानी के शिकंजे में आ चुके हैं। रिश्वतखोरी रोकने को लेकर सरकार ने कई कानून बनाए हैं और इनका अनुपालन भी युद्धस्तर पर हो रहा है, बावजूद अभी भी रिश्वतखोरी बंद होने का नाम नहीं ले रही। बिहार में तमाम कानूनों की अनदेखी करके बालू माफिया, शराब माफिया और रिश्वतखोरों का नेटवर्क समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा। नई सरकार के गठन के बाद सरकार के लिए यह बहुत बड़ी चुनौती है। रिश्वत देना और लेना दोनों ही गंभीर अपराध की श्रेणी में आना चाहिए। कानूनी प्रविधान और सख्त किए जाने चाहिए। इसका सामाजिक स्तर पर भी बहिष्कार होना चाहिए।

आनंद पांडेय, रोसड़ा

जिंदगी के सच्चे अहसास

हम अक्सर अमीरी या संपन्नता को बैंक बैलेंस, बड़ी गाड़ियां और आलीशान घरों से जोड़कर देखते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि भौतिक साधन जीवन को आरामदायक बनाते हैं, लेकिन क्या यही सच्ची दौलत है? सच्ची अमीरी का खजाना हमारे अनुभवों और रिश्तों में छिपा है। कल्पना कीजिए, रात भर की हरी तथा मीठी नींद के बाद, एक खुशगवार और हवादार मौसम में आंख खुलना। यह शांति, यह ताजगी किसी भी महंगी चीज से ज्यादा अनमोल है। उन लोगों के साथ टहलना या होना, जिन्हें हम प्यार करते हैं। परिवार, दोस्त, जीवनसाथी यह वह भावनात्मक पूंजी हैं जो हमें हर मुश्किल से लड़ने की ताकत देते हैं। अपनों का साथ जीवन की सबसे बड़ी सुरक्षा है। जब हम प्रकृति को उसके दिए हुए रूप में देखते हैं। चांदनी रात, बहती नदी या खिलता हुआ फूल तो यह हमारे दिल को एक ऐसी अमीरी से भर देता है जो कभी खत्म नहीं होती। वास्तविक संपन्नता का रस लबालब भरा हुआ है, लेकिन यह बाहर की चकाचौंध में नहीं, बल्कि जिंदगी के सच्चे अहसास में मिलता है। यह उस पल में है, जब आप खुली हवा में गहरी सांस लेते हैं, जब आप अपने किसी प्रियजन की मुस्कान देखते हैं, या जब आप केवल आज के दिन के लिए कृतज्ञ महसूस करते हैं। मानसिक शांति व सुकून के लिए समाज सेवा भी बेहतर विकल्प है।

प्रसिद्ध यादव, पटना

पोस्ट

हमें जीते जी अयोध्या में श्री राम मंदिर पर ध्वजारोहण समारोह देखने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। हमारे लिए इससे बड़े सौभाग्य की बात और क्या हो सकती है।

अनुपम खेर @AnupamPKher

भारत को 20 साल बाद फिर से राष्ट्रमंडल खेलों की मेजबानी का गौरव मिला है। वर्ष 2030 में राष्ट्रमंडल खेलों का शताब्दी आयोजन हमारी युवा प्रतिभाओं, हमारे उत्साह और समृद्ध संस्कृति की भी झलक दिखाएगा। अहमदाबाद का चयन भारत की वैश्विक खेल क्षमताओं और 2036 ओलिंपिक के सपनों को नई रफ्तार देगा।

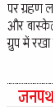

सागर पाटिल @Sagarworlds

अगर क्रिकेट को वैश्विक खेल बनना है तो आइसीसी स्पर्धाओं में भारत-पाकिस्तान को एक ही ग्रुप में रखने की आदत से बाज आना होगा। कमाई के लिहाज से यकीनन यह एक बड़ा जरिया बन जाता है, लेकिन इससे क्रिकेट की गंभीरता पर ग्रहण लगता है। अगर फुटबाल में अर्जेंटीना, ब्राजील और बास्केटबाल में अमेरिका, फ्रांस को हमेशा एक ही ग्रुप में रखा जाएगा तो उसका विरोध देखने को मिलेगा।

जोय भट्टाचार्य @joybhattacharj

जनपथ

हालत पाकिस्तान की ऐसी दिखती आज,
सेना के चूमें चरण नेता बिना लिहाज।
नेता बिना लिहाज करें क्या वे बेचारे,
यदि ना दाबें पांव जेल में जाएं मारे।
मुल्ला जी के राज न होगी दूर जहालत,
झेले हरदम पाक बुरी ऐसी ही हालत!

- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष :0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर वी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 224

****

https://t.me/AllNewsPapersPaid

6 | संपादकीय
जनसत्ता | 28 नवंबर, 2025

कल्पमेधा

कोई भी व्यक्ति, जिसने सीखना छोड़ दिया, चाहे उसकी उम्र बीस साल हो या अस्सी साल, वह बूढ़ा है। और कोई भी, जिसने ज्ञान प्राप्त करना जारी रखा है, वह युवा है।
– हेनरी फोर्ड

लापरवाही की अति

हरियाणा में बास्केटबाल के दो खिलाड़ियों की मौत को भले ही हादसे के तौर पर देखा जाए, लेकिन यह दरअसल राज्य के समूचे तंत्र में खेलों के प्रबंधन से लेकर व्यवस्था से जुड़े अधिकारियों और वहां की खेल नीति पर एक गंभीर सवाल है। इससे अफसोसनाक और क्या होगा कि बास्केटबाल के ये खिलाड़ी अपनी मेहनत और लगन से देश के लिए कुछ बड़ी उपलब्धि हासिल करना चाहते थे, लेकिन सरकारी अव्यवस्था और लापरवाही की वजह से उनकी जान चली गई। दोनों खिलाड़ियों की मौत पर व्यापक चिंता उभरने के बाद हुई कार्रवाई में कुछ संबंधित कर्मचारियों या अधिकारी को निलंबित किया गया और सरकार ने सभी खेल मैदानों और बास्केटबाल के पोल या खंभों की जांच के आदेश जारी किए। मगर सवाल है कि जो खंभे हादसे की वजह बने, लंबे समय से जर्जर हालत में होने के बावजूद संबंधित सरकारी महकमों ने उनकी अनदेखी क्यों की। इस लिहाज से देखें तो हादसों में दोनों खिलाड़ियों की मौत के वास्तविक जिम्मेदारों की पहचान और उन्हें कठघरे में खड़ा करने की जरूरत है।

गौरतलब है कि राज्य के रोहतक और बहादुरगढ़ में अभ्यास करने के क्रम में दो खिलाड़ियों के पेट और सीने पर बास्केटबाल का खंभा गिर गया और उनकी मौत हो गई। जो खिलाड़ी अपनी प्रतिभा के बूते भविष्य में उपलब्धियां हासिल कर परिवार से लेकर देश के लिए गर्व का जरिया बन सकते थे, सरकारी लापरवाही की वजह से उनकी जान चली गई। खबरों के मुताबिक, दोनों ही जगह बास्केटबाल का खंभा इस जर्जर हालत में था कि उसमें हल्का जोर पड़ते ही टूट कर गिर गया। जाहिर है, खंभे का गिरना एक-दो दिन की लापरवाही का नतीजा नहीं हो सकता। रोहतक के लाखनमाजरा स्थित स्टेडियम में करीब पांच सौ खिलाड़ी अभ्यास करते हैं। वे बीते काफी समय से खेल विभाग के अधिकारियों से लेकर मुख्यमंत्री तक से मैदान की गुणवत्ता और उपकरणों को ठीक कराने की मांग कर रहे थे। मगर उनकी मांग पर किसी ने समय पर ध्यान देना जरूरी नहीं समझा। अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि राज्य में कई अन्य जगहों पर भी खेल मैदानों में जरूरी संसाधनों और उपकरणों की दशा ऐसी है कि खिलाड़ी खेलते या अभ्यास करते हुए हर समय एक तरह के जोखिम से गुजरते हैं।

सवाल है कि जो सरकार दो खिलाड़ियों की जान जाने के बाद राज्य के खेल मैदानों में बुनियादी ढांचों की जांच कराने को लेकर सक्रिय दिखी, क्या ऐसा वह पहले नहीं कर सकती थी। हरियाणा एक खेल प्रधान राज्य रहा है। यहां के बहुत सारे खिलाड़ियों ने अपनी क्षमताओं के साथ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देश के लिए बड़ी-बड़ी उपलब्धियां अर्जित की हैं। रोहतक में हादसे का शिकार होने वाले हार्दिक राठी राष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी थे और बहादुरगढ़ के अमन भी भविष्य की संभावना थे। मगर यहां खेल मैदानों में हुई त्रासद घटनाओं में उनकी मौत बताती है कि सरकार की खेल नीति की हकीकत क्या है और वह खिलाड़ियों के सुरक्षित अभ्यास करने को लेकर किस हद तक लापरवाह है। अब संभव है कि राज्य के खेल परिसरों में संसाधनों और बुनियादी ढांचे में सुधार के लिए सरकार कुछ समय तक सक्रिय दिखे, लेकिन जब तक खिलाड़ियों के अभ्यास और उनकी सुरक्षा को लेकर निरंतर सक्रियता और ईमानदार इच्छाशक्ति को खेल नीति का अनिवार्य हिस्सा नहीं बनाया जाएगा, तब तक बेहतर नतीजों की उम्मीद नहीं की जा सकती।

अराजकता के सामने

जब व्यवस्था बिगड़ती है, तो उसके नतीजे में लोगों का बेलगाम हो जाना एक स्वाभाविक नतीजा है। कई बार ऐसा देखा गया है कि अव्यवस्था और अन्याय के खिलाफ नागरिक सड़कों पर उतर आते हैं। अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाना गलत नहीं है, लेकिन जब विरोध हिंसा और अराजकता में बदल जाए, तो यह कानून के विरुद्ध और चिंता की बात है। गौरतलब है कि मध्य प्रदेश के सीहोर जिले में मंगलवार को वेल्लोर प्रौद्योगिकी संस्थान के विद्यार्थी भोजन और पानी की खराब गुणवत्ता के खिलाफ हिंसा पर उतारू हो गए। उन्होंने संस्थान परिसर में तोड़फोड़ की और वाहनों में भी आग लगा दी। करीब तीन से चार हजार विद्यार्थियों के आक्रोश को संभालने या उनके सवालों का जवाब देने वाला वहां कोई नहीं था। स्पष्ट है कि संबंधित संस्थान ने समय रहते विद्यार्थियों की समस्या दूर नहीं की और न ही उनमें पनप रहे गुस्से को भांप कर परिसर में कोई सुरक्षा व्यवस्था की। नतीजा यह हुआ कि छात्रावास की खिड़कियों के शीशे तो टूटे ही, एक बस और चिकित्सा वाहन में भी आग लगा दी गई। इतनी बड़ी घटना के दौरान पुलिस मौके पर नहीं थी, तो इससे मध्य प्रदेश में कानून व्यवस्था का अंदाजा लगाया जा सकता है। बेकाबू विद्यार्थियों को संभाल न पाना निस्संदेह पुलिस की नाकामी है।

राज्य में कानून व्यवस्था की स्थिति का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि कई गंभीर मामलों के आरोपी पुलिस की गिरफ्त से बाहर हैं। हालत यह है कि मुख्यमंत्री को पुलिस मुख्यालय जाकर बैठक करनी पड़ी। वहां उन्होंने राज्य में बढ़ते अपराध, पुलिस की कार्यप्रणाली और हाल में हुई घटनाओं की समीक्षा की। यह सफाई दी जा सकती है कि हर जगह एक साथ अपराध को नियंत्रित करना मुश्किल है, मगर यह भी सच है कि कानून-व्यवस्था इकबाल से चलती है और उसकी स्थिति राज्य में बदहाल दिख रही है। पिछले दिनों एक मासूम से दरिंदगी सहित हालिया कई घटनाओं से पुलिस और प्रशासन की नाकामी ही दिखी है। जबकि इस कमजोरी को शासन के स्तर पर ही दूर किया जा सकता है। यह अधिकारियों को सिर्फ हटाने और निलंबित करने से नहीं होगा। अगर इच्छाशक्ति मजबूत हो और जवाबदेही तय हो, तो कानून-व्यवस्था को दुरुस्त किया जा सकता है।

गहराता संकट और विभाजित कसौटियां

तीन दशकों से दुनिया जलवायु सम्मेलनों में वादे, घोषणाएं और कागजी महत्त्वाकांक्षाएं ही बटोरती आई है। इस बार उम्मीद थी कि इतिहास बदलेगा, लेकिन 'काप-30' के परिणाम बताते हैं कि दुनिया अभी भी भ्रम, राजनीति और अपने-अपने राष्ट्रीय हितों के जाल में फंसी हुई है।

योगेश कुमार गोयल

ब्राजील में आयोजित 'काप-30' को 'मानवता का जलवायु मुकदमा' कहा गया। अमेजन की हरियाली से ढके बेलेम शहर में आयोजित सम्मेलन का माहौल कुछ ऐसा था, मानो पूरी मानवता अपनी अंतिम सुनवाई में खड़ी हो। यह वह क्षण था, जहां पृथ्वी की धड़कनों को सुना जा सकता था, कहीं पिघलते ग्लेशियरों की चीख, कहीं बाढ़ में डूबते गांवों की खामोशी, कहीं सूखे से दरकी मिट्टी का क्रंदन। तीन दशकों से दुनिया जलवायु सम्मेलनों में वादे, घोषणाएं और कागजी महत्त्वाकांक्षाएं ही बटोरती आई है। इस बार उम्मीद थी कि इतिहास बदलेगा और दुनिया आखिरकार सच को स्वीकार करेगी कि समय अब खत्म हो रहा है। मगर 'काप-30' के परिणाम बताते हैं कि दुनिया अभी भी भ्रम, राजनीति और अपने-अपने राष्ट्रीय हितों के जाल में फंसी हुई है। यह सम्मेलन जितनी उम्मीदों से शुरू हुआ था, उतनी ही निराशा और अधूरेपन के साथ समाप्त हुआ।

दुनिया के 194 देशों ने बारह घंटे की अतिरिक्त बहस के बाद जिस दस्तावेज पर सहमति जताई, उसमें जीवाश्म ईंधन को चरणबद्ध तरीके से खत्म करने का कोई बाध्यकारी निर्णय नहीं किया गया। दुनिया ने केवल 'चर्चा शुरू करने का' एक ऐसा वादा किया, जो तापमान वृद्धि, समुद्री तबाही और जलवायु आपदाओं की वास्तविक रफ्तार के सामने बेहद मामूली और लगभग हास्यास्पद है। तेल उत्पादक देशों, विशेषकर सऊदी अरब और रूस ने संयुक्त रूप से हर उस भाषा पर अवरोधक लगा दिया, जो जीवाश्म ईंधन का उपयोग रोकने की दिशा में एक स्पष्ट, कानूनी और अनिवार्य मार्ग खोल सकती थी। परिणाम यह हुआ कि 'काप-30' एक बार फिर वही बन गया, जो अधिकांश 'काप सम्मेलन' बनते आए हैं यानी निष्क्रिय राजनीति का महोत्सव, जहां केवल शब्द चमकते हैं और कार्रवाई गायब रहती है। सम्मेलन के पहले ही सप्ताह में यह साफ हो गया था कि यह जलवायु संघर्ष केवल पर्यावरण का नहीं, आर्थिक प्रभुत्व, ऊर्जा भंडार और भू-राजनीति का भी युद्ध है। विकसित देश एक तरफ उत्सर्जन घटाने का दिखावा करते रहे, दूसरी तरफ अपने अवसरवादी आर्थिक हितों को बचाते रहे। विकासशील राष्ट्र जलवायु न्याय की मांग करते रहे, लेकिन उन्हें जवाब में केवल आश्वासन मिला, ठोस सहायता नहीं। यह विडंबना इस सदी की सबसे बड़ी पराजय है कि जलवायु संकट का भार उन कंधों पर है, जिन्होंने सबसे कम प्रदूषण किया और सबसे कम संसाधन जुटाए।

बेलेम शहर में हुए इस सम्मेलन का एक और बड़ा विरोधाभास यही रहा कि अमेजन को 'पृथ्वी का फेफड़ा' कहा जाता है, फिर भी वनों की कटाई रोकने का कोई साफ रास्ता अंतिम दस्तावेज में शामिल नहीं किया गया। यह ऐसे ही है, जैसे किसी मरीज को दिल का दौरा पड़े और चिकित्सक उसे दवा देने के बजाय यह कहे कि 'हम इस पर चर्चा करेंगे।' अमेजन का तीस फीसद हिस्सा पहले ही नष्ट हो चुका है, तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस की ओर तेजी से बढ़ रहा है और जलवायु वैज्ञानिक लगातार कह रहे हैं कि समय अब नहीं बचा। इसके बावजूद 'काप-30' के नतीजे इतने निराशाजनक रहे कि यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि क्या दुनिया सच में जलवायु न्याय चाहती है या केवल उसकी राजनीति? सम्मेलन के दौरान जिस विषय पर सबसे अधिक मतभेद हुआ, वह था जीवाश्म ईंधन का भविष्य।

इससे भी बड़ा झटका यह रहा कि कोई भी देश उत्सर्जन घटाने के लिए तैयार नहीं हुआ। सम्मेलन ने केवल एक 'एक्सेलेरेटर प्रोग्राम' बनाने की घोषणा की, जिसकी रपट अगले सम्मेलन में आएगी। यह ऐसे ही है, जैसे कोई भवन आग में जल रहा हो और लोग एक समिति गठित कर दें कि अगली बैठक में अग्निशमन पर चर्चा करेंगे। जलवायु वैज्ञानिकों ने 'काप-30' के बाद स्पष्ट कहा कि तापमान के रास्ते को मोड़ने की कोई ठोस कार्रवाई नहीं हुई। यह नतीजा आने वाले समय की त्रासदी की पूर्व-घोषणा है। काप-30 की विफलता का दूसरा प्रमुख पहलू जलवायु वित्त है। वर्ष 2023 में अनुकूलन परियोजनाओं के लिए वैश्विक कोष का मात्र तीन फीसद ही खर्च हुआ। विकासशील देशों को 2035 तक प्रतिवर्ष कम से कम 310 अरब डालर की आवश्यकता होगी, लेकिन अभी जो सहायता उपलब्ध है, वह इसकी तुलना में कई गुना कम है।

> **बेलेम शहर में हुए इस सम्मेलन का एक और बड़ा विरोधाभास यह रहा कि अमेजन को 'पृथ्वी का फेफड़ा' कहा जाता है, फिर भी वनों की कटाई रोकने का कोई साफ रास्ता अंतिम दस्तावेज में शामिल नहीं किया गया। यह ऐसे ही है, जैसे किसी मरीज को दिल का दौरा पड़े और चिकित्सक उसे दवा देने के बजाय यह कहे कि 'हम इस पर चर्चा करेंगे।' अमेजन का तीस फीसद हिस्सा पहले ही नष्ट हो चुका है, तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस की ओर तेजी से बढ़ रहा है और जलवायु वैज्ञानिक लगातार कह रहे हैं कि समय अब नहीं बचा। इसके बावजूद 'काप-30' के नतीजे निराशाजनक रहे।**

सम्मेलन का तीसरा बड़ा सच यह है कि जलवायु संकट आज एक पर्यावरणीय मुद्दा नहीं रहा, यह स्वास्थ्य संकट भी है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लूएचओ) के अनुसार अत्यधिक गर्मी हर वर्ष पांच लाख से अधिक लोगों की जान ले रही है। प्रदूषण दुनिया की हर तीसरी मृत्यु का कारण बन चुका है। प्रदूषित हवा अब केवल फेफड़ों में नहीं, मानव शरीर की हर कोशिका में घुस चुकी है। महामारी का खतरा भी जलवायु परिवर्तन के साथ और तेज हुआ है। तूफान, बाढ़ और सूखे की मार से अस्पताल भी सुरक्षित नहीं, क्योंकि हर बारह में से एक अस्पताल सीधे जलवायु जोखिम के घेरे में है। 'काप-30' में ब्राजील ने 'बेलेम हेल्थ एक्शन प्लान' प्रस्तुत किया, जो एक सकारात्मक पहल है, लेकिन स्वास्थ्य तंत्र को सक्षम बनाने के लिए जिस स्तर के वित्त, सहयोग और राजनीतिक संकल्प की आवश्यकता थी, वह नदारद रहा। जैसे-जैसे सम्मेलन आगे बढ़ता गया, यह स्पष्ट हो गया कि तकनीकी समाधान अकेले इस संकट को नहीं रोक सकते।

अगर यह कहा जाए कि 'काप-30' मानवता की चेतावनी की घंटी का शायद आखिरी स्वर था, तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस पूरी निराशा के बीच उम्मीद की कुछ किरणें भी हैं। पहला, भारत, इंडोनेशिया, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका इत्यादि कई देश एक नए हरित दृष्टिकोण के साथ सामने आ रहे हैं। ये देश विकास और पर्यावरण को एक साथ लेकर चलने की नई सोच की तरफ बढ़ रहे हैं। दूसरा, स्थानीय स्तर पर दुनिया भर में नागरिक, युवा, वैज्ञानिक, किसान और जनजातीय समुदाय पहले से अधिक संगठित हो रहे हैं। तीसरा, बाजार धीरे-धीरे लेकिन मजबूती से अक्षय ऊर्जा की दिशा में बढ़ रहा है, चाहे राजनीतिक इच्छाशक्ति कितनी भी कमजोर क्यों न हो। फिर भी सच्चाई यह है कि समय बहुत तेजी से निकल रहा है। यदि आने वाले वर्षों में काप सम्मेलनों ने अपनी दिशा नहीं बदली, तो यह सारी प्रक्रिया एक दिखावा बन कर रह जाएगी।

'काप-30' हमें जिस कठोर सच्चाई का सामना कराता है, वह यह है कि जलवायु संकट अब विज्ञान का मुद्दा नहीं रहा, यह मानव सभ्यता की आत्मा का प्रश्न बन चुका है। यह फैसला केवल तापमान के आंकड़ों का नहीं है, बल्कि यह निर्णय है कि आने वाली पीढ़ियां किस दुनिया में सांस लेंगी, किस भविष्य में जिएंगीं और पृथ्वी उनके लिए रहने योग्य बचेगी भी या नहीं। 'काप-30' का संदेश यही है कि अब शब्दों के दिन खत्म हो चुके हैं, यह समय कार्रवाई का है और यह कार्रवाई तभी संभव है, जब विश्व राजनीति अपने आर्थिक स्वार्थों से ऊपर उठ कर यह स्वीकार करे कि जलवायु संकट कोई युद्ध नहीं, मानवता के अस्तित्व की अंतिम चुनौती है।

उत्सवों की सूखती त्रिवेणी

घनश्याम कुमार देवांश

कला का रिश्ता संगीत से है और विध्वंस का शोर से। और जब त्योहारों और पारिवारिक उत्सवों में संगीत के स्थान पर शोर कब्जा कर ले, तब इसमें क्या शक रह जाता है कि कला के ऊपर विध्वंस हावी हो चुका है। हमारे आसपास और दूरदराज की दुनिया इसका उदाहरण बन चुकी है। पिछले चार दशकों के दौरान यह दुनिया तेजी से बदली है। मनुष्य ने अपने जीवन से कलात्मक संघर्ष के सारे अवसर समाप्त कर दिए हैं। दिवाली के दीये पूरी रात नहीं जलते रह सकते थे। उनका होना अंधेरे के प्रतीकात्मक रूप से जूझ कर दिखाना भर था। उस रोशनी में एक सुकून से भरा एक आनंद था, लेकिन स्वीकार्यता भी थी। यह स्वीकार्यता कहती थी कि हार मानना भी नहीं है और हार को पचा जाना भी सीखना है। मनुष्य के भीतर का यह बोध उसे एक तरफ तो अहंकार से बचाता था और दूसरी ओर उसी अंधेरे की बांह में सिमटकर चैन की नींद सो जाना भी सिखाता था।

मनुष्य अंधेरे से जितना डरता और घबराता था, उतने भर की रोशनी भी जुगाड़ कर लेता था, लेकिन कालांतर में उसने अंधेरे को जीत लेने का प्रण ठान लिया। दिवाली और आसपास के सब त्योहार बीत जाने पर भी बिजली की लड़ियां बालकनी में लटकी दिप-दिप करती दिख जाती हैं। कई जगहों पर भयानक विराट उजाले में भी उन्हें न जाने किससे लड़ने को छोड़ा गया है। कभी एक कतरा अंधेरा किसी कोने से दबा-छिपा गुजरता भी होगा, तो व्यंग्य भरी मुस्कान के साथ कहता होगा कि 'रहो भाई, तुम्हीं रहो, हम तो चले पाताल'। मनुष्य शायद भूल गया कि जिसे जीतना था, वह तो अपने भीतर का भय, आतंक और अहंकार रूपी अंधेरा था, लेकिन वह तो उल्टे कई-कई गुना बढ़ गया। हुआ यह कि बाहर का भौतिक अंधेरा धरती और आसमान दोनों से मिट गया।

जिस चांद और तारों से भरे आसमान को देखकर मनुष्य के भीतर कलात्मकता का सागर उमड़ता था, अब वह आसमान धूल में नहाया हुआ और कई बार खीझा हुआ दिखाई पड़ता है। पवित्र हिमालय की श्वेत चादर हमारे कीचड़ सने पैरों से मैली हो चुकी है। आसमान भी कुछ ऐसी ही कीचड़ से भरी टूटी-फूटी गली जैसा दिखाई देता है। यों भी, उधर अब देखता ही कौन है? क्या हम रोशनी का अनुपात भूल गए? आखिर कितनी रोशनी चाहिए हमें जिंदा रहने के लिए? क्या उसकी कोई सीमा नहीं? इतनी रोशनी बढ़ गई है कि अब वह वक्त दूर नहीं जब लोग, खासकर शहरों में रहने वाले लोग, अंधकार के अधिकार के लिए कोर्ट-कचहरी करते नजर आएंगे। यह एक कल्पनात्मक स्थिति है, लेकिन प्रकृति के उतार-चढ़ावों को समझने लिए किसी सिरे की तो जरूरत होगी!

इस अपार रोशनी के शोर ने हमारी चेतना को बहरा कर दिया है। क्या हमने कभी उन पार्टियों में शिरकत की है, जहां नीम अंधेरे में संगीत का भयानक शोर मानव शरीर को कंपायमान कर देता है? गजब बात यह कि इसे भी संगीत कहा जाता है, लेकिन हर वह चीज जिसमें गति और लय होती है, क्या वह मनुष्य के जीवन के लिए कल्याणकारी है? अगर ऐसा है तो क्या हम शिव के तांडव की कामना करना चाहेंगे? नहीं, क्योंकि वह संगीत विध्वंस और संहार का है। वह मनुष्य के लिए नहीं।

हर व्यक्ति यह समझने के लिए मनोवैज्ञानिक नहीं हो सकता, लेकिन बारूद से उपजते शोर और प्रकाश को मनुष्य ने कब और कैसे अपने उत्सव और आनंद से जोड़ लिया, यह मनोवैज्ञानिक शोध का विषय है। हमारे पूर्वजों ने उत्सवों को नृत्य और संगीत से जोड़ा, कलात्मक सृजन से जोड़कर भूमि और भित्तियों को सजाने से जोड़ा, अन्न और अग्नि के संबंध को बनाकर सुस्वादु रसों की निष्पत्ति से जोड़ा, मन और शरीर दोनों के शुद्धिकरण और सौंदर्यीकरण से जोड़ा, एक दूसरे के प्रति क्षमाभाव से जोड़कर सामाजिकता को मजबूत करने से जोड़ा! और आज हम उत्सव की सात्विकता को शोर और चकाचौंध के किस दलदल में धकेल आए हैं, जहां या तो मानवीय सौंदर्यबोध का विनाश है या फिर सामाजिक दायित्वबोध का। क्या अब हमने उत्सव के दिनों में स्वार्थ और बेवकूफी की पट्टी नहीं बांध ली है और ऊपर से वह शोर भी हावी कर लिया है, जहां किसी जीव की आंखों में जलता हुआ धुआं भी देखने के लिए हम अयोग्य साबित हो चुके हैं।

दुनिया मेरे आगे

> **अपने उत्सवों को हमने शोषण और दोहन का अवसर बना दिया है। ये सामाजिक हाशियाकरण के औजार बन गए हैं। प्रदर्शन और अहंकार इसके नए स्थापित आयाम हैं। अपार शोर और बाजार के विराट स्वरूप के नीचे, बल्कि बहुत नीचे संवेदना, कलात्मकता और आनंद की धारा लुप्त हो गई है।**

उत्सवों को हमने शोषण और दोहन का अवसर बना दिया है। ये सामाजिक हाशियाकरण के औजार बन गए हैं। प्रदर्शन और अहंकार इसके नए स्थापित आयाम हैं। अपार शोर और बाजार के विराट स्वरूप के नीचे, बल्कि बहुत नीचे संवेदना, कलात्मकता और आनंद की धारा लुप्त हो गई है। इस त्रिवेणी पर उत्सव का आयोजन तो बड़ा भारी है, लेकिन जल की एक बूंद भी नहीं है। आज कबीर होते, तो इस बात पर रो देते। वे अपनी जलती हुई लुकाठी लेकर इन मुर्दों की भीड़ को खदेड़ देते और अपने हाथों से त्रिवेणी की मिट्टी को तब तक कुरदते, जब तक उन्हें वहां सोई हुई सरिता नहीं मिल जाती। वे इस उत्सव की त्रिवेणी को फिर से चांदी से चमकते जल से भर देते, जिसमें मनुष्य अपना मुख धोकर चैतन्य हो पाता। तो कबीर कहां हैं? क्या हम सबको अपने भीतर झांक कर नहीं देखना चाहिए!

इच्छाशक्ति का संकट

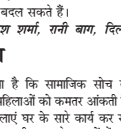

'जोखिम की हवा' (संपादकीय, 21 नवंबर) पढ़ा। दिल्ली की वायु गुणवत्ता जिस तरह हर सर्दी में खराब हो जाती है, वह केवल मौसम की वजह से नहीं, बल्कि हमारी नीतिगत कमजोरी का आईना है। राजधानी लगातार धूल-धुएं की गिरफ्त में है। नागरिकों को सांस लेने में दिक्कत होती है। सवाल यह है कि क्या इस स्थिति से बाहर निकलना संभव है? चीन का स्पष्ट उदाहरण है, जहां दस वर्षों में पीएम 2.5 लगभग आधा हो गया है। इस सफलता के पीछे तीन मूल मंत्र थे- कठोर नीति, कठोर निगरानी और कठोर कार्रवाई। शहर के भीतर कोयला आधारित ऊर्जा संयंत्र बंद किए गए, भारी उद्योगों को सौ से दो सौ किलोमीटर दूर भेजा गया, पुरानी डीजल-पेट्रोल गाड़ियों पर प्रतिबंध लगाया गया और बस बेड़े को लगभग पूरी तरह इलेक्ट्रिक कर दिया गया। साथ ही, निर्माण स्थलों पर धूल पर रोक लगाई गई। लाखों वृक्षों की हरित पट्टी बनाई गई। दिल्ली इस तरीके को अपना कर बहुत तेजी से सुधार ला सकती है। बशर्ते राजनीतिक इच्छाशक्ति दिखे। सच तो यही है कि दिल्ली की हवा का संकट तकनीकी नहीं, इच्छाशक्ति का संकट है। चीन ने दिखाया कि कठोर फैसले हवा बदल सकते हैं।

– चंद्र प्रकाश शर्मा, रानी बाग, दिल्ली

बदलती मानसिकता

महिलाओं के कामकाजी होने के कारण समाज की उस मानसिकता में बदलाव आया है कि बाहर के कार्य पर पुरुषों का ही एकाधिकार है और घर के काम महिलाएं ही करेंगी। महिलाओं के कामकाजी होने पर भारतीय समाज की पारंपरिक मानसिकता बदली है। शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता और जागरूकता ने महिलाओं को हर क्षेत्र में ऊंचाई पर पहुंचाया है। सरकारी-गैर-सरकारी, तकनीकी, प्रशासनिक और खेल हर क्षेत्र में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी ने यह सिद्ध कर दिया है कि सामाजिक सोच की अवधारणा ही महिलाओं को कमतर आंकती है। जिस तरह महिलाएं घर के सारे कार्य कर रही हैं, उसी तरह पुरुष भी अब घरेलू कामों में हाथ बंटाने लगे हैं। वे खाना बना रहे हैं और कपड़े भी धो रहे हैं। यह साझेदारी एक नई सामाजिक समझ का संकेत देती है। इससे न केवल शारीरिक और मानसिक तौर पर महिलाएं सुकून महसूस करती हैं, बल्कि सृजनात्मकता का भी विकास होता है।

– मिथिलेश कुमार, भागलपुर

नशे का संजाल

'नशे के जाल में उलझती युवा पीढ़ी' (आलेख, 24 नवंबर) पढ़ा। नशे के दुष्प्रभाव की जानकारी होने पर भी युवाओं में नशे की लत लगातार बढ़ रही है। आज पूरे देश में नशे का कारोबार तेजी से फैल रहा है। यह चिंता का विषय है कि इस समय हर आयु वर्ग का व्यक्ति इसकी गिरफ्त में है। नशे के जाल से निकालना आज बड़ी चुनौती है। नशा एक ऐसी बुराई है जो हमारे पूरे जीवन को नष्ट कर देता है। नशे का शिकार व्यक्ति परिवार के साथ समाज पर बोझ बन जाता है। युवाओं को इस लत की ओर जाने से रोकना बेहद जरूरी है। जो युवा नशे में फंस गया है, उसे इस दलदल से बाहर निकालने की जरूरत है। आज मादक पदार्थों की भारी-भरकम खेप पकड़े जाने की खबरें आती हैं। हमें आने वाली पीढ़ियों को नशे के जाल से बचा कर एक बेहतर समाज बनाना होगा। नशा करने वाले इससे छुटकारा चाहते हैं, तो मजबूत इच्छाशक्ति होना जरूरी है।

– साजिद अली, चंदन नगर, इंदौर

असुरक्षित बेटियां

जलंधर से हाल ही में एक बच्ची के साथ हैवनियत हुई। इसकी पीड़ा बच्ची के उन रिश्तेदारों से ज्यादा कोई नहीं समझ सकता। लेकिन देश के किसी भी कोने में अगर किसी भी समुदाय या जाति वर्ग की बच्ची के साथ कोई घिनौनी घटना होती है, तो यह भारत के हर नागरिक के लिए शर्मनाक है। कोई भी धर्म इंसान को हैवानियत और अनैतिकता की राह पर चलने की शिक्षा नहीं देता। आखिर इंसान हैवान क्यों बनता जा रहा है? क्या नैतिकता का बिल्कुल पतन हो गया है? क्या लोग अपनी सभ्यता और संस्कृति से दूर हो रहे हैं? देश में समय-समय पर मासूम बच्चियों के साथ दरिंदगी रूह तक कंपा देती है। आखिर बेटियां कब देश में सुरक्षित होंगी? ऐसे कई सवाल हैं जो आज भी देश को आजाद होने के इतने वर्षो बाद हरेक के दिल-दिमाग में उठते हैं। देश में बच्चियों के साथ बढ़ते अपराध चिंता का विषय हैं।

– राजेश कुमार चौहान, जलंधर

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

https://t.me/AllNewsPapersPaid

देशबन्धु

{ संपादकीय }

नई दिल्ली, शुक्रवार 28 नवम्बर 2025

संस्थापक-सम्पादक : स्व. मायाराम सुरजन

बीएलओ की आत्महत्या चिंताजनक

विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) पर विवाद खत्म होने की जगह अब घातक होता जा रहा है। एसआईआर पर विपक्ष की आपत्ति को कुछ पल के लिए अलग रखें तो भी इस समूची प्रक्रिया में पूरे देश में अब तक 25 बीएलओ की मौतें सचमुच चिंता पैदा करने वाली हैं। हालांकि तृणमूल कांग्रेस के मुताबिक 34 मौतें हो चुकी हैं। अब आंकड़ें जो भी हों, अगर एक भी बीएलओ की मौत इस वजह से होती है कि उस पर एसआईआर करवाने का दबाव था या चुनिंदा लोगों के नाम काटने के लिए उसे धमकाया जा रहा था, तो यह एसआईआर की प्रक्रियागत खामी की ओर इशारा करती है। जिस पर तत्काल संज्ञान लेने की जरूरत है। गुजरात, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश इन तमाम राज्यों में भाजपा सरकारें हैं जो पूरी तरह से एसआईआर के समर्थन में है, क्या इन राज्य सरकारों को इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ रहा कि उनके राज्य में इस तरह अकाल मौतें हो रही हैं।

कांग्रेस, समाजवादी पार्टी, तृणमूल कांग्रेस सभी दल ऐसी मौतों पर अब चिंता जता रहे हैं। अभी गोंडा में ही एक मामला सामने आया है, जिसमें अपनी शादी से एक दिन पहले बीएलओ विपिन यादव ने आत्महत्या कर ली। विपिन यादव के परिवार का कहना है कि एसडीएम और लेखपाल एसआईआर में ओबीसी वोटरों के नाम काटने का दबाव बना रहे थे। विपिन यादव ने ऐसा करने से मना किया तो उन्हें नौकरी से निकालने और पुलिस से उठवाने की धमकी दी गई। परिवार का आरोप है कि विपिन यादव से कहा गया था कि ओबीसी वोटरों के नाम काटो वरना नौकरी खत्म कर दी जाएगी। जिसके बाद विपिन यादव ने आत्महत्या कर ली। यह मामूली आरोप नहीं है और इसकी गहन जांच की जरूरत है। कांग्रेस ने इस पर लिखा भी है कि ज्ञानेश कुमार और नरेंद्र मोदी लोकतंत्र को खत्म करने पर लगे हैं और एसआईआर उसी का औजार है। वहीं नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी ने लिखा है कि 'ओबीसी वोटरों के नाम काटो, वरना नौकरी चली जाएगी।' दबाव, धमकी' और नतीजा ? आखिर में आत्महत्या। एसआईआर के नाम पर पिछड़े-दलित-वंचित-गरीब वोटरों को लिस्ट से हटाकर भाजपा अपनी मनमाफ़िक वोटर लिस्ट तैयार कर रही है। चुनाव आयोग लोकतंत्र की हत्या की ज़िम्मेदार है।

ममता बनर्जी ने भी चुनाव आयोग पर इस प्रक्रिया को लेकर सवाल उठाए हैं और उसे भाजपा के पक्ष में काम करने के लिए घेरा है। जिस पर भाजपा नेताओं ने कहा है कि ममता बनर्जी अपनी हार के बहाने बता रही हैं। इसी तरह अखिलेश यादव भी बीएलओ की मौतों पर मुआवजे की मांग कर रहे हैं और यह भी बता रहे हैं कि किस तरह इंडिया गठबंधन की जीती हुई सीटों पर वोट काटने की तैयारी हो रही है, तो भाजपा उनकी भी आलोचना कर रही है। यह प्रवृत्ति स्वस्थ लोकतंत्र की निशानी है। विपक्ष के पास अभी कम राज्य हैं, या भाजपा की तुलना में उसका जनाधार कम है, तो इससे उसका राजनैतिक महत्व कम नहीं हो जाता। याद रहे कि लोकसभा में भाजपा खुद के बूते बहुमत हासिल नहीं कर पाई, क्योंकि विपक्ष उस पर भारी पड़ गया। अगर विपक्षी नेता किसी मुद्दे पर ध्यान दिला रहे हैं तो सरकार का काम है कि उसे पूरी ईमानदारी से सुने। सरकार की तरह चुनाव आयोग की भी जिम्मेदारी है कि वह अपनी निष्पक्षता का यकीन सारे दलों को दिला पाए। फिलहाल लगता है कि चुनाव आयोग को विपक्ष के संदेहों से कोई फर्क नहीं पड़ता।

न्यायपालिका से भी यही अपेक्षित है कि वह बीएलओ की अकाल मौतों का स्वत: संज्ञान ले। अभी सुप्रीम कोर्ट में चीफ जस्टिस सूर्यकांत और जस्टिस जॉयमाल्य बागची की बेंच एसआईआर की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर सुनवाई कर रही है। बुधवार को सुनवाई के दौरान मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत ने कहा, 'आधार कार्ड एक क़ानून की रचना है। और वैध है। इस हद तक कि यह उस पर आधारित लाभों या विशेषाधिकारों को स्वीकार करता है। कोई भी इस पर विवाद नहीं कर सकता। लेकिन क्या आधार को मतदान के अधिकार से जोड़ा जा सकता है। उन्होंने यह भी पूछा कि क्या आधार रखने वाले घुसपैठियों को वोटिंग के अधिकार देना चाहिए। वैसे मुख्य न्यायाधीश को चुनाव आयोग से पहले यह पूछना चाहिए था कि बिहार में उसे कितने घुसपैठिए मिले, उनके नाम वह बताएं। इसी तरह उन्हें बीएलओ की मौत पर भी सवाल करने चाहिए थे। क्योंकि 2003 में जो देशव्यापी एसआईआर हुआ था, वह प्रक्रिया 6 माह में पूरी हुई थी। तब न तो कहीं विरोध हुआ था और न ही कोई खुदकुशी सामने आई थी। अभी चुनाव आयोग ने बीएलओ का मानदेय बढ़ाकर दो गुना कर दिया है, लेकिन इससे समस्या नहीं सुलझ रही, क्योंकि कम समय में ढेर सारा काम निपटाने का अमानवीय दबाव है। जिस पर सरकार ध्यान नहीं दे रही तो न्यायपालिका से ही उम्मीदें हैं।

वैसे मुख्य न्यायाधीश की टिप्पणी से साफ है कि अदालत आधार को वैध पते के रूप में मानने से इनकार कर रही है। इसलिए वो नागरिकता का भी प्रमाण नहीं हो सकता। भारत का चुनाव आयोग भी यही बात कह रहा है। लेकिन फिर आधार कार्ड की टैग लाइन मेरा आधार, मेरी पहचान को क्यों बरकरार रखा गया है। अगर वो नागरिकता की पहचान ही नहीं है। 2016 में मोदी सरकार में ही आधार की टैगलाईन 'आम आदमी का अधिकार' बदलकर 'मेरा आधार मेरी पहचान' कर दी गई थी। अब नाम, नागरिकता, पहचान सब धुंधले हो रहे हैं।

बिहार पर भाजपाई जीत का मतलब

भाजपा के स्टार प्रचारक और उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ अपनी जनसभाओं में अक्सर एक वाक्य कहा करते हैं-बंटोगे तो कटोगे, एक रहोगे तो सेफ रहोगे। यह बात वे हिन्दू-मुसलमान ध्रुवीकरण कराने और जातियों में बंटे हिन्दू समाज की जातिगत गोलबंदियों को तोड़ने के लिए कहा करते हैं। लेकिन बिहार विधान सभा के 2020 और 2025 के चुनाव के अनुभव पर यह बात ज्यादा अच्छी तरह लागू होती है। एनडीए नामक गठबंधन तब भी चुनाव में था और नीतीश कुमार भी साथ थे लेकिन राजद के नेतृत्व वाला विरोधी महागठबंधन बस किसी तरह हार पाया- अगर बेइमानी वाले आरोप भूल भी जाएं तो पूरे बिहार स्तर पर वोटों का अंतर मात्र कुछ हजार का था। तब स्पष्ट लगता था कि भाजपा बिहार जीतना चाहती है और नीतीश को किनारे बैठा देना चाहती है। उसने नीतीश के खिलाफ मीडिया से लेकर मुंहामुंही अभियान चलाया और शासन में ठीक-ठाक काम करके भी उनकी छवि अवांछित बूढ़े वाली हो गई थी। और इस काम में चिराग पासवान की खुली सेवाएं ली गईं जिन्होंने एनडीए में रहते हुए जदयू के सभी उम्मीदवारों के खिलाफ लोजपा के उम्मीदवार उतारे थे और बुरी पराजय के बावजूद भाजपा से पुरस्कृत हुए। संयोग ऐसा हुआ कि रिजल्ट ऐसे आये कि नीतीश के बगैर काम नहीं चलने वाला था और फिर उन्होंने जो जो कहा भाजपा ने माना। इस बार एनडीए एक रहा और सेफ रहा। सम्राट चौधरी, दिलीप जायसवाल, संजय जायसवाल और मंगल पांडेय के खिलाफ प्रशांत किशोर के आरोपों के बाद पंगु बन गई भाजपा के लिए नीतीश की आड़ रही, चिराग अनुशासित रहे और एनडीए ने भारी जीत हासिल कर ली।

नतीजों के गणित से भाजपा भले सबसे बड़ी पार्टी बनी लेकिन सीटों का सबसे ज्यादा लाभ जदयू को हुआ और चुनाव पूरी तरह नीतीश कुमार के नाम पर लड़ा गया। लेकिन नतीजे आते ही भाजपा बिहार जीतती लग रही है। सरकार पर उसके दबदबे से लेकर विपक्ष के ध्वस्त होने, जदयू के अंदर उसकी ज्यादा चलने और आगे की राजनीति में पक्ष-विपक्ष में कोई और प्रतिद्वंद्वी न दिखने से भाजपा बम बम है। यह चुनाव उसने बिना नेता, बिना कोई नया सामाजिक आधार जोड़े और सिर्फ संसाधनों तथा प्रबंधन के सहारे जीता। और संसाधनों में कितना उसका अपना फंड था और कितना केंद्र सरकार का यह भी विवाद का मुद्दा हो सकता है। और जिस तरह से उसने चुनाव के पहले दर्जन भर योजनाओं में धन बढ़ाकर लोगों को अपनी तरफ मोड़ा वह शैली भी नीतीश कुमार की न थी। जदयू के अंदर भी भाजपा की तरफ रुझान रखने वाले नेताओं का दबदबा बढ़ा है। चुनाव लड़ा तो गया नीतीश कुमार के नाम पर लेकिन ठीक चुनाव से पहले केन्द्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने ही नहीं जदयू नेता ललन सिंह ने भी कह दिया कि नेता विधायक दल में चुना जाएगा। मंत्रालयों के बंटवारे में भाजपा कोटे से ज्यादा लोग मंत्री बने और गृह मंत्रालय पहली बार नीतीश कुमार से छिना।

अरविन्द मोहन

> नतीजों के गणित से भाजपा भले सबसे बड़ी पार्टी बनी लेकिन सीटों का सबसे ज्यादा लाभ जदयू को हुआ और चुनाव पूरी तरह नीतीश कुमार के नाम पर लड़ा गया। लेकिन नतीजे आते ही भाजपा बिहार जीतती लग रही है। सरकार पर उसके दबदबे से लेकर विपक्ष के ध्वस्त होने, जदयू के अंदर उसकी ज्यादा चलने और आगे की राजनीति में पक्ष-विपक्ष में कोई और प्रतिद्वंद्वी न दिखने से भाजपा बम बम है।

बिहार के नतीजों को लेकर विपक्ष अब देश और प्रदेश में एक नया ही मुद्दा उठाया जा रहा है-धांधली का। वह कहां तक जाएगा, कितना सही गलत है यह इस आलेख का विषय नहीं है। लेकिन जो साफ दिख रहा है वह यही है कि अब बिहार की सरकार ही नहीं राजनीति की पूरी डोर ही भाजपा के हाथ में आ गई है। और सम्राट चौधरी, विजय सिन्हा, मंगल पांडेय जैसों को मंत्री बनाकर भाजपा नेतृत्व ने साफ संकेत दिया है कि उसके लिए मनमानी करना ही सबसे कुशल प्रबंधन है। जिस तरह उसने चुनाव जीता है उसमें यह बात शामिल थी कि प्रबंधन और संसाधन से हम कुछ भी हासिल कर सकते हैं। इस बार न जाति का कार्ड चला न संप्रदाय का। और अगर पुराने फार्मूले की अभ्यस्त राजद या सामाजिक न्याय का नया चैंपियन बनाने में लगी कांग्रेस ने दुलारचंद यादव हत्याकांड के बाद जातिगत ध्रुवीकरण करने की कोशिश की तो इस बार उसे भी भाजपा के कुशल रणनीतिकारों ने जंगल राज से जोड़कर यादव राज आने के डर में बदल दिया। यह डर अगड़ों में तो हुआ ही अति पिछड़ा, पिछड़ा (यादव के अलावा), दलितों और मुसलमानों में भी आ गया।

यह नया बिहार है और इसे बनाने का श्रेय भाजपा को दिया जाए न जाए लेकिन इसकी समझ अकेले उसके रणनीतिकारों को थी। बिहार में विकास की बयार बहती हो ऐसा नहीं है पर वह मण्डल-कमंडल की राजनीति से आगे आ चुका है यह कहने में हर्ज नहीं है। और इसकी समझ ज्यादातर राजनैतिक पंडितों को नहीं थी। इसी मामले में प्रशांत किशोर थोड़े अलग हैं लेकिन उनकी चुनावी लड़ाई की कमियों के बारे में बहुत कुछ कहना पड़ेगा। उन्होंने भी नई राजनीति की जमीन बनाने में एक भूमिका निभाई है। भाजपा की खूबी यह है कि सत्ता में होते हुए और संघ जैसे जड़ संगठन के साथ रहते हुए भी उसने मजे से अपने अंदर बदलाव किया। हिन्दुत्व का कार्ड मद्धिम पड़ता गया है और मोदी का मैजिक (जिनमें झूठा स्वर्ग दिखाने का खेल शामिल था) टूटते जाने के साथ उसने शासन और डायरेक्ट डिलीवरी का ऐसा दो आधार अपनाया है कि विपक्ष और उसकी सरकारों को दिक्कत होने लगी है।

मुख्य विपक्षी कांग्रेस समेत सारे विपक्ष को सचमुच बहुत कुछ नहीं सूझ रहा है। और कुछ न हो तो वोट चोरी या ईवीएम का मुद्दा उठाते रहने से उस सवाल का महत्व भी कम हुआ है। बिहार चुनाव के बाद एक बार फिर यही किया जा रहा है। संयोग से बंगाल, केरल और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में अभी चल रहे गहन मतदाता सर्वेक्षण में दिख रही कमजोरियों और विपक्ष के मजबूत दलों के भी शोर मचाने से यह मुद्दा जिंदा है। पर कांग्रेस और विपक्ष 2024 के लोक सभा चुनाव में मिले बेहतर परिणामों के बाद जिस कदर चुप रहा है और बिखरा है उसमें बिहार चुनाव नरेंद्र मोदी और भाजपा की राजनीति को चमकाएंगे क्योंकि अभी तक कभी हाथ न आया बिहार अब उनके हाथ आ गया है। फिर जिन राज्यों में कांग्रेस या विपक्ष की सरकारें हैं वहां शासन में साल-सवा साल में कुछ नया न कर पाने से भी 2024 में मद्धिम पड़ी मोदी राजनीति को लाभ हुआ है। बिहार के धक्के के बाद विपक्षी कैसे संभलता है और मोदी जी उसका कैसा उपयोग करते हैं इस पर सबकी नजर है। वे बंगाल की तरफ बढ़ने का इशारा लगातार दे रहे हैं। बंगाल में विपक्षी एकता शून्य है लेकिन तृणमूल ने अकेले भाजपा को बाहर रखा है। देखना है कि अब कैसी लड़ाई होती है।

अर्थव्यवस्था में डिजिटल छलांग के भरोसे उद्यमों का विकास संभव नहीं

■ आर. सूर्यमूर्ति

भारत के अनौपचारिक क्षेत्र (अनइनकॉरपोरेटेड नॉन-एग्रीकल्चरल सेक्टर) के गत तिमाही के बुलेटिन, पहली नज़र में, वैश्विक झटकों से जूझ रही अर्थव्यवस्था के लिए एक मामूली जीत की तरह लगते हैं: डिजिटल संरचना अपनाने की रफ़्तार तेज़ी से बढ़ रही है, उद्यम थोड़े आगे बढ़े हैं, और रोजगार स्थिर बना हुआ है। लगभग 39प्रतिशत उद्यम अब किसी न किसी रूप में इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं। यह एक ऐसे सेक्टर के लिए एक चौंकाने वाला बदलाव है जो लंबे समय से खाता-बही और नकद लेन-देन पर टिका हुआ है। उद्यमों की संख्या बढ़कर 7.97 करोड़ हो गयी, रोजगार12.86 करोड़ पर बना रहा, और शहरी श्रमिकों को काम पर लेने में मज़बूती आयी।

लेकिन यह विस्तार की नहीं, बल्कि दबाव में ढलने की कहानी है, एक ऐसी अर्थव्यवस्था जो ज़रूरत की वजह से डिजिटाइज़ हो रही है, न कि बड़े सपने की वजह से, और एक अनौपचारिक क्षेत्र जो उस बोझ को बनाए रखने के लिए ज़रूरी उत्पादकता, तेज़ी या ढांचागत समर्थन हासिल किए बिना भारत के श्रम बाजार का बोझ उठा रहा है।

> एनएसओ को अपने सैंपलिंग फ्रेमवर्क को फिर से डिज़ाइन करना, तिमाही अनुमानों की ओर बढ़ना, और हाई-फ्रीक्वेंसी मेजरमेंट पर ज़ोर देना, सभी स्वागतयोग्य हैं। लेकिन आंकड़ों से आखिर में यह पता चलता है कि यह सेक्टर बहुत ज़्यादा फैला हुआ है, तेज़ी से बदल रहा है, अपने आप डिजिटाइज़ हो रहा है— फिर भी यह ऐसे माहौल का इंतज़ार कर रहा है जो इसे सिर्फ़ एक सेफ़्टीनेट से ज़्यादा बनने दे।

एक सेक्टर जो उद्यम नहीं जोड़ रहा है, बल्कि तेज़ी से ऑनलाइन हो रहा है, वह बाहरी दबावों का जवाब दे रहा है: कस्टमर डिजिटल पेमेंट की मांग कर रहे हैं, बाजार ऑनलाइन हो रहे हैं, जीएसटी से जुड़े कम्प्लायंस में सख्ती हो रही है, और आपूर्ति श्रृंखला का तेज़ी से पता लगाने की क्षमता और ऑनलाइन इनवॉइसिंग की ज़रूरत पड़ रही है। यह कोई डिजिटल क्रांति नहीं है; यह ज़िंदा रहने का काम है।

उद्यमों में मामूली बढ़ोतरी— लगभग 8 करोड़ में लगभग 3 लाख— नई उद्यमिता ऊर्जा का संकेत देने के लिए बहुत कम है। जब भारत 2000 के दशक में सबसे तेज़ी से बढ़ रहा था, तो उद्यम वृद्धि एक मुख्य वजह थी: छोटे मैन्युफैक्चरिंग क्लस्टर बढ़े, रिटेल इकाइयां बढ़ीं, और ग्रामीण और शहरी दोनों जगहों पर सर्विस व्यापार तेज़ी से बढ़े। आज का उद्यम आंकड़ा एक ऐसे क्षेत्र की ओर इशारा करता है जो बढ़ नहीं रहा है, बल्कि बना हुआ है। विस्तार के बजाय, डेटा जो दिखाता है वह निरंतरता है— एक होल्डिंग पैटर्न।

गंभीर बात रोजग़ार का कम्पोज़िशन है। काम पर रखे गए कामगार का हिस्सा 24.38 प्रतिशत से बढ़कर 25.91 प्रतिशत हो गया है। यह छोटे लेवल पर एक सकारात्मक संकेत है — इसका मतलब है कि उद्यमों में इतना हौसला है कि वे वेतन का खर्च उठा सकें। लेकिन समष्टिस्तर पर तस्वीर उतनी अच्छी नहीं है। इस क्षेत्र में अभी भी लगभग 60प्रतिशत कामगार तो मालिक हैं, जो याद दिलाता है कि भारत का रोजगार आधार अभी भी ज़्यादातर स्वरोजगार, कम उत्पादकता वाला और झटकों के प्रति कमज़ोर है। स्व-शोषण पर हावी श्रम बाजार उस तरह का वेतन आधारित विकास नहीं दे सकता, जिसकी कई अर्थशास्त्रियों का कहना है, भारत को अभी तुरंत ज़रूरत है। अनइनकॉरपोरेटेड सेक्टर श्रमिकों को इसलिए काम पर नहीं लगा पा रहा है वे बढ़ रहे हैं, बल्कि इसलिए क्योंकि घरों के पास रोजगार के बेहतर अवसर नहीं हैं। यह 'रोजगार में लोच का फंदा' है: जब औपचारिक क्षेत्र में रोजगार वृद्धि की दर गिरती है, तो अनौपचारिक क्षेत्र अपने आप बढ़ जाता है — ताकत से नहीं, बल्कि अवसरों की कमी से।

यह उछाल एक जाने-पहचाने सीजनल पैटर्न में फिट बैठता है: मज़दूर खरीफ़ के मौसम के बाद खेती से लौटते हैं और छोटी वर्कशॉप, फैब्रिकेशन यूनिट, रिपेयर शॉप और घर से चलने वाले मैन्युफैक्चरिंग में फिर से लग जाते हैं। यह लेबर रोटेशन है, लेबर अपग्रेडिंग नहीं। सालों से, नीति बनाने वालों ने इन तिमाही उतार-चढ़ाव को लगातार मैन्युफैक्चरिंग में सुधार के संकेत के तौर पर गलत समझा है।

शहरी-ग्रामीण तुलना अधिक वीभत्स है। शहरी कामगारों की संख्या 6.61 करोड़ से बढ़कर 6.91 करोड़ हो गई, जो एक ही तिमाही में एक बड़ी बढ़ोतरी है। ग्रामीण रोजग़ार में मुश्किल से ही कोई बदलाव आया। यह बड़े मैक्रो संकेतक के मुताबिक है: उपभोग अभी भी शहरी उच्च-मध्य वर्ग के परिवारों से चलता है, ग्रामीण मांग अभी भी कमज़ोर है, और ज़रूरी चीज़ों- खासकर खाने की चीज़ों- में महंगाई ने समय-समय पर ग्रामीण वास्तविक आय को कम किया है।

इसलिए, अनइनकॉरपोरेटेड सेक्टर का शहरी झुकाव भारत की रिकवरी को आकार देने वाले गहरे अंतर को दिखाता है।

महिलाओं के रोजग़ार की बढ़ी मज़बूती — कार्यबल का लगभग 29प्रतिशत— कुछ ढांचागत रूप से अच्छे संकेतों में से एक है। अनइनकॉरपोरेटेड सेक्टर में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी घर से काम, माइक्रो-सर्विसेज़ और डिजिटल-इनेबल्ड स्वरोजगार की ओर बदलाव का संकेत देती है परन्तु इसकी भी सीमाएं हैं। अनौपचारिक, कम पूंजी वाले उद्यमों में केंद्रित महिलाएं मैक्रोइकॉनॉमिक उत्पादकता पर कोई खास असर नहीं डाल सकतीं। विकास पथ, कर्ज तक पहुंच, या औपचारिक आपूर्ति श्रृंखला से लिंक के बिना, महिलाओं के श्रम का लाभ कम विकास दर लूप में फंसा रहता है।

भारत के विकास की कहानी तेज़ी से एक उलझन पर निर्भर होती जा है: वह यह कि अनौपचारिक क्षेत्र को औपचारिकीकरण बढ़ने पर भी कामगारों को काम पर लेते रहना चाहिए; उद्यमों को आगे बढ़ाने का फ़ायदा उठाए बिना डिजिटाइज़ करना होगा; उत्पादकता न बढ़ने पर भी रोजग़ार बढ़ना चाहिए; और यह भी कि अर्थव्यवस्था को तब भी बढ़ना चाहिए जब उसका सबसे बड़ा जॉब-क्रिएटिंग सेगमेंट कम मार्जिन और कम बफ़र पर काम कर रहा हो।

एनएसओ को अपने सैंपलिंग फ्रेमवर्क को फिर से डिज़ाइन करना, तिमाही अनुमानों की ओर बढ़ना, और हाई-फ्रीक्वेंसी मेजरमेंट पर ज़ोर देना, सभी स्वागतयोग्य हैं। लेकिन आंकड़ों से आखिर में यह पता चलता है कि यह सेक्टर बहुत ज़्यादा फैला हुआ है, तेज़ी से बदल रहा है, अपने आप डिजिटाइज़ हो रहा है — फिर भी यह ऐसे माहौल का इंतज़ार कर रहा है जो इसे सिर्फ़ एक सेफ़्टीनेट से ज़्यादा बनने दे। यह एक कड़वी सच्चाई है: भारत की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था वह सब कुछ कर रही है जो वह कर सकती है, लेकिन यह अकेले देश के विकास को बोझ ज़्यादा समय तक नहीं उठा सकती।

ललित सुरजन की कलम से

चुनावों में बदजुबानी

'आज अगर विभिन्न दलों के उम्मीदवार शिष्टता की सारी सीमाएं तोड़ रहे हैं तो उसके लिए सबसे बड़े दोषी भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी हैं। इस बारे में बहुत कयास लगाए गए हैं कि स्थापित परंपराओं को त्यागकर एक व्यक्ति को चुनाव पूर्व ही प्रधानमंत्री पद का दावेदार क्यों घोषित किया गया। जो भी हो, ऐसा होने से यह स्थिति बनी कि चुनाव व्यक्ति केंद्रित बना दिया गया। जब कांग्रेस ने प्रत्युतर में अपनी ओर से किसी की उम्मीदवारी घोषित नहीं की तो भाजपा के उकसावे पर मीडिया ने खुद होकर राहुल गांधी को नरेंद्र मोदी का प्रतिस्पर्धी घोषित कर दिया। उधर अरविंद केजरीवाल भी उसी रास्ते का अनुसरण करते हुए मंच पर अवतरित हो गए। इस परिदृश्य में भाजपा और नरेंद्र मोदी दोनों के लिए यह आवश्यक हो गया कि जैसे भी हथकंडे अपनाना पड़ें, श्री मोदी को एक अजेय योद्धा के रूप में प्रस्तुत किया जाए और वही हो रहा है।'

(देशबन्धु में 24 अप्रैल 2014 को प्रकाशित)

https://lalitsurjan.blogspot.com/2013/05/blog-post_30.html

पावन प्रसंग

हमारे जीवन का संबल : उपासना

उपासना हमारे जीवन का संबल और मार्गदर्शक है। उपासना हमको रास्ता बताती है और उपासना के सहारे हम बड़ी से बड़ी मंजिल को पार कर सकते हैं, लेकिन इसमें साधना हमारी वो चीज है, जैसे जहाज में एक सुई लगी रहती है और वो हमें दिशा बताती रहती है। उत्तर को जाना है कि दक्षिण को जाना है। वो सुई जहाज वालों को मार्ग बताती रहती है,दिशा देती रहती है। वैसे ही उपासना हमारे जीवन को दिशा देती है, जैसे ध्रुवतारा होता है, अंधेरी रात को राहगीर उस छोटे से ध्रुवतारे का सहारा लेकर अपनी मंजिल को प्राप्त कर लेता है। चांद-तारों का नहीं, चांद-तारे अपनी जगह पर हैं, वो प्रकाश देते हैं, लेकिन उस ध्रुवतारे का सहारा लेकर के राहगीर अपने लक्ष्य को पा लेता है। तो उपासना जो है, ध्रुवतारे के समान है और उस सुई के समान है, जो हमारे जीवन को लक्ष्य की ओर ले जाती है, लेकिन हम दिशाहीन होते हैं। हमको दिशा नहीं मालूम है। हम जो जिधर भटकाव है, उधर ही भेड़चाल में चल पड़ते हैं। एक बार कई लड़के गंगाजी की तरफ से नहाकर आ रहे थे, कुछ गंगाजल लेकर आ रहे थे मैंने उनको पढ़ा और देखा कि इनके जीवन में कितनी आस्था का अभाव है कि जहां भी आए हैं, इनको यह नहीं मालूम कि यह वक्त पूर्णाहुति का है, या सैर करने का ? यह इस वातावरण का प्रभाव है। गंगाजल पीछे भी ला सकते थे, यही समय आपको गंगाजल घर लाने को रह गया था ? लेकिन दिशाहीनता की बात हो रही थी। उनकी गलती नहीं थी क्योंकि जीवन में उन्होंने साधना को महत्व नहीं दिया, उपासना को महत्व नहीं दिया, आस्था को महत्व नहीं दिया, वे तो जिधर को चले तो भेड़चाल की तरह चल दिए। हमको लक्ष्य तक पहुंचने के लिए उपासना आवश्यक है, पर उपासना से ज्यादा आपको साधना पर जोर देना पड़ेगा।

उपासना हमको मंजिल बताती है, साधना हमको सिखाती है कि अपने ऊपर कड़ाई साधिए। यह अनगढ़पन है, उसको गढ़िए। विचारों से साधना करनी पड़ेगी। कड़ाई रुई जैसी होती है वह जितनी धुनी जाएगी उतनी ही फूलेगी। आप रुई को ऐसे ही छोड़ दीजिए वह वैसी ही रहेगी। जितना धुनेंगे खूब फूलेगी फिर उसे गद्दे में भरवा लो, रजाई बनवा लो, तकिए बनवा लो, आपका काम चल जाएगा। हम समर्थ बनें, किसी भी प्रकार के विकारों को अपने भीतर रहने न दें, अपनी आत्मा को इतना उज्जवल बनाएं कि उससे अपने स्रोत की गरिमा का भान हो सके। यही वास्तव में मनुष्य की वह प्रगति है। अपनी सब इच्छाओं को परमात्मा को समर्पित कर दें, फिर उसे ही अपनी कार्यनीति बना उच्चतर उमंग का प्रतिनिधित्व करें। यही दैवी मार्ग है, इसके बिना साधना में सफलता नहीं मिलती तथा मनुष्य अंधक्रियाकलापों में व्यस्त रहकर अपने जीवन की इतिश्री कर लेता है। हमें चाहिए कि वह शक्ति जो जगाए रखे, जो तन मन प्राण सभी में ओत-प्रोत हो व हमारा मार्गदर्शन करे। फिर हमारा जीवन अधूरा नहीं रह जाता। नवीन शक्ति एवं उत्साह की प्राप्ति होती है तथा हर प्रकार के पीड़ा से मुक्त होकर हम आरोहण के पथ पर चल पड़ते हैं।

-अखंड ज्योति

आपके पत्र

'हमेशा ऑनलाइन' रहने के मायाजाल की दौड़ में थकते युवा

आज का भारतीय समाज एक ऐसे संक्रमणकाल से गुजर रहा है जहां तकनीक अवसर भी दे रही है और संकट भी खड़ा कर रही है। सोशल मीडिया का तेजी से बढ़ता दायरा इस संक्रमणकाल का सबसे बड़ा प्रतीक है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, यूट्यूब, एक्स और अन्य प्लेटफॉर्म ने आम लोगों को वह मंच दिया है, जिसकी कल्पना कुछ दशक पहले संभव नहीं थी। लेकिन यह सशक्तिकरण जितनी उम्मीदें लेकर आया था, उतने ही उलझाव उसने मनोवैज्ञानिक और सामाजिक स्तर पर पैदा कर दिए हैं। युवा पीढ़ी लाइक, व्यूज़, फॉलोअर्स और डिजिटल सेलिब्रिटी बनने की सतही चाह में उलझकर मानसिक थकान और सामाजिक दूरी के ऐसे भंवर में फंसती जा रही है जो दिखाई तो नहीं देता, पर भीतर तक कमजोर कर रहा है। भारत में सोशल मीडिया उपयोगकर्ताओं की संख्या 50 करोड़ पार कर चुकी है—यह दुनिया के सबसे बड़े डिजिटल समुदायों में से एक है। यह संख्या जितनी विशाल है, उससे कहीं अधिक विशाल है वह दबाव, जो इसने युवाओं के मन पर डाला है। सुबह उठते ही फोन उठाकर रात को आंख बंद होने तक स्क्रीन पर स्क्रोल करते रहने की आदत आज सामान्य लगती है, लेकिन यह सामान्यता ही सबसे बड़ा खतरा बन चुकी है।

डिजिटल पहचान की अंधी प्रतिस्पर्धा ने मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक जीवन और वास्तविक अनुभवों को संकट में डाल दिया है। सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव युवाओं के मानसिक संतुलन और जीवनशैली पर गहरा असर डाल रहा है। लाइक, व्यूज़ और फॉलोअर्स की प्रतिस्पर्धा ने उन्हें एक अदृश्य दबाव में धकेल दिया है, जहां डिजिटल मान्यता ही आत्मविश्वास का आधार बनती जा रही है। घंटों स्क्रोल करना, हर पल ऑनलाइन बने रहना और दूसरों से तुलना करना तनाव, अनिद्रा, चिंता और अकेलेपन को जन्म दे रहा है। वास्तविक रिश्ते, संवाद और अनुभव स्क्रीन के पीछे छूटते जा रहे हैं। समाधान डिजिटल अनुशासन, सीमित उपयोग, नोटिफिकेशन नियंत्रण और वास्तविक दुनिया को प्राथमिकता देने में है। संतुलन ही मानसिक शांति का आधार है।

समस्या जितनी बड़ी है, उसका समाधान भी उतना ही व्यवहारिक है—डिजिटल अनुशासन। युवाओं को प्रतिदिन एक निश्चित समय तय करना चाहिए—इससे आदतें नियंत्रित होंगी और थकान कम होगी। अनावश्यक नोटिफिकेशन बंद करने से मन पर होने वाला दबाव कम होता है। खुद को दूसरों के बनाए 'हाइलाइट रील' से तुलना करना बंद करना जरूरी है। परिवार, दोस्तों, किताबों, प्रकृति, खेल और रचनात्मक गतिविधियों पर ध्यान देना सकारात्मक ऊर्जा देता है। स्कूलों-कॉलेजों में डिजिटल व्यवहार और मानसिक स्वास्थ्य पर पाठ्यक्रम जोड़ना समय की मांग है। अभिभावकों को भी बच्चों में मोबाइल उपयोग की आदतों पर संयमित और संवेदनशील निगरानी रखनी चाहिए।

युवाओं को यह समझने की आवश्यकता है कि उनकी वास्तविक प्रतिभा, भावनाएं, रचनात्मकता और मेहनत किसी स्क्रीन पर आए आंकड़ों से अधिक मूल्यवान हैं। जीवन का अर्थ डिजिटल तालियों से नहीं, बल्कि वास्तविक अनुभवों, रिश्तों और आत्मविकास से बनता है। सोशल मीडिया ने दुनिया को छोटा जरूर बनाया है, लेकिन इसका उपयोग यदि संयमित न हो तो यह हमारे ही जीवन का दायरा छोटा कर देता है। समय आ गया है कि युवा इस मायाजाल से जागें, स्क्रीन से थोड़ी दूरी बनाएं और अपनी वास्तविक पहचान की ओर लौटें। क्योंकि लाइक-व्यूज़ की यह दौड़ अंतहीन है—और इसमें थकना निश्चित है। लेकिन जीवन की दौड़ के रास्ते अनंत हैं, अर्थपूर्ण हैं और सच्चे हैं।

-डॉ सत्यवान सौरभ

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770

ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

चिंतन

प्रदूषण से निपटने को कड़े कदम उठाने की जरूरत

एक समय था जब जहरीली हवा के मामले में चीन का शहर बीजिंग दुनिया भर में बदनाम था। एक्यूआई 500 को भी पार कर चुका था। चौतरफा प्रदूषण को लेकर चीन निशाने पर था। विदेशी कंपनियां निवेश करने से हिचकने लगीं थी। चीनी अमीर दूसरे देशों में बसने के बारे में सोचने लगे। वायु प्रदूषण की समस्या चीन के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शर्मिंदगी का कारण बन गई थी। बीजिंग में 2007 से एयर पॉल्यूशन शुरू हुआ तो 2011 तक पहुंचते-पहुंचते हालात दिल्ली से भी बदतर हो गए थे। शहर घने ग्रे स्मॉग से ढका रहता था। पीएम 2.5 का स्तर खतरनाक हो गया। 2013 में बीजिंग में एक्यूआई 755 तक दर्ज किया गया। उस साल कई रिपोर्टों में बीजिंग को दुनिया का सबसे प्रदूषित शहर और चीन के इतिहास में सबसे प्रदूषित साल करार दिया गया। तब ड्रैगन ने आक्रामक, सख्त और सुनियोजित नीतियां व योजनाएं बनाईं। इस पर तुरंत अमल शुरू किया गया। चीन सरकार ने 2013 में 5 साल के लिए एयर पॉल्यूशन प्रिवेंशन एंड कंट्रोल एक्शन प्लान बनाया। इसमें बीजिंग-तियानजिन-हुबेई क्षेत्र के लिए पीएम 2.5 कम करने के सख्त लक्ष्य तय किए गए। सरकार ने उद्योगों, ईंधन मानकों और शहर नियोजन के लिए कठोर नियम लागू किए। साल 2018 से ब्लू स्काई प्रोटेक्शन कैंपेन शुरू हुआ, जिसने नियमों को और कड़ा कर दिया गया। सरकार ने बीजिंग के आसपास के हजारों छोटे और अत्यधिक प्रदूषक कारखानों को या तो बंद कर दिया था या फिर दूर के प्रांतों में शिफ्ट कर दिया। स्टील, सीमेंट और कोयला पर चलने वाले बिजली संयंत्रों जैसे भारी उद्योगों को क्लीन एनर्जी और टेक्नोलॉजी अपनाने या फिर बीजिंग छोड़ने को मजबूर किया गया। साल 2017 में अपना आखिरी कोयला-आधारित बिजली संयंत्र भी बंद कर दिया। इसी के साथ प्राकृतिक गैस और नवीकरणीय ऊर्जा की ओर रुख किया। तभी सरकार ने तय किया कि बीजिंग में बिजली आधारित वाहनों का उपयोग सबसे ज्यादा किया जाएगा। इसके लिए जगह-जगह चार्जिंग प्वाइंट लगाए गए, ताकि लोगों में बिजली वाहनों के प्रति भरोसा जगाया जा सके। इसका खासा असर भी दिखाई दिया। महज तीन साल में ही 30 फीसदी बिजली के वाहन शहर की सड़कों पर दौड़ने लगे, जिनका नतीजा है कि आज उसकी हवा साफ हो चुकी है। एक्यूआई लेवल 100 तक आ पहुंचा है। इसी के साथ अब बीजिंग एयर पॉल्यूशन से जूझ रहे शहरों के लिए उदाहरण बन गया है। अगर चीन ऐसा कर सकता है तो हम क्यों नहीं। बस जरूरत केवल इस बात कि है कि प्रदूषण के कारकों की पहचान करके उसका निदान किया जाए। आज दिल्ली-एनसीआर का एक्यूआई 699 को भी पार कर चुका है। सांसें जहरीली होती जा रही हैं। हर घर में खांसी और आंख में जलन के मरीज हैं। हालत का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि दिल्ली। सरकार ने वायु प्रदूषण से निपटने के लिए ग्रेप-3 लागू कर दिया है। सभी सरकारी और निजी दफ्तरों को 50 फीसदी कर्मचारियों से वर्क फ्रॉम होम करने को कह दिया गया है। इतना सब होने के बाद भी हालातों में सुधार नहीं हो पा रहा है। हर साल होने वाली इस परेशानी के निदान के लिए रोड मैप बनाकर उसका सख्ती से पालन करने की जरूरत है। आज सुप्रीम कोर्ट ने भी ऐसे ही संकेत दिए हैं। अगर हम ऐसा कर पाए तो एक बार फिर से देश की राजधानी दिल्ली दिल वालों की कहलाएगी।

चिंतन
मनोज कुमार अग्रवाल

हाल ही में सामने आए एक अध्ययन ने पूरे देश को चौंका दिया है, जिससे पता चलता है कि मां का दूध ही बच्चे के लिए जहर बनता जा रहा है। एक अध्ययन के अनुसार बिहार में मां के दूध के नमूनों में यूरेनियम की मौजूदगी पाई गई है। इस अध्ययन ने देशभर में चिंता की लहर पैदा कर दी है। पटना स्थित महावीर कैंसर संस्थान द्वारा की गई एक रिसर्च में बिहार की महिलाओं के दूध में यूरेनियम पाया जाना जितना गंभीर है, उतना ही चिंताजनक भी, क्योंकि यह सीधे-सीधे नवजात बच्चों के स्वास्थ्य से जुड़ा मामला है।

हे राम! दूध भी सुरक्षित नहीं

सृष्टि की शुरुआत से यह माना जाता है कि मां का दूध नवजात बच्चों के लिए अमृत समान है, क्योंकि इसमें प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती है, जो उन्हें संक्रमण के प्रभाव से बचाता है। जैसा कि आप सभी लोग जानते हैं कि चिकित्सकों की राय के अनुसार नवजात मां का दूध शिशु के जीवन के लिए न सिर्फ पहली ढाल होता है, बल्कि रोगों से सुरक्षा भी प्रदान करता है। साथ ही मस्तिष्क के विकास में सहयोगी और प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने की प्राकृतिक शक्ति प्रदान करता है, लेकिन सोचिए, अगर वही दूध किसी जहर के साथ मिलकर बच्चे तक पहुंचे, तो कितना खतरनाक हो सकता है। यह विचार ही किसी भी माता-पिता या समाज को हिलाने के लिए काफी है।

हाल ही में सामने आए एक अध्ययन ने पूरे देश को चौंका दिया है, जिससे पता चलता है कि मां का दूध ही बच्चे के लिए जहर बनता जा रहा है। एक अध्ययन के अनुसार बिहार में स्तन दूध के नमूनों में यूरेनियम की मौजूदगी पाई गई है। इस अध्ययन ने देशभर में चिंता की लहर पैदा कर दी है। पटना स्थित महावीर कैंसर संस्थान द्वारा की गई एक रिसर्च में बिहार की महिलाओं के स्तन दूध में यूरेनियम मिलना जितना गंभीर है, उतना ही चिंताजनक भी, क्योंकि यह सीधे-सीधे नवजात बच्चों के स्वास्थ्य से जुड़ा मामला है। यह अध्ययन अक्टूबर 2021 से जुलाई 2024 के बीच बेगूसराय, भोजपुर, समस्तीपुर, खगड़िया, कटिहार और नालंदा जिलों में 17 से 35 वर्ष की 40 महिलाओं पर किया गया। जांच में पाया गया कि सभी नमूनों में यूरेनियम (यू-238) मौजूद था। यह मात्रा 5.25 जी/एल तक दर्ज की गई। ब्रिटिश जर्नल 'साइंटिफिक रिपोर्टस' में प्रकाशित इस शोध में कहा गया है कि ब्रेस्ट मिल्क के नमूनों में 5 पीपीबी (प्रति अरब भाग) तक यूरेनियम पाया गया। यूरेनियम एक रेडियोधर्मी तत्व है, जो लंबे समय तक शरीर में रहने पर किडनी, हड्डियों और कोशिकाओं को प्रभावित कर सकता है। स्टडी में स्पष्ट किया गया है कि इस स्तर का तत्काल प्रभाव कम हो सकता है, परंतु शिशु यूरेनियम के एक्सपोजर के प्रति वयस्कों की तुलना में अधिक संवेदनशील होते हैं। उनके शरीर में डिटॉक्सिफिकेशन क्षमता सीमित होती है, जिससे कोई भी रेडियोधर्मी तत्व अधिक तेजी से नुकसान पहुंचा सकता है। हालांकि इस रिसर्च में बताया गया है कि 40 माताओं के दूध में यूरेनियम मिला, लेकिन ज्यादातर मामलों में इसका स्तर अनुमेय सीमा से नीचे था। लगभग 70 प्रतिशत शिशुओं में संभावित गैर-कार्सिनोजेनिक जोखिम देखा गया, पर इसका वास्तविक स्वास्थ्य प्रभाव कम होने की संभावना है। इसके बावजूद, यह तथ्य कि सभी महिलाओं के दूध में यूरेनियम मौजूद है, अपने आप में एक गंभीर चेतावनी है। परमाणु वैज्ञानिक और एनडीएमए के सदस्य डॉ. दिनेश के. असवाल का कहना है कि इसमें डरने की जरूरत नहीं है, क्योंकि पाया गया स्तर विश्व स्वास्थ्य संगठन की सुरक्षित सीमा से छह गुना कम है। डब्ल्यूएचओ पीने के पानी में यूरेनियम की सुरक्षित सीमा 30 पीपीबी तक मानता है, जबकि बिहार के नमूनों में सिर्फ 5 पीपीबी पाया गया। विशेषज्ञों ने यह भी बताया कि स्तनपान कराने वाली माताओं के शरीर में गया अधिकांश यूरेनियम मूत्र के जरिए बाहर निकल जाता है, और स्तन के दूध में इसकी मात्रा बहुत कम होती है।

लेकिन यहां बड़ा सवाल यह नहीं कि स्तर सुरक्षित सीमा से कम है या ज्यादा। असली चिंता यह है कि आखिर महिलाओं के दूध में यूरेनियम पहुंच क्यों रहा है? यह संकेत है कि भूजल में यूरेनियम की उपस्थिति लगातार चढ़ रही है। शोध में बताया गया है कि भारत के लगभग 151 जिलों और 18 राज्यों में भूजल यूरेनियम प्रदूषण पाया जा चुका है। यह आंकड़ा सिर्फ बिहार ही नहीं, बल्कि पूरे देश के लिए खतरे की घंटी है। एक और महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि शिशु अपने शरीर से यूरेनियम को तुरंत बाहर नहीं निकाल पाते, इसलिए वे अपनी माताओं की तुलना में अधिक संवेदनशील होते हैं। उनका शरीर विकसित हो रहा होता है और किसी भी रेडियोधर्मी तत्व का असर उन पर अधिक तेजी से पड़ सकता है। बच्चों पर यूरेनियम का असर सबसे खतरनाक इसलिए भी होता है, क्योंकि उनके शरीर में हेवी मेटल्स को बाहर निकालने की क्षमता बेहद कम होती है। इसके कारण किडनी का विकास प्रभावित हो सकता है, न्यूरोलॉजिकल विकास रुक सकता है, आईक्यू कम हो सकता है और मानसिक स्वास्थ्य पर भी दीर्घकालिक असर पड़ सकता है। यह सिर्फ स्वास्थ्य का मुद्दा नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों की बौद्धिक क्षमता और राष्ट्रीय विकास से जुड़ा सवाल है। इस स्थिति पर सरकार और समाज दोनों को गंभीरतापूर्वक सोचना होगा। अगर भूजल में भारी धातुओं और रेडियोधर्मी पदार्थों का स्तर बढ़ रहा है, तो इसका असर सिर्फ दूध पर नहीं, बल्कि पेयजल, फसलों और पूरे खाद्य चक्र पर भी पड़ेगा।

असली समाधान भूजल की गुणवत्ता सुधारने, जलस्रोतों के परीक्षण को मजबूत करने और प्रदूषण के स्रोतों का पता लगाने से होगा। सरकार को चाहिए कि तत्काल उन इलाकों में पानी की जांच शुरू कराए जहां से नमूने लिए, गए थे। पानी शुद्धिकरण की योजनाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। स्वास्थ्य विभाग को माताओं और बच्चों की नियमित जांच करानी चाहिए। साथ ही, वैज्ञानिकों और पर्यावरण विशेषज्ञों को मिलकर यह समझना होगा कि भूजल में यूरेनियम आखिर क्यों बढ़ रहा है, क्या यह प्राकृतिक कारण हैं, औद्योगिक प्रदूषण है, या किसी और बजह से मिट्टी और पानी में बदलाव हो रहा है? इस समस्या को हल्के में लेना भविष्य की पीढ़ी के साथ अन्याय होगा। यह सिर्फ एक शोध नहीं, बल्कि चेतावनी है कि हमारा पर्यावरण धीरे-धीरे प्रदूषण के ऐसे स्तर तक पहुंच रहा है जो मानव स्वास्थ्य के लिए घातक हो सकता है। बच्चों का स्वास्थ्य किसी भी राष्ट्र के लिए सबसे बड़ी प्राथमिकता होनी चाहिए। इसलिए सरकारों को तुरंत कदम उठाने होंगे। स्तनपान आज भी शिशु के लिए सबसे अच्छा आहार है और इसे किसी भी स्थिति में बंद नहीं किया जाना चाहिए। लेकिन साथ ही, यह भी जरूरी है कि महिलाएं जिस वातावरण में रहती हैं, यह सुरक्षित हो। पानी, हवा और मिट्टी की गुणवत्ता सुनिश्चित करना सरकार की जिम्मेदारी है। आने वाली पीढ़ी को सुरक्षित रखना किसी भी समाज का सबसे बड़ा कर्तव्य है। देखा जाए तो यह अध्ययन देश के स्वास्थ्य ढांचे को आईना दिखाता है। यह बताता है कि पर्यावरण संकट सबसे पहले और सबसे ज्यादा बच्चों को प्रभावित है। आज अगर बिहार के 40 नमूनों में यूरेनियम पाया गया है, तो कल यह संख्या बढ़ सकती है। वैश्विक स्तर पर अमेरिका, कनाडा और चीन जैसे देशों के भूजल में यूरेनियम मिलने की खबरें आती रही हैं, लेकिन बिहार में इसका ब्रेस्ट मिल्क में पाया जाना समस्या को एक नए और गंभीर स्तर पर ले जाता है। हालांकि, इन चौंकाने वाले नतीजों के बावजूद शोधकर्ताओं ने माताओं को सलाह दी है कि वे स्तनपान कराना बंद न करें, क्योंकि मां का दूध शिशुओं के लिए पोषण का सबसे सर्वोत्तम स्रोत है, लेकिन सरकार को इसके स्रोतों का पता लगाकर जल्द रोकथाम करनी होगी। ताकि मां का दूध अमृत बना रहे।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

हालात
ऋतुपर्ण दवे

युवाओं पर कसता जा रहा डिजिटल लत का शिकंजा

आज दुनियाभर में सबसे ज्यादा चिंता का विषय बच्चों को बढ़ती डिजिटल लत से बचाना है। वैसे यह वह मानसिक बीमारी है जो आहिस्ता-आहिस्ता लोगों को मानिसक रूप से जकड़ रही है। लोग खुद पर नियंत्रण खोते जा रहे हैं। आने वाले दिनों में इसको लेकर बद से बदतर हालात दिखने लगेंगे। दरअसल, मोबाइल फोन वह नशा बनता जा रहा है, जिसके आगे बड़े से बड़ा नशा काफूर हो रहा है। परेशान करने वाली सच्चाई यह है कि 3 से 12 साल की उम्र के बच्चे सोशल मीडिया से सबसे ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं। जो उम्र उनके दिमाग के तेजी से विकास की है उसमें ज्यादा वक्त स्क्रीन पर बिताकर सामाजिक गतिविधियों, खेल-कूद व रचनात्मक सोच से बच्चे दूर हो जाते हैं। सभी ने बच्चों के बदलते व्यव्हार को भांपा है। आखिर इसका समाधान क्या होगा? शुकून की बात यह है कि कुछ देश आगे बढ़कर पहल कर रहे हैं। बच्चों का स्क्रीन टाइम कम करने और साइबर बुलिंग व दूसरे अपराधों से बचाने के लिए अपनी-अपनी तरह से कुछ सरकारों की पहल अच्छी है। इस पर अलग-अलग देशों में कानून भी अलग हैं। फ्रान्स में 200 स्कूलों में स्मार्टफोन पर पाबंदी लगाने के बाद आई सफलता के 'डिजिटल ब्रेक' प्रयोग से छात्र और स्कूल स्टाफ, दोनों ही संतुष्ट हैं। नार्वे और स्पेन में बच्चों के सोशल मीडिया अकाउंट खातिर डेटा प्रोटेक्शन सहमति की उम्र पहले क्रमशः 13,14 थी, जिसे बढ़ाकर 16 कर दिया गया है। दक्षिण कोरिया ने स्कूल, क्लासरूम में फोन प्रतिबंधित करने वाला कानून बना दिया। इसी साल 26 अगस्त को 163 में 115 सांसदों की मुहर से लागू कानून मार्च 2026 से लागू होगा, ताकि बच्चों की पढ़ाई, उनके सामाजिक मेल-जोल और बर्ताव में सुधार आ सके। फिनलैंड में छोटे बच्चों के लिए मोबाइल प्रतिबंधित है तो इटली, नीदरलैंड्स में कक्षाओं में मोबाइल फोन, टैबलेट और स्मार्टवॉच पर रोक है तो चीन में, प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी बिना अभिभावक लिखित इजाजत स्कूल में फोन नहीं ले जा सकते, जबकि डेनमार्क की प्रधानमंत्री मेटे फ्रेडरिक्सन ने इसी 8 अक्टूबर को संसद में कहा कि वहां 15 साल से कम उम्र के बच्चों को सोशल मीडिया से दूर रखने की योजना बनाई जा रही है, क्योंकि हमने एक राक्षस को जन्म दिया है जो मोबाइल के रूप में हमारे बच्चों का बचपन छीन रहा है। जर्मनी में 16 साल से कम उम्र के बच्चों को सोशल मीडिया उपयोग के लिए अभिभावक की अनुमति जरूरी होगी। यूरोपियन यूनियन स्तर पर जनरल डेटा प्रोटेक्शन कहता है कि सदस्य देश प्लेटफॉर्म के लिए यूजर की सहमति की कम से कम उम्र तय कर सकते हैं, बशर्ते वह 13 साल से ज्यादा हो। जबकि ईरान कई सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स या तो प्रतिबंधित हैं या उन पर कड़ी निगरानी रखी जाती है। म्यांमार और उत्तर कोरिया में इंटरनेट और सोशल मीडिया पर लगभग पूर्ण प्रतिबंध है और सरकारी नियंत्रण वाले प्लेटफॉर्म ही वहां हैं। रूस और तुर्किए में विशेष परिस्थितियों जैसे राजनीतिक विरोध या अशांति में सोशल मीडिया बैन लगते हैं। डेनमार्क पहले ही स्कूलों में मोबाइल पर बैन लगा चुका है और अब सोशल मीडिया पर भी बच्चों के लिए सख्त प्रतिबंध और सर्विस प्रोवाइडर पर भारी भरकम जुर्माने की योजना बना रहा है।

बीते नवंबर में ऑस्ट्रेलिया में 16 साल से कम उम्र के बच्चों के लिए सोशल मीडिया बैन का बिल संसद पक्ष और विपक्ष दोनों की सहमित से पारित हुआ। वहां के प्रधानमंत्री ने सोशल मीडिया को टेंशन बढ़ाने वाला, ठगों और ऑनलाइन अपराधियों का हथियार बताया था। ऑस्ट्रेलिया ऐसा बिल पारित करने वाला दुनिया का पहला देश भी बना। बिल के अनुसार एक्स, टिकटॉक, फेसबुक और इंस्टाग्राम जैसे प्लेटफॉर्म बच्चों को अकाउंट रखने से रोकने में नाकाम रहते हैं, तो उन पर 275 करोड़ रुपए (32.5 मिलियन डॉलर) जुर्माना लग सकता है। रोक की मंशा यह है कि आस्ट्रेलियाई युवक फोन छोड़कर फुटबॉल, क्रिकेट और टेनिस खेलें।ऑस्ट्रेलिया के नक्शे कदम पर, ब्रिटिश सरकार भी 16 साल से कम उम्र के बच्चों के लिए सोशल मीडिया बैन पर विचार कर रही है। सरकार का मानना है कि ऑनलाइन सुरक्षा के लिए जो भी करना होगा, करेंगे उसमें बच्चों के लिए विशेष। गनीमत है कि कई देशों की सरकारें मोबाइल फोन और अन्य स्मार्ट डिवाइस को लेकर बच्चों की चिंता करने लगी हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि मोबाइल-इण्टनेट को लत कहें या खुमारी पूरी मानवता पर पड़ रही है भारी। अभी भी वक्त है चेतने का, अगर आलम यही रहा तो आने वाले चंद वर्षों में दुनिया कितनी और कैसी बदलेगी, सोचकर ही सिरहन होती है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

अहंकार ही अज्ञान है

संकलित
दर्शन

सूर्य वैसे तो सारे संसार को प्रकाश और ताप देता है, पर यदि वह मेघ से आच्छन्न हो जाए तो ऐसा नहीं कर पाता। इसी भांति जब तक हृदय अहंकार के आवरण से आच्छादित रहता है, तब तक उसमें भगवान प्रकाशित नहीं हो पाते। यह अहं मेघ की तरह है। इसी के कारण हम ईश्वर को नहीं देख पाते। यदि श्रीगुरु की कृपा से अहं-बुद्धि दूर हो जाए तो फिर ईश्वर के पूर्ण दर्शन हो जाते हैं। जैसे, सिर्फ ढाई हाथ की दूरी पर ही साक्षात पूर्णब्रह्म श्रीरामचंद्र जी हैं, किंतु बीच में सीता रूपिणी माया का आवरण होने के कारण लक्ष्मण जी रूपी जीव को ईश्वर राम के दर्शन नहीं होते। जीव का अहंकार ही माया है। यही अहंकार सब आवरण का मूल है। मैं के मरने पर ही सारा जंजाल दूर होगा। अगर किसी को ईश्वर की कृपा से मैं कर्ता नहीं हूं- यह ज्ञान हो जाए, तब तो वह जीवनमुक्त ही हो गया। फिर उसे किसी बात का भय नहीं। अगर मैं अपने को इस अंगोछे की ओट में कर लूं तो तुम मुझे नहीं देख सकते, पर मैं तुम्हारे बिल्कुल नजदीक ही हूं। इसी भांति और सभी चीजों की अपेक्षा ईश्वर ही तुम्हारे सबसे ज्यादा निकट है, किंतु अहं रूपी आवरण के कारण तुम उनके दर्शन नहीं कर सकते। जब तक अहंकार रहता है, तब तक न ज्ञान होता है, न मुक्ति मिलती है। हांडी में रखे पानी और चावल, दाल, आलू आदि को तब तक छुआ जा सकता है, जब तक हांडी आग पर नहीं रखी जाती। जीव की देह मानो हांडी है और धन, मान, विद्या, बुद्धि, जाति, कुल आदि मानों दाल, चावल, आलू की तरह हैं। अहंकार ही आग है, जिसके कारण ही जीव गरम (गर्वीला) होता है।

मंत्र का असर

संकलित
प्रेरणा

एक निर्धन औरत एक साधु के पास गई, 'स्वामी जी! कोई ऐसा पवित्र मन्त्र लिख दीजिये जिससे मेरे बच्चों का रात को भूख से रोना बन्द हो जाये...।' साधु ने कुछ पल एकटक आकाश की ओर देखा फिर अपनी कुटिया में अन्दर गया और एक पीले कपड़े पर एक मन्त्र लिखकर उसे ताबीज की तरह लपेट-बाँधकर उस महिला को दे दिया। साधु ने कहा, 'इस मन्त्र को घर में उस जगह रखना, जहाँ अपनी मेहनत की कमाई का धन रखती हो।' महिला खुश होकर चली गई। ईश्वर कृपा से उस दिन उसके पति की आमदनी ठीक हुई और बच्चों को भोजन मिल गया। रात शान्ति से कट गई। अगले दिन भोर में ही उन्हें पैसों से भरी एक थैली घर के आंगन में मिली। थैली में धन के अलावा एक पर्चा भी निकला, जिस पर लिखा था, कोई कारोबार कर लें...। इस बात पर अमल करते हुवे उस औरत के पति ने एक छोटी सी दुकान किराए पर ले ली और काम शुरू किया। धीरे धीरे कारोबार बढ़ा, तो दुकानें भी बढ़ती गईं...। जैसे पैसों की बारिश सी होने लगी...। पति की कमाई तिजोरी में रखते समय एक दिन उस महिला की नजर उस मन्त्र लिखे कपड़े पर पड़ी...। 'न जाने, साधु महाराज ने ऐसा कौन सा मन्त्र लिखा था कि हमारी सारी तंगी दूर हो गई?' सोचते सोचते उसने वह मन्त्र वाला कपड़ा खोल डाला...। जिस लिखा था कि.. जब पैसों की तंगी समाप्त हो जाये, तो सारा पैसा तिजोरी में छिपाने की बजाय कुछ पैसे ऐसे घर में डाल देना जहाँ से रात को बच्चों के रोने की आवाज़ें आती हों..!!

फ्लावर शो

बेंगलुरु में गुरुवार को कब्बन पार्क फ्लावर शो 2025 के दौरान सब्जियों से बना एक हाथी दिखाया गया।

आज की पाती

अन्याय कभी भी सहन मत करो

यदि आज हम किसी अन्य के साथ हो रहे अन्याय का विरोध नहीं करते, तो यकीन मानिए एक दिन हम स्वयं भी उसी अन्याय का शिकार अवश्य ही होंगे। यही समय है, यही पल, यही क्षण है। ये इंतजार कभी भी नहीं कीजिए, कि केवल हमारे ही साथ कहीं कभी अन्याय होगा, तभी हम किसी सड़ी हुई विकृत व्यवस्था का विरोध करेंगे। फिर उस वक्त व्यर्थ के रुदन, रोने-धोने से कोई लाभ, कोई सकारात्मक प्राप्ति होना अत्यंत ही कठिन या संभवतः असंभव हो सकता है। एक बहुत प्रसिद्ध उक्ति है कि न्याय में देरी, लगभग अन्याय के ही बराबर है। देश, समाज, दुनिया में कहीं एक जगह, किसी एक के साथ हो रहा अन्याय, हर जगह अन्याय होना भी माना जा सकता है। आम तौर पर लोग अन्याय का विरोध नहीं करते हैं, जिसके परिणाम भयंकर होते हैं।

- प्रवीण पांडे, धमतरी

ट्रेंड

उत्कृष्ट परिणाम

टोक्यो में आयोजित 25वें डेफलंपिक्स 2025 में 9 स्वर्ण पदकों सहित 20 पदकों की ऐतिहासिक सर्वश्रेष्ठ पदक तालिका के साथ, हमारे एथलीटों ने एक बार फिर साबित कर दिया है कि दृढ़ संकल्प और समर्पण से उत्कृष्ट परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

- नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

शानदार फिल्म

सच्ची घटना पर आधारित '120 बहादुर' जैसी देशभक्ति की फिल्म हर सच्चे देशभक्त को देखनी भी चाहिए और दूसरों को देखने के लिए कहना भी चाहिए। जिससे नई पीढ़ी भी सैनिकों के बलिदान की गौरव गाथा से परिचित हो सके। अभिनेता से लेकर फिल्म से जुड़े हर पक्ष का काम सराहनीय है।

- अखिलेश यादव, सपा नेता

कार्रवाई की ज़रूरत

निर्मम हत्या कर दिए गए दो राष्ट्रीय रक्षकों के परिवारों के प्रति मेरी गहरी संवेदना। हमारी चरमराई व्यवस्था को सुधारने के लिए कितने निर्दोष लोगों की जान लेनी पड़ेगी? कठोर कार्रवाई की ज़रूरत है।

- एलन मास्क, उद्योगपति

मेरे लिए बहुत कुछ

वह मेरे लिए बहुत कुछ थे। एक प्यारे पति, हमारी दोनों बेटियों, ईशा और अहाना, के लाड़ले पिता, दोस्त, दार्शनिक, मार्गदर्शक, कवि, हर मुश्किल घड़ी में मेरे लिए सबसे मददगार - दरअसल, वह मेरे लिए सब कुछ थे! हमेशा अच्छे-बुरे समय में मेरे साथ रहे।

- हेमा मालिनी, अभिनेत्री

करंट अफेयर

फ्रांस में नई स्वैच्छिक सैन्य सेवा की घोषणा करेंगे मैक्रों

यूरोपीय राष्ट्रों के लिए रूस के बढ़ते खतरे को देखते हुए फ्रांस ने अपनी सैन्य क्षमताओं को बढ़ाने का फैसला किया है। इसी उद्देश्य से राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों बृहस्पतिवार को नयी राष्ट्रीय स्वैच्छिक सैन्य सेवा योजना की घोषणा करेंगे। मैक्रों के फ्रांसीसी आल्प्स में वार्स सैन्य अड्डे पर जाने से पहले राष्ट्रपति कार्यालय ने कहा कि वह 'बढ़ते खतरों के लिए राष्ट्र को तैयार करने की आवश्यकता' पर जोर देंगे। इस साल की शुरुआत में मैक्रों ने फ्रांसीसी युवाओं को स्वेच्छा से सैन्य सेवा में शामिल होने का एक नया विकल्प देने की मंशा जाहिर की थी। उल्लेखनीय है कि फ्रांस 1996 में अनिवार्य सैन्य भर्ती को समाप्त कर चुका है, और इसे दोबारा लागू करने पर विचार नहीं किया जा रहा है। मैक्रों ने कहा कि यूक्रेन में रूस के युद्ध ने यूरोपीय महाद्वीप को 'बड़े जोखिम' में डाल दिया है। उन्होंने मंगलवार को रेडियो आरटीएल को बताया, 'रूस को जिस दिन आपने कमजोरी का संकेत दिया, वह आगे बढ़ता ही रहेगा।' राष्ट्रपति ने अगले दो वर्षों में सैन्य खर्च में 6.5 अरब यूरो की अतिरिक्त वृद्धि की घोषणा की है। उन्होंने कहा कि उनका लक्ष्य 2027 तक वार्षिक रक्षा खर्च को बढ़ाकर 64 अरब यूरो करना है, जो 2017 के खर्च का दोगुना होगा।

ऑफ बीट

कुत्ते खाना और खिलौने कैशिंग के लिए छुपाते हैं

क्या आपने कभी किसी कुत्ते को कंबल के नीचे, सोफे के पीछे, या घर के पिछले हिस्से में खोदे गए गड्ढे में अपना पसंदीदा खाना छुपाते हुए देखा है? आपको लग सकता है कि वे किसी ऐसे व्यक्ति की तरह व्यवहार कर रहे होते हैं, जो प्रलय आने की आशंका से डरा हुआ हो, लेकिन कुत्ते आसन्न आपदा की चिंता में अपना खाना जमा नहीं कर रहे हैं। वे यह बता रहे हैं कि कैसे उनका विकासवादी अतीत आज भी आधुनिक व्यवहारों को आकार दे रहा है। यह दूरदर्शी रणनीति हमें एक अनोखी झलक देती है कि हम उन्हें अच्छी तरह जीने में कैसे मदद कर सकते हैं। कुत्ते भोजन, सामान और खिलौने क्यों छिपाते हैं- आपने 'कैशिंग' के बारे में सुना होगा, जिसका वैज्ञानिक अर्थ है भोजन को बाद में इस्तेमाल के लिए गुप्त स्थानों पर संग्रहित करना। यह व्यवहार गिलहरियों से लेकर कौवों और भेड़ियों तक, सभी जानवरों में व्यापक रूप से पाया जाता है। 'कैशिंग' व्यवहार सामान्यत: दो श्रेणियों में से आता है। इनमें से एक को 'लार्डर होर्डिंग' के नाम से जाना जाता है। इसे एक गिलहरी के उदाहरण से समझा जा सकता है, जो लंबी सर्दियों के दौरान एक या दो स्थानों पर मेवे जमा करके रखती है।

अपने विचार
हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

दैनिक जागरण

आत्मिक सौंदर्य का आकर्षण स्थायी होता है

आवश्यक कार्य में अड़ंगा

मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर के विरोध में सुप्रीम कोर्ट में जैसे तर्क दिए जा रहे हैं, उससे यही स्पष्ट होता है कि संकीर्ण राजनीतिक कारणों से इस आवश्यक प्रक्रिया में अड़ंगा लगाने की कोशिश हो रही है। सुप्रीम कोर्ट ने यह कहकर अड़ंगा लगाने वालों को आईना ही दिखाया कि बिहार में तो एक भी व्यक्ति यह शिकायत करने नहीं आया कि उसका नाम वोटर लिस्ट से हटा दिया गया है। यह भी उल्लेखनीय है कि बिहार में एसआइआर के समय कुछ खास लोगों के वोट काटे जाने का आरोप उछालने वाले भी ऐसे कथित पीड़ित लोगों का उदाहरण नहीं दे सके थे। हालांकि बिहार में एसआइआर पर उन्हें मुंह की खानी पड़ी, लेकिन वे बाज नहीं आ रहे हैं और अब 12 राज्यों में जारी एसआइआर की प्रक्रिया को रोकने के लिए सुप्रीम कोर्ट के समक्ष खड़े हैं। यह तब है, जब एसआइआर वाले राज्यों में करीब 65 प्रतिशत फार्म भरे जा चुके हैं। इसका मतलब है कि लोग इस प्रक्रिया में भाग ले रहे हैं। एसआइआर होना इसलिए आवश्यक है, क्योंकि मतदाता सूचियों में बड़ी संख्या में ऐसे लोगों के नाम दर्ज हैं, जिनकी मृत्यु हो गई है या फिर जो अन्यत्र चले गए हैं। इसके अलावा ऐसे भी लोग हैं, जिनके पास दोहरे मतदाता पहचान पत्र हैं। चुनाव आयोग एसआइआर के जरिये इन्हीं विसंगतियों को दूर कर रहा है, लेकिन विपक्षी दलों को पता नहीं क्यों यह रास नहीं आ रहा है। वे मतदाता सूचियों में गड़बड़ी की शिकायत भी कर रहे हैं और एसआइआर भी नहीं होने देना चाहते।

यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट ने यह स्पष्ट कर दिया कि एसआइआर के दौरान चुनाव आयोग को दस्तावेजों की सत्यता जांचने का अधिकार है। उसे यह अधिकार मिलना ही चाहिए, क्योंकि यह एक तथ्य है कि फर्जी दस्तावेजों के सहारे मतदाता पहचान पत्र से लेकर आधार तक हासिल कर लिए गए हैं। यह आशंका निराधार नहीं कि बंगाल जैसे राज्यों में बड़ी संख्या में बांग्लादेशी घुसपैठिए मतदाता बन बैठे हैं। उनके बांग्लादेश लौटने से इसकी पुष्टि भी होती है। यह ठीक है कि पहचान पत्र के रूप में आधार भी मान्य है, लेकिन उसे भी फर्जी तरीके से बनवाया गया हो सकता है। ऐसे में चुनाव आयोग को दस्तावेजों के सत्यापन का अधिकार मिलना ही चाहिए। यह सही है कि चुनाव आयोग को किसी की नागरिकता जांचने का अधिकार नहीं, लेकिन इसका यह मतलब भी नहीं कि वह उन दस्तावेजों का सत्यापन ही न करे, जो एसआइआर की प्रक्रिया के तहत उसे उपलब्ध कराए जा रहे हैं। यह सही समय है कि सुप्रीम कोर्ट गृह मंत्रालय को राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर के जरिये नागरिकता जांचने का आदेश दे। यदि यह काम नहीं किया जाता तो घुसपैठिए फर्जी दस्तावेजों के जरिये भारत के मतदाता बनते ही रहेंगे।

बदलाव जरूरी

खेती किसानी में रासायनिक खाद के निरंतर बढ़ते हुए उपयोग ने चिंता बढ़ा दी है। उत्तर प्रदेश में खेती के हर सीजन में रासायनिक खाद की मांग पिछले साल की तुलना में बढ़ जाती है। खाद के बढ़ते उपयोग से फसल भी दूषित हो रही है। सरकार हर बार मांग के अनुरूप उपलब्धता का दावा करती है, परंतु धरातल पर व्यवस्था दम तोड़ देती है। अभी संपन्न हुई धान की खेती के समय प्रशासनिक तंत्र की सख्ती के बाद भी खाद की कालाबाजारी की शिकायत नहीं थमी। अब नए उपाय हो रहे हैं कि खाद के लिए मशीन पर किसान द्वारा अंगूठा लगाते ही उसे प्राप्त खाद का विवरण दिखने लगेगा। कालाबाजारी रोकने के इस उपक्रम का परीक्षण अभी होना शेष है। जब तक रासायनिक खाद पर खेती की निर्भरता कम नहीं होगी, यह संकट टलने वाला नहीं है। हम सब जानते हैं कि रासायनिक उर्वरक पर सब्सिडी देश की अर्थव्यवस्था पर बोझ है। वैकल्पिक रूप से जैविक खाद के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए किए जा रहे उपाय कारगर साबित नहीं हो रहे हैं। इससे धरती को नुकसान पहुंच रहा है। जो सूक्ष्मजीव मिट्टी में पोषक तत्वों के निर्माण और संचारण में सहायक होते हैं, वह रासायनिक खाद के उपयोग से समाप्त हो जाते हैं। जैविक खाद से इन्हें नुकसान नहीं होता। कृषि और रसायन विज्ञानियों को चाहिए कि कुछ नवीनतम अनुसंधान कर जैविक खाद की उपयोगिता को और प्रभावी बनाएं। हालांकि यह समस्या केवल उत्तर प्रदेश में ही नहीं है, देश के कई अन्य राज्यों में इस तरह की समस्या है, जिसका निदान होना चाहिए। जैविक खेती को बढ़ावा देकर भी ऐसा किया जा सकता है।

> जब तक रासायनिक खाद पर खेती की निर्भरता कम नहीं होगी, यह संकट टलने वाला नहीं है

अर्थव्यवस्था को गति देने वाला कदम

गौरव वल्लभ

नए श्रम सुधार श्रमिकों और उद्यमियों को सशक्त बनाने के साथ ही एक समृद्ध, समावेशी और प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था की भी नींव रखने वाले हैं

चार नई श्रम संहिताओं पर अमल समय की मांग को पूरी करने वाली एक बड़ी पहल है। इससे पहले की व्यवस्था में नियोक्ताओं को वेतन, कार्य स्थितियों और रोजगार श्रेणियों को असंगत तरीकों से परिभाषित करने वाले 29 अलग-अलग कानूनों का पालन करना पड़ता था। उनके स्थान पर नई संहिताओं में कानूनों को सुगम बनाया गया है। ये संहिताएं राज्यों में समान परिभाषाएं, सभी श्रमिकों के लिए लिखित नियुक्ति पत्र, समय पर वेतन भुगतान के लिए स्पष्ट नियम, गिग-प्लेटफार्म श्रमिकों की मान्यता, अद्यतन स्वास्थ्य और सुरक्षा मानकों के साथ ही एक सरल राष्ट्रीय अनुपालन संरचना की रूपरेखा तैयार करती हैं। पुरानी व्यवस्था में अस्पष्ट परिभाषाएं, सीमाओं में दखल और राज्यों के स्तर पर भिन्नताओं से कंपनियों को तमाम अनिश्चितताओं का सामना करना पड़ता था। किसी राज्य में प्रवेश से पहले कंपनी के समक्ष नए सिरे से अनुपालन की सिरदर्दी बढ़ जाती थी। इसके चलते विनिर्माण और लाजिस्टिक्स कंपनियों का विस्तार सीमित ही रहा। नई संहिताओं में अनिश्चितताओं को दूर किया गया है। स्पष्ट एवं एकसमान परिभाषाएं, पंजीकरण और रिटर्न की एकल प्रणाली, विस्तार के लिए नियामकीय परिदृश्य में सुसंगति इनके मूल में हैं। ये सुधार कारोबारी सुगमता बढ़ाते हैं। स्मरण रहे कि किसी देश की नियामकीय गुणवत्ता केवल सुधारों से ही नहीं, बल्कि नियमों के पूर्वानुमान से भी आंकी जाती है। जब कंपनियां कानूनी जटिलताओं से मुक्त होकर अपनी जिम्मेदारियों को समझती हैं तो अनुपालन भी आसान एवं नियमित हो जाता है। तब निवेश निर्णय से लेकर सब्सिडी को लक्षित करना कहीं बेहतर हो जाता है। जोखिम घटने से काराबोरी परिवेश के प्रति भरोसा बढ़ता है।

आर्थिक दृष्टिकोण से यह परिवर्तन औपचारिक या संगठित रोजगारों को प्रोत्साहन देता है। नियुक्ति पत्र, स्पष्ट वेतन दायित्व और समन्वित श्रेणियां उन अनिश्चितताओं को दूर करती हैं, जो पहले अनौपचारिक रोजगारों को जारी रखने की गुंजाइश देती थीं। याद रहे कि रोजगारों की औपचारिक प्रवृत्ति उत्पादन को बढ़ाने में भी सहायक बनती है। दस्तावेजीय अनुबंध और वेतन चक्र को लेकर सुनिश्चित होने से श्रमिक न केवल अधिक समय तक कार्य करने को लेकर तैयार रहते हैं, बल्कि नए कौशल सीखने के प्रति तत्पर होकर अपनी कुशलता बढ़ाने को भी प्रेरित होते हैं। अंततः इसका लाभ कंपनियों के लिए कार्यबल की क्षमताओं में सुधार और समग्र परिणामों में प्रत्यक्ष होता है।

अवधेश राजपूत

भारतीय श्रम बाजार स्थापित कानूनों की तुलना में कहीं तेजी से विकसित हुआ है। शहरी सेवाओं का बड़ा हिस्सा अब प्लेटफार्म आधारित कार्यों से संचालित हो रहा है। यह नई व्यवस्था पुराने कानूनों में फिट नहीं हो पा रही थी। ऐसे में इन श्रमिकों को मान्यता देकर और उनकी सामाजिक सुरक्षा के लिए नई राहें खोलकर एक बड़े अंतर की भरपाई की गई है। एक बेहतर श्रम बाजार वही होता है, जो नवाचार से किनारा करने के बजाय नई आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालकर नए कार्यों को मान्यता प्रदान करने को प्राथमिकता दे।

कामकाजी आबादी में महिलाओं की भागीदारी को भी नई श्रम संहिताओं से मदद मिलेगी। पुराने कानून नाइट शिफ्ट में महिलाओं के कामकाज को बाधित कर उनके समक्ष विकल्प सीमित करते थे। उनके लिए उचित सुरक्षा व्यवस्थाओं के साथ भागीदारी की अनुमति देना एक अधिक समावेशी श्रम आपूर्ति का आधार तैयार करता है। वैश्विक उदाहरण इसके प्रमाण हैं कि श्रम बल में महिलाओं की ऊंची भागीदारी वाली अर्थव्यवस्थाएं कहीं अधिक लचीली, विविधतापूर्ण और व्यापक रूप से उत्पादक होती हैं। यह भी अक्सर देखने को मिलता है कि नियमों में जटिलता और अनुपालन लागत का बढ़ना निवेश के प्रति कंपनियों को उदासीन बनाता है। वे विस्तार को टालती हैं। इससे भर्तियों पर भी असर पड़ता है। नई संहिताओं के माध्यम से स्पष्ट नियमों और सरल प्रक्रियाओं के माध्यम से कई बाधाएं दूर हुई हैं। एकल लाइसेंस एकल राष्ट्रीय रिटर्न और सुव्यवस्थित पंजीकरण प्रशासनिक हीलाहवाली को दूर करते हैं।

श्रम नियमन किसी देश की संस्थागत अवसंरचना का हिस्सा है। इनका विरूपित, अस्पष्ट या असमान रूप से लागू होना कंपनियों को रक्षात्मक बनाता है। इसके चलते वे अतिरिक्त सतर्कता का सहारा लेती हैं। नियमन के सुसंगत, सुस्पष्ट एवं पूर्वानुमानित होने से कंपनियों की आकांक्षाएं परवान चढ़ती हैं। इस संदर्भ में नई श्रम संहिताएं सकारात्मक संकेत करती हैं। वे जटिलताओं के जाले हटाने, प्रोत्साहन को नए सिरे से आगे बढ़ाने और टकराव के बिंदुओं को घटाने का काम करती हैं। सम्मिलित रूप में ये परिवर्तन विकास की गति को बढ़ावा देने का काम करते हैं। हालांकि किसी भी सुधार के माध्यम से अभीष्ट की प्राप्ति तभी संभव है, जब उन पर सही ढंग से अमल किया जाए और नई श्रम संहिताएं भी इसमें कोई अपवाद नहीं। इन्हें अपेक्षित रूप से आगे बढ़ाने के लिए कुछ उपाय करने होंगे। इसमें राज्यों को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। उन्हें नियमों को सरल बनाना होगा। सुधारों की सफलता के लिए डिजिटल सिस्टम को भी सुचारु रूप से कार्य करना होगा।

कुछ पहलुओं को छोड़ दिया जाए तो नई श्रम संहिताएं आवश्यक संतुलन साधने में सफल दिखती हैं। वे नियामकीय आधार को आधुनिक बनाने, औपचारीकरण के समर्थन और अनिश्चितताओं को दूर करती हैं। इससे उद्यमियों के लिए कारोबारी संचालन का अनुकूल परिवेश तैयार होता है। यह परिवर्तन आत्मविश्वास से ओतप्रोत एवं कार्य की दृष्टि से बेहतर आर्थिक परिदृश्य का आधार बनाता है। प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में ये नई श्रम संहिताएं वर्ष 2047 तक विकसित भारत के निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। ये परिवर्तन श्रमिकों और उद्यमियों दोनों को सशक्त बनाने के साथ ही एक समृद्ध, समावेशी और प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था की संस्थागत नींव रखते हैं।

(लेखक प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के अंशकालिक सदस्य एवं वित्त के प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

बेलगाम होती भाषाई अराजकता

उमेश चतुर्वेदी

भाषाई अराजकता के पीछे स्थानीय भाषाई स्वाभिमान से कहीं ज्यादा सियासी नाकामी से उपजी कुंठा है

इसे विडंबना ही कहेंगे कि जब भारत दुनिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की ओर तेजी से बढ़ रहा है और विकसित भारत की बातें हो रही हैं, तब देश के कुछ हिस्सों में भाषाई अराजकता बेलगाम हो रही है। मान्यता है कि शिक्षा और समृद्धि के साथ असमानता और संकीर्णता का भाव तिरोहित हो जाता है, लेकिन अपेक्षाकृत समृद्ध और शिक्षित महाराष्ट्र, कर्नाटक और तमिलनाडु में जिस तरह भाषाई असहिष्णुता फैल रही है, उससे यह मान्यता गलत साबित होती दिख रही है। ताजा मामला महाराष्ट्र के कल्याण का है, जहां एक नौजवान ने इसलिए अपनी जीवनलीला खत्म कर ली, क्योंकि उसे हिंदी बोलने के लिए अपमानित किया गया। लोकल ट्रेन से कालेज जाते वक्त सहयात्री से संवाद के लिए हिंदी के कुछ लफ्जों का इस्तेमाल कुछ मराठीभाषियों को इतना नागवार गुजरा, उन्होंने उस पर थप्पड़ों की बारिश कर दी। इससे आहत नौजवान ने घर लौटकर आत्महत्या कर ली। यह नौजवान मराठीभाषी ही था।

क्या हिंदी बोलना इतना बड़ा गुनाह हो गया कि किसी को सरेआम अपमानित किया जाए, पीटा जाए। इस आघातकारी मामले में राजनीतिक दलों और सामाजिक संगठनों की चुप्पी समस्या बनकर उभर रही है। ये संगठन भूल जाते हैं कि राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने की हिंदी की क्षमता जिन लोगों ने पहचानी, उनमें गुजराती भाषी महात्मा गांधी एवं नर्मदाशंकर उपाध्याय, बांग्लाभाषी केशवचंद्र सेन एवं सुभाष चंद्र बोस और मराठा लोकमान्य तिलक जैसे अनेक अहिंदी भाषी थे। इन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा बनाने का सपना देखा था। राजनीतिक कुचक्रों के चलते हिंदी राष्ट्रभाषा के स्थान पर आसीन नहीं हो सकी, लेकिन उसकी सामर्थ्य किसी से छिपी नहीं। कई क्षेत्रीय राजनीतिक ताकतें हिंदी से भयाक्रांत हैं, जबकि हिंदी के विस्तार के पीछे राजभाषा की ताकत नहीं, बल्कि उसका अभिव्यक्ति का सशक्त जरिया बनना है। चूंकि हिंदी भारतीय भाषाओं के बीच सहज संवाद की क्षमता से युक्त है, इसलिए संकीर्णता से ग्रस्त क्षेत्रीय सियासी ताकतें उससे डरती हैं। हिंदी के जरिये उन्हें अपनी सियासी अस्मिता खतरे में नजर आती है। इसीलिए ये ताकतें हिंदीभाषियों को निशाना बनाती हैं। इसमें सबसे आगे राज ठाकरे और उनकी पार्टी महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना है। राज जब-जब हाशिए की ओर जाते दिखते हैं, भाषाई अराजकता उनका हथियार बन जाती है।

भाषाई कट्टरता की भेंट चढ़ा मराठीभाषी युवक। फाइल

अव्वल तो आजादी के 75 सालों में भारतीय अस्मिता की बात होनी चाहिए, लेकिन मौजूदा राजनीति ने उपराष्ट्रीयताओं के साथ बांग्ला, मराठी, कन्नड़, तमिल जैसी खंडित अवधारणाएं प्रस्तुत कर दी हैं। क्षेत्रीय राजनीतिक ताकतों के लिए इन दिनों अपनी भाषा का सवाल उठाना चुनावी सफलता की गारंटी माना जाने लगा है। महाराष्ट्र की राजनीति में अस्तित्व के संकट से जूझ रहे ठाकरे बंधु राज ठाकरे और उद्धव साथ आ चुके हैं। बाला साहेब के सियासी उत्तराधिकारी माने जाते रहे राज को खास सियासी कामयाबी नहीं मिली। लिहाजा राजनीतिक रूप से खुद को प्रासंगिक बनाए रखने के लिए उनके हाथ में एक ही औजार है, मराठी के नाम पर गैर मराठीभाषियों को प्रताड़ित करना। राज ऐसा करके बाला साहेब की विरासत को आगे बढ़ाने का भ्रम पाले हैं। सवाल उठता है कि जिस हिंदी सिनेमा के लिए मुंबई जानी जाती है, राज ठाकरे और उनके लोग उस बालीवुड को क्यों नहीं मुंबई से खदेड़ देते? बालीवुड महाराष्ट्र की न सिर्फ वैश्विक पहचान है, बल्कि रोजी-रोटी के साथ ही टैक्स का बड़ा जरिया भी है। राज ठाकरे की मराठी अस्मिता की वीरता कमजोर हिंदीभाषियों पर ही फूटती है।

भाषाई अराजकता के पीछे स्थानीय भाषाई स्वाभिमान से ज्यादा सियासी नाकामी से उपजी कुंठा है। बाल ठाकरे की राजनीति का उभार पहले दक्षिण भारतीय लोगों के विरोध की बुनियाद पर हुआ। उनकी विरासत से वंचित राज ठाकरे को खुद को स्थापित करने के लिए पुराना हथकंडा ही नजर आया। महाराष्ट्र की तर्ज पर कर्नाटक में भी भाषाई अराजकता को बढ़ावा देने की कोशिश होती रहती है। तमिलनाडु में भाषाई अराजकता की नींव तो 1913 में ही पड़ गई थी, जब कथित ब्राह्मणवाद और उत्तर भारत विरोध के नाम पर जस्टिस पार्टी की स्थापना हुई। इसी पार्टी के जरिये रामास्वामी पेरियार का उभार हुआ, जिन्होंने द्रविड़ आंदोलन की नींव डाली। तमिल राजनीति में डीएमके की जड़ें मजबूत करने में हिंदी विरोधी आंदोलन की केंद्रीय भूमिका रही। इसी वजह से मुख्यमंत्री स्टालिन और उनके बेटे उदयनिधि कभी हिंदी का विरोध करते हैं तो कभी संस्कृत को मृत भाषा बताकर गर्व महसूस करते हैं। कर्नाटक में कर्नाटक रक्षणा वेदिके भी डीएमके की तर्ज पर भाषाई अराजकता का हथकंडा अपनाती है।

अतीत के भाषा विरोधी आंदोलन हों या मौजूदा हिंदी विरोधी बयान, कांग्रेस आम तौर पर मूकदर्शक की भूमिका में रही है। आज कांग्रेस महाराष्ट्र में उसी महागठबंधन का हिस्सा है, जिसका एक प्रमुख घटक शिवसेना का उद्धव गुट है। माना जा रहा है कि मुंबई महानगर पालिका चुनाव में सफलता की उम्मीद के चलते कांग्रेस भाषाई अराजकता पर चुप्पी साधे है। कर्नाटक में तो वह सरकार में ही है, लेकिन अराजकता के खिलाफ कभी उसका प्रभावी रवैया नहीं दिखा। अगर भाषाई अराजकता पर प्रभावी रोक नहीं लगाई गई तो यह अराजकता लोगों के बीच कटुता का वाहक बनेगी, जिसका खामियाजा आखिरकार देश को भुगतना पड़ेगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

सीमाएं तय करना

जटिलताओं से भरे जीवन में एक महत्वपूर्ण बिंदु है अपनी सीमाओं को तय करना। यह वह विवेक है, जो व्यक्ति को अपनी ऊर्जा, समय और भावनाओं की रक्षा करना सिखाता है। मनुष्य की सबसे बड़ी थकान परिस्थितियों से नहीं, बल्कि उन अनियंत्रित अपेक्षाओं से उपजती है, जिन्हें वह 'न' कहने के साहस के अभाव में लगातार ढोता रहता है। सीमाएं केवल दूरी खड़ी नहीं करतीं, बल्कि व्यक्ति को अपने भीतर स्थिर और संतुलित रहने का मार्ग प्रदान करती हैं। व्यावहारिक जीवन में जब कोई व्यक्ति हर अनुरोध, हर अपेक्षा और हर दबाव को स्वीकार करता जाता है, तब उसकी प्राथमिकताएं धीरे-धीरे धुंधली होने लगती हैं। सीमाएं तय करना वस्तुतः अपने मूल्य, अपनी क्षमता और अपनी सीमाओं को चिह्नित करने की प्रक्रिया ही है। यह आग्रह नहीं, अपितु आत्म-समझ का परिपक्व एवं परिष्कृत स्वरूप है। परिस्थितियां कब, कितना और कैसे प्रभावित करेंगी इसका निर्णय तब संभव है, जब व्यक्ति स्वयं के लिए यह स्पष्ट करता है कि वह किन बातों को स्वीकार करेगा, किनसे दूर रहेगा।

प्रायः कहा जाता है कि रिश्ते त्याग पर टिके होते हैं, परंतु सच यह है कि स्वस्थ रिश्ते पारस्परिक सम्मान पर आधारित होते हैं। सम्मान वहीं जन्म लेता है, जहां अपनी भावनाओं की सुरक्षा का अधिकार स्पष्ट हो। जो व्यक्ति सीमाएं तय करता वह केवल अपने भीतर की स्पष्टता को दृढ़ करता है। यही स्पष्टता आगे चलकर उसके निर्णयों को स्थिर और उसके जीवन को संगठित करती है। जीवन में संतुलन, शांति और मानसिक स्वच्छता तभी संभव है जब मनुष्य यह समझ ले कि हर अपेक्षा पूर्ण करना कर्तव्य नहीं और हर आग्रह स्वीकारना उदारता नहीं। सीमाएं तय करना आत्म-सुरक्षा का उपकरण है। जो व्यक्ति इसका अभ्यास कर लेता है, वही अपने समय, मन और संबंधों का वास्तविक संरक्षक बन पाता है।

अमन सिंह गौर

बढ़ता प्रदूषण और घटती धूप

ऋतुपर्ण दवे

वायु प्रदूषण के गंभीर होने और धूप के समय में कटौती जीवन के लिए चिंताजनक है

भारत में सूरज की रोशनी और धूप में गिरावट निरंतर जारी है। हमारे लिए यह एक बड़ी चुनौती बनने वाली है। वजह हवा में एअरोसोल कणों का अत्यधिक बढ़ना है जो धूल, कालिख, राख का मिश्रण होते हैं और जीवाश्म ईंधन, वाहन, कारखानों से निकले धुएं से बनते हैं। ये आसमान में मोटा बादल बनाते हैं जो सूरज की रोशनी रोक लेता है। इसे 'सोलर डिमिंग' कहते हैं। इसका नकारात्मक प्रभाव प्रकृति, पर्यावरण और जीवों पर पड़ता है। धूप की कमी से हमारे शरीर में विटामिन डी का संतुलन बिगड़ता है। हड्डियां कमजोर होने से हमारी शारीरिक प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर हो जाती है।

धूप कम होने से सौर ऊर्जा उत्पादन घटने के साथ खेती-किसानी पर भी बुरा असर पड़ता है। हरे पौधे अकेले ऐसे जीवित जीव हैं जो अपना भोजन स्वयं बनाते हैं जिसका उपयोग दूसरे जीव, जीवित रहने के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप करते हैं। धूप कम होने या न मिलने से पौधों में प्रकाश संश्लेषण रुक जाता है, वो कमजोर हो जाते हैं। पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, नए अंकुर नहीं निकल पाते और विकास थमने से मर भी जाते हैं।

एक तय सीमा तक धूप लेना जरूरी है। चिंताजनक यह कि भारत के बड़े हिस्से में पहले जैसे धूप नहीं पहुंच रही। प्रतिष्ठित ''नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स जर्नल'' में पिछले महीने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, इंडियन इंस्टीट्यूट आफ ट्रापिकल मीटियोरोलाजी और इंडिया मीटियोरोलाजिकल डिपार्टमेंट (आइएमडी) के प्रकाशित नए अध्ययनों में बताया गया है कि भारत में पिछले 30 वर्षों के दौरान धूप में बहुत कमी आई है। पूरे वर्ष प्रत्येक दिन धूप के समय में औसतन कमी आ रही है। वहीं दुनिया भर में वायु गुणवत्ता पर नजर रखने वाली संस्था स्विस एयर क्वालिटी टेक्नोलाजी कंपनी आइक्यू एयर की रिपोर्ट 2024 बेहद चौंकाने वाली है।

विश्व के 20 अत्याधिक प्रदूषित शहरों में 13 भारत के हैं। उसमें भी दिल्ली दुनिया की सबसे प्रदूषित राजधानियों में शीर्ष पर है। इनमें से कुछ प्रमुख शहर इस प्रकार हैं- दिल्ली, फरीदाबाद (हरियाणा), लोनी (उत्तर प्रदेश), गुरुग्राम (हरियाणा), श्रीगंगानगर (राजस्थान), भिवाड़ी (राजस्थान) और नोएडा। क्षेत्रफल के हिसाब से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) प्रदूषण की सर्वाधिक चपेट में है। सैटेलाइट डाटा खंगालने से भी पता चला कि प्रदूषण से सोलर रेडिएशन में भी 10 से 20 प्रतिशत की गिरावट आई। इससे भारत की सौर नीतियों और सौर ऊर्जा क्षमता पर असर स्वाभाविक है।

ऐसे बदतर हालातों के लिए शहरी औद्योगिकीकरण जिम्मेदार है। इसे रोकना होगा वरना हालात बद से बदतर होंगे। प्रकृति से छेड़छाड़ की हमलोग बड़ी गलती कर रहे हैं। लंबे समय तक सूर्य के प्रकाश के बिना तापमान घटेगा, प्रकाश संश्लेषण बिना वनस्पतियां मरेंगी और पृथ्वी पर जीवन समाप्त हो जाएगा।

(लेखक पर्यावरण मामलों के जानकार हैं)

पाकिस्तान से सतर्कता आवश्यक

'पाकिस्तान से और बढ़ा खतरा पढ़ा' शीर्षक से प्रकाशित शिवकांत शर्मा का आलेख पढ़कर यही समझ आया कि समय के साथ भारत की सुरक्षा चुनौतियां भी बदल रही हैं। पाकिस्तान से उत्पन्न खतरा आज भी बहुत गंभीर बना हुआ है। पाकिस्तान को चीन और अमेरिका का साथ, आंतरिक अस्थिरता, बढ़ती कट्टरता और आतंक के प्रति उसकी राजनीतिक-रणनीतिक नीति भारत के लिए चिंता का प्रमुख कारण बन गई है। पाकिस्तान की सेना और कट्टरपंथी संगठन सत्ता और नीतियों का वास्तविक नेतृत्व कर रहे हैं। पाकिस्तान में आतंकवादी संगठनों को दोबारा सक्रिय किया जा रहा है और कश्मीर को लेकर भड़काऊ बयान दिए जा रहे हैं। यह भारत की संप्रभुता और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा है। दिल्ली में हुए हालिया बम धमाके के तार पाकिस्तान के प्रतिबंधित जिहादी संगठन जैश-ए-मोहम्मद से जुड़े हैं। पाकिस्तान कों हर युद्ध में करारी हार का सामना करना पड़ा है, इसलिए वह सीधी लड़ाई के बजाय सीमा पार से आतंकवाद के जरिये भारत को अस्थिर करने का प्रयास करता रहा है। भारत विरोधी दुष्प्रचार, डिजिटल कट्टरता और फेक न्यूज के जरिये युवाओं को भ्रमित करने की कोशिशें लगातार बढ़ रही हैं। हाल के वर्षों में भारत ने पाकिस्तानी आतंकवाद को चोट पहुंचाई है, लेकिन पाकिस्तान अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है। भारत की राष्ट्रीय एकता, सीमाओं की सुरक्षा, मजबूत नेतृत्व और सुरक्षा तंत्र की तैयारियां भविष्य की चुनौतियों के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

हिमांशु शेखर, केसपा (गयाजी)

मेलबाक्स

भरे जाएं संविधान के छिद्र

हमने संविधान दिवस मना लिया और उसके प्रति अपनी निष्ठा प्रकट कर ली, जो सही ही है। हमारा संविधान विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का सबसे बड़ा लिखित दस्तावेज है, जिसमें बहुसंख्यक संशोधन भी हुए हैं, फिर भी अभी छिद्रों से युक्त है। हमारे पास एक राष्ट्रपति होता है, जो व्यवहार रूप में शक्तिहीन है। वह मंत्री परिषद की सलाह मानने के लिए बाध्य है। केवल एक बार कोई विधेयक पुनर्विचार हेतु वापस कर सकता है। दोबारा भेजे जाने पर मानना ही होगा। तब इस आभूषणात्मक पद पर होने वाले भारी भरकम व्यय का क्या औचित्य है! दूसरा छिद्र यह है कि दोबारा प्रस्तुतीकरण वह कितने दिन में स्वीकार करे, यह संविधान में उल्लिखित नहीं है। वह चाहे तो इसे अनिश्चित काल के लिए रोके रखे। इसे बोलचाल की भाषा में राष्ट्रपति का 'पाकेट वीटो' कहते हैं। संविधान में कोई समय सीमा तो होनी ही चाहिए। तीसरे यह कि प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री व मंत्रियों के लिए कोई न्यूनतम शैक्षिक योग्यता नहीं निर्धारित है। ऐसे में संविधान के तहत कभी पीएम/ सीएम समेत पूरी मंत्री परिषद अंगूठा टेक हो सकती है, तब ये लोग कानून कैसे बनाएंगे? नौकरशाह इन्हें उंगलियों पर नचाएंगे। संविधान के अनुसार, प्रधानमंत्री और उनकी मंत्री परिषद लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है, किंतु पीएम ऐसा व्यक्ति भी बन जाता है, जो इस सदन का सदस्य ही न हो। मनमोहन सिंह लोकसभा चुनाव कभी नहीं जीते, किंतु राज्यसभा सदस्य रहकर दस साल पीएम रहे। यह विसंगतिपूर्ण है। जनता का सदन तो लोकसभा है। इंद्रकुमार गुजराल का भी यही हाल था। इन छिद्रों को भरा जाना चाहिए।

रघोत्तम शुक्ल, पूर्व प्रशासनिक अधिकारी, लखनऊ

चुनाव परिणाम की व्याख्या

गुरुवार को प्रकाशित ''मत प्रतिशत की मनचाही व्याख्या'' आलेख में अवधेश कुमार ने बिहार में महागठबंधन का अधिक मत प्रतिशत होने के बाद भी एनडीए की जीत को लेकर फैलाई जा रहे भ्रम का सटीक निराकरण किया है। चुनाव जीतने का फैसला प्रत्येक सीट पर मिले वास्तविक वोट और जीत-हार के अंतर से तय होता है, न कि कुल राज्यव्यापी प्रतिशत से। जैसे, लोजपा (आर) को पिछली बार ज्यादा वोट मिले थे, लेकिन वह अकेली थी, इसलिए सीटें नहीं जीत सकी। इस बार कम कुल वोट पाकर भी सीटें ज्यादा जीतीं, क्योंकि वह गठबंधन का हिस्सा थी और सीटों का वितरण उसके अनुकूल था।

सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम, मध्य प्रदेश

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

पायनियर
नई दिल्ली, शुक्रवार, 28 नवंबर 2025

नक्सलवाद पर अंतिम प्रहार

बिखरता नेटवर्क-टूटती कमर

भारत में वामपंथी उग्रवाद नक्सलवाद-माओवाद अब खात्मे की कगार पर है। इसको लेकर केंद्र की भाजपा सरकार की सटीक रणनीति और राज्य सरकारों के सही तालमेल से चल रहे अभियानों का नतीजा है कि जड़ें जमाए अपनी गतिविधियों को अंजाम दे रहे नक्सली संगठन या तो मटियामेट हो गए अथवा बचे-खुचे समूह और दुर्दांत नक्सलवादी आत्मसमर्पण कर चुके हैं। सरकार के अल्टीमेटम और सख्त वार्निंग के चलते नक्सलवादियों की भूमिगत टोलियां धीरे-धीरे सरेंडर करती जा रही हैं। नतीजा यह हुआ कि देश में नक्सलवाद अपने अंतिम दौर में पहुँच चुका है। केंद्र और राज्य सरकारों के संयुक्त अभियानों, सटीक खुफिया इनपुट, स्थानीय विकास योजनाओं और सुरक्षाबलों की लगातार कार्रवाई के कारण नक्सलियों का नेटवर्क लगभग बिखर चुका है। बीते एक-दो वर्षों में छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार, महाराष्ट्र और आंध्र-ओडिशा सीमा पर नक्सलियों का बड़े पैमाने पर आत्मसमर्पण हुआ। कई दर्जन कैडर अपने हथियारों के साथ पुलिस के सामने पेश हुए। इन आत्मसमर्पण करने वालों ने मुख्यधारा में लौटकर समाज और परिजनों के साथ नई शुरुआत का संकल्प लिया। सरकार की पुनर्वास नीति और सुरक्षा-सुधार कार्यक्रमों ने इस प्रक्रिया को तेज किया है। छत्तीसगढ़,मध्यप्रदेश सीमा पर बड़ी सफलता पुलिस को मिली है। सीमा क्षेत्र में लगातार सर्च-ऑपरेशन और जंगल क्षेत्रों में बनाए गए नए सुरक्षा कैंपों की वजह से उग्रवादी गतिविधियों में तेज कमी आई है। हाल ही में सात शीर्ष माओवादी मुठभेड़ में ढेर किए गए। कई ठिकाने नष्ट हुए,और हथियार-गोलाबारूद के बड़े भंडार बरामद किए गए।

बकौल प्रशासन- क्षेत्र में अब सक्रिय नक्सलियों की संख्या बहुत कम रह गई है। झारखंड का बोकारो और छत्तीसगढ़ का बस्तर नेटवर्क का तेजी से पतन हुआ है।यह राज्य और देश के लिए सुखद कह जाने वाली और रोमांचित करने वाली खबर है। बोकारो, सरायकेला-खरसावां,चाईबासा और सिंहभूम के घने इलाकों में नक्सलियों का दबदबा वर्षों तक रहा।लेकिन अबसुरक्षा बलों की चौकसी,सड़क निर्माण और ग्रामीण कनेक्टिविटी बढ़नेके कारण नक्सली संगठनों की पकड़ लगातार कमजोर हुई है। बस्तर जैसे क्षेत्रों में भीडीआरजी, सीआरपीएफ डिओबीआरए और बीएसएफके संयुक्त ऑपरेशन ने माओवादियों का नेटवर्क कई हिस्सों में लगभग ध्वस्त कर दिया है। विदित हो कि अमित शाह ने कहा था कि 2026 तक नक्सलवाद का पूर्ण खात्मा हो जाएगा। केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने हाल में स्पष्ट रूप से कहा है कि 2026 तक नक्सलवाद का पूरी तरह सफाया कर दिया जाएगा। अब उग्रवाद की अंतिम सांसें चल रही हैं।सरकार तीन मोर्चों पर काम कर रही है। सुरक्षा मोर्चा, तेज़ ऑपरेशन, नए कैंप, आधुनिक हथियारआदि में पुलिस सक्रियता दिखा रही है। शीर्ष नेतृत्व की लगातार मौत गिरफ्तारी और नये युवाओं की भर्ती लगभग बन्द होने के कारण नक्सलियों की कमर टूट गईं है। इसके बाद जनता का सहयोग कम होना,गांवों में सरकारी योजनाओं की पहुँच औरलगातार खुफिया और तकनीकी निगरानी से नक्सली निराश हुए है। भारत लंबे समय से चले आ रहे नक्सलवाद की समस्या को निर्णायक मोड़ पर पहुँचा चुका है। आत्मसमर्पण की तेज़ लहर, सक्रिय कैडरों में भारी गिरावट और सुरक्षा बलों की तगड़ी कार्रवाई ने यह स्पष्ट कर दिया है कि माओवादी आंदोलन अब अपने अंतिम चरण में है। यही हाल रहा तो 2026 तक इसका पूरी तरह सफाया हो जाएगा।

नीतीश कुमारः आदर्श से चले यथार्थ पर अटके

लालू राज से पीड़ित बिहारी उन्हें रहनुमा के तौर पर देखते हैं। वे बिहार के रहनुमा हैं भी। नीतीश ने अपने व्यक्तिगत जीवन में आदर्श से कभी समझौता नहीं किया।

डॉ चित्तरंजन कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिंदी विभाग
इलाहाबाद
विश्वविद्यालय

बीस साल के शासन काल में नीतीश कुमार दसवीं बार शपथ ले चुके हैं। बिहार की जनता ने उन्हें पांच शपथ के लिए अधिकृत किया था , उन्होंने उसे दस कर दिया। देखें तो औसतन हर दो साल में एक शपथ। इनमें से चार शपथ उनकी राजनैतिक महत्वाकांक्षा के हैं। एक शपथ सन 2000 का है। वे खुद ही त्यागपत्र देते हैं, खुद ही शपथ लेते हैं। पिछले बीस साल से बिहार की राजनीति के सारे सूत्र उनके ही हाथों में हैं। 2014 और 2024 के लोक सभा चुनाव के दौर में उपजी उनकी महत्वाकांक्षा ने उन्हें खूब दौड़ाया। वे बिहार भूल कर दिल्ली की ओर दौड़ पड़े और मुंह के बल गिरे। हर बार हार कर बीजेपी की ओर ही लौटे। जिससे टकराने चले थे इस शपथ ग्रहण के बाद उन्हीं नरेंद्र मोदी के पैर छूते हुए देखे गए। वे भूल गए थे कि उनकी पार्टी सिर्फ बिहार तक सीमित है । खैर। नीतीश बिहार की उम्मीद भी हैं आशंका भी। वे सुशासन पुरुष के रूप में जाने जाते हैं पर कब पलटी मार जाए कोई नहीं जानता। वे जितने सरल हैं उतने ही गूढ़ भी। हाथ मिलाते मिलाते हाथ मरोड़ने भी लगते हैं। कभी बीजेपी से हाथ मिलाते हैं कभी राजद से। वे अपने सारे विकल्प खुले रखते हैं। वे बिहार में पिछले बीस सालों से बने हुए हैं क्योंकि इतना करते हुए भी उन्होंने कभी क्राइम और करप्शन से समझौता नहीं किया । उनकी ईमानदारी उन्हें हर बार बचा लेती है। लालू राज से पीड़ित बिहारी उन्हें रहनुमा के तौर पर देखते हैं। वे बिहार के रहनुमा हैं भी।

बिहार की जनता ने उन्हें दसवीं बार सत्ता की चाभी सौंपी है। नीतीश ने अपने व्यक्तिगत जीवन में आदर्श से कभी समझौता नहीं किया। उनका बड़े से बड़ा दुश्मन भी नहीं कह सकता कि उन्होंने राजनीति में कभी पैसे का लेनदेन किया। ट्रांसफर पोस्टिंग करके पैसे कमाए । परन्तु आदर्शवादी नीतीश कुमार का हर आदर्श एक एक कर छूटता रहा। जिस लालू के विरोध में उन्होंने बिहार में नई पार्टी बनाई दो बार उन्हीं लालू यादव से गठजोड़ किया। किसी सैद्धांतिक आधार पर नहीं शुद्ध अवसरवाद के आधार पर। जबकि बीजेपी से उनका गठबंधन बहुत ही अच्छा चल रहा था। उन्होंने हमेशा राजनीति में वंशवाद का विरोध किया ।इस बार उनके सामने करीब दस नेता पुत्रों ने मंत्री पद की शपथ ली। वे आदर्श लेकर चले थे यथार्थ पर अटक गए। नीतीश कुमार की आलोचना करने से ज्यादा गंभीर सवाल यह है कि क्या राजनीति में आदर्श बार बार चूक जाता है। क्या राजनीति में आदर्श का पालन असंभव है। क्या आदर्श को चूकता देखकर मजबूरी में नीतीश कुमार ने यथार्थ का रास्ता अपना लिया 2014 में नीतीश कुमार ने इस्तीफा देकर जीतन राम मांझी को बिहार का मुख्यमंत्री बनाया था । मुख्यमंत्री बनते ही जीतन राम मांझी के तेवर बदल गए। वे खुद को पार्टी और नीतीश से ऊपर समझने लगे। अंततः नीतीश कुमार को उन्हें हटाना पड़ा। ठीक इसी प्रकार उन्होंने अपने अत्यंत विश्वस्थ आर सी पी सिंह को जेडीयू का अध्यक्ष बनाया। अध्यक्ष बनते ही आर सी पी सिंह ने भी जीतन राम मांझी की राह पकड़ी। नीतीश ने उन्हें भी चलता किया। उन्होंने जिस पर भरोसा किया उन्होंने उनसे दगाबाजी की। इन घटनाओं ने नीतीश कुमार के कोमल मन पर गहरे आघात किए। उनसे आदर्शवाद छूटता गया और यथार्थवाद हावी होता गया। कभी कभी मैं सोचता हूं अगर वे जेडीयू के नेता न होकर किसी राष्ट्रीय पार्टी के नेता होते तो क्या होता। क्या उनकी क्षत्रिय पार्टी की राजनैतिक मजबूरी ने उन्हें कभी आदर्शवाद पर टिकने नहीं दिया ? या उनकी राजनैतिक महत्वाकांक्षा ने उन्हें आदर्श से यथार्थ की ओर धकेल दिया?

अपने राजनैतिक जीवन में नीतीश कुमार ने तीन बड़े मौकों पर आदर्श का परिचय दिया। लालू यादव को मुख्यमंत्री बनवाने में उनकी बड़ी भूमिका थी। जब कुछ साल के अंदर ही लालू शासन में जातिवाद और भ्रष्टाचार हावी हो गया तो नीतीश कुमार लालू यादव से अलग हुए और उन्होंने जॉर्ज फर्नांडिस के साथ मिलकर समता पार्टी बनाई। अपने भ्रष्ट होते साथी को छोड़कर उन्होंने नैतिक होने का परिचय दिया। वे चाहते तो लालू के साथ मिलकर सत्ता की मलाई खा सकते थे। उन्होंने लालू राज के लूट और जंगलराज से खुद को अलग कर लिया। 2005 आते आते इन्हीं कारणों से वे बिहार की उम्मीद बन चुके थे। गायसल रेल दुर्घटना की नैतिक जिम्मेदारी लेते हुए उन्होंने रेल मंत्री के पद से इस्तीफा देकर अपने नैतिक होने का दुबारा सुबूत दिया ।सन 2014 के लोक सभा चुनाव में उन्होंने बीजेपी से गठबंधन तोड़ लिया था और उनकी पार्टी औंधे मुंह गिरी। नीतीश कुमार ने इस हार की नैतिक जिम्मेदारी ली और मुख्यमंत्री के पद से इस्तीफा देकर जीतन राम मांझी को बिहार का मुख्यमंत्री बना दिया। पत्नी को मुख्यमंत्री बनवाने वाले राज्य में उन्होंने एक दलित को मुख्यमंत्री बना कर बहुत बड़ा संदेश दिया। यह तीसरी बार था जब उन्होंने राजनीति में आदर्श का परिचय दिया। इसमें कोई शक नहीं कि नीतीश कुमार देश के उन चुनिंदा राजनेताओं में हैं जिनकी मिशाल दी जा सकती है। वे जय प्रकाश नारायण के सबसे योग्य शिष्यों में से एक हैं। जय प्रकाश नारायण और राम मनोहर लोहिया के ज्यादातर शिष्य सत्ता लोलुप और वंशवाद के पक्षधर निकले। नीतीश कुमार अब तक इन दोषों से मुक्त हैं, यह बहुत बड़ी बात है। नीतीश कुमार के अलावा इस चुनाव में अगर प्रधानमंत्री मोदी की चर्चा न की जाए तो बात अधूरी रहेगी। 2025 के बिहार विधानसभा चुनाव ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अजेय छवि पर फिर मुहर लगा दी। हरियाणा , महाराष्ट्र, दिल्ली और बिहार जीत कर बीजेपी ने 2024 के लोकसभा झटके को शून्य कर दिया। भारतीय जनता पार्टी के पास केंद्रीय नेतृत्व भी है और संगठन भी। विचारधारा के स्तर पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का बेहद मजबूत वैचारिक आधार है। आज की तारीख में कांग्रेस के पास इनमें से कुछ नहीं है। राहुल गांधी का चेहरा निस्तेज हो चुका है। संगठन में अंदरूनी खींचतान है। विचाधारा के नाम पर कांग्रेस वामपंथी पार्टियों की कार्बन कॉपी बन गई है। शिथिल नेतृत्व और भ्रमित विचारधारा के साथ कांग्रेस का जितना लगभग मुश्किल है। बंगाल, गुजरात, बिहार और उत्तर प्रदेश जैसे बेहद महत्वपूर्ण राज्यों में कांग्रेस करीब तीस साल से सत्ता से बाहर है। वह गठबंधन के साथियों के लिए बोझ बनती जा रही है। हरियाणा, राजस्थान और मध्य प्रदेश मे कांग्रेस पार्टी आंतरिक राजनीति का शिकार है। राहुल गांधी के हफ्ते दस दिन के दौरे से किसी राज्य में कांग्रेस की स्थिति नहीं बदलने वाली। वहीं बिहार जीत के तुरंत बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए कहा गंगा बिहार से बहते हुए बंगाल तक जाती है। बीजेपी एक चुनाव के तुरंत बाद दूसरे चुनाव की तैयारी में जुट जाती है। बिहार के तुरंत बाद पार्टी ने बंगाल चुनाव की तैयारी शुरू कर दी।

बिहार चुनाव के दौरान महिलाओं के खाते में भेजे गए दस दस हजार रुपयों की अब बहुत चर्चा हो रही है। निश्चित तौर पर यह निर्णय कारगर साबित हुआ। हार के बाद विपक्ष इसे वोट की खरीद मान रहा है लेकिन क्या विपक्ष का यह आरोप सही है। क्या सरकार ने आचार संहिता लगने के बाद महिलाओं के खाते में दस हजार की राशि भेज कर नैतिक अपराध किया । वस्तुत चुनाव की घोषणा से पूर्व घोषित योजनाओं के लिए ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है। इसे झारखंड विधान सभा चुनाव के संदर्भ से जोड़ कर देखने की जरूरत है। वर्ष 2024 में झारखंड में विधानसभा चुनाव हुए वहां एनडीए गठबंधन की हार हुई और इंडिया गठबंधन को जीत मिली । जहां तक मुझे याद आता है 15 अक्टूबर 2024 को झारखंड चुनाव की घोषणा की गई थी और आचार संहिता प्रभावी हो गया। हेमंत सोरेन ने इस तारीख के एकदम पहले मुख्यमंत्री मईया सम्मान योजना की क़िस्त राशि सभी महिलाओं के खाते में भेजी थी। बात सिर्फ इतनी ही नहीं थी । झारखंड में चुनाव 13 नवंबर 2024 को हुए . चुनाव के ठीक 2 से 3 दिन पहले हेमंत सोरेन सरकार ने सभी महिलाओं के खाते में मईया योजना की चौथी क़िस्त की राशि भेजी। साथ में यह ऐलान भी किया कि जीत के बाद यह राशि 2500 रुपये हो जाएगी. झारखंड में करीब अठावन लाख महिलाओं को इसका लाभ मिला। तब, हेमंत सोरेन के नेतृत्व वाले गठबंधन जिसमें राजद भी शामिल था उसके किसी नेता ने यह बयान नहीं दिया कि यह गलत है। किसी ने नही कहा कि हेमंत सोरेन पैसे देकर महिलाओं का वोट खरीद रहे हैं.नीतीश कुमार ने चुनाव की घोषणा से ठीक पहले बिहार में झारखंड वाला अचूक दांव चल दिया। नीतीश कुमार खाँटी समाजवादी नेता हैं, मार्क्सवादी नहीं। उन्होंने वक्त रहते जाति की सच्चाई को भाप लिया और बिहार में पिछड़ों के समानांतर अति पिछड़ी जातियों को गोलबंद किया। मुख्यमंत्री बनते ही उन्होंने महादलित की श्रेणी बना दी। ऐसा करके उन्होंने अति पिछड़ी और दलित जातियों का बड़ा आधार तैयार किया। लालू यादव के मुस्लिम यादव गठजोड़ के बरक्स नीतीश कुमार का यह गठजोड़ व्यापक था। जंगलराज, अपहरण, जातीय नरसंहार और भाई भतीजावाद से त्रस्त बिहार में नीतीश कुमार एक उम्मीद बनकर आए। उन्होंने मुख्यमंत्री बनते ही बड़े सामाजिक व आर्थिक सुधार किए। शाम होते ही अपने अपने घरों में दुबक जाने वाला बिहार उनके मुख्यमंत्री बनते ही आजाद महसूस करने लगा। साइकिल पर सवार होकर स्कूल जाती लड़कियों ने बिहार की तस्वीर बदल दी। उन्होंने अपराध और गुंडाराज की आंधी को अपने फौलादी इरादे से थाम लिया। बीस साल के शासन काल में नीतीश कुमार ने कानून व्यवस्था से कभी समझौता नहीं किया। अपराध को लेकर उन्होंने हमेशा ज़ीरो टॉलरेंस की नीति अपनाई। लालू के दौर में त्रस्त हो चुका बिहार इसी कारण बार बार नीतीश की ओर उम्मीद से देखता है। नीतीश ने सुशासन को अपना लक्ष्य बनाया और इस मुहिम में उन्हें भारतीय जनता पार्टी का भरपूर साथ मिला। पटना में सुशील मोदी और दिल्ली में लाल कृष्ण आडवाणी एवं अरुण जेटली ने उन्हें शुरू से गठबंधन की सारी परेशानियों से मुक्त रखा। सन 2005 से 2010 तक का उनका पहला कार्यकाल वाकई शानदार था। इस दौर में उनका यश मध्याह्न के सूर्य की तरह चमक रहा था।

नीतीश कुमार का मूल्यांकन 2025 में खड़े होकर नहीं किया जा सकता। नीतीश के मूल्यांकन के लिए हमें 2005 से पहले के बिहार में लौटना होगा। जहां जातीय हिंसा और अपहरण रोजमर्रा की सच्चाई बन चुके थे। बाड़ा नरसंहार 1992, बथानी टोला नरसंहार 1996, शंकर बीघा नरसंहार 1999, सेनारी नरसंहार 1999 जैसे नर संहारों से पूरा बिहार थर्रा उठा था।

खतरे की घंटी हैं अपराध की राह पर बढ़ते किशोर

पढ़ने की उम्र में नाबालिग अपराध की दुनिया में कदम बढ़ा रहे हैं। चोरी, लूटपाट ही नहीं, लोगों का खून बहा रहे हैं। सगे संबंधी पडोसी और परिचित के साथ भी वारदात करने में उनको जरा भी हिचक नहीं हो रही। कई नाबालिग अपराधी तो ऐसे हैं, जो बाल सुधार गृह जाकर भी नहीं सुधर रहे

मनोज कुमार अग्रवाल

हापुड़ (यूपी) में एक किशोर बेटे ने अपने दो दोस्तों की मदद से किसान पिता की गोली मारकर हत्या कर दी और वारदात को आत्महत्या का मामला बता दिया। अब पुलिस जांच में पाया गया है कि पिता का कुसूर इतना था कि इकलौते बेटे की किसी गलती पर पिटाई की थी जिसका अंजाम बेटे ने पिता को खेत पर बुला कर गोली से उड़ा दिया। यह वारदात बता रही है कि समाज में नाबालिग मन मस्तिष्क कितने शातिर ढंग से अपराध कर रहे हैं।

पिछले कुछ माह में राजधानी दिल्ली के मुंडका में नाबालिग की गला रेतकर हत्या। फर्श बाजार में73 वर्षीय बुजुर्ग की चाकू घोंपकर हत्या। आनंद पर्वत में बदले के लिए युवक की हत्या। जहांगीरपुरी में वर्चस्व कायम करने के लिए युवक की हत्या। इन सभी हत्याओं का जिक्र कर रहे हैं, इन सभी को 14 से 17 साल के बीच के नाबालिग लड़कों ने अंजाम दिया। जिस उम्र में कंधे पर बस्ता और हाथों में कलम होना चाहिए, उसी उम्र में नाबालिग अपराध की दुनिया का रुख कर रहे हैं। इसके पीछे कारण चाहे कुछ भी हो, लेकिन पुलिस के लिए यह नाबालिग मुसीबत बन गए हैं। पढ़ने की उम्र में नाबालिग अपराध की दुनिया में कदम बढ़ा रहे हैं। चोरी, लूटपाट ही नहीं, लोगों का खून बहा रहे हैं।सगे संबंधी पडोसी और परिचित के साथ भी वारदात करने में उनको जरा भी हिचक नहीं हो रही। कई नाबालिग अपराधी तो ऐसे हैं, जो बाल सुधार गृह जाकर भी नहीं सुधर रहे। वह वहां से बाहर आने के बाद अपराध के क्षेत्र में फिर से सक्रिय हो रहे हैं।बीते दिनों दिल्ली के विजय विहार इलाके में लूट का विरोध करने वाले एक ऑटो चालक की निर्ममहत्या में पांच नाबालिगों की गिरफ्तारी गंभीर चिंता बढ़ाने वाली है। देश में नाबालिगों के बालिगों की तर्ज पर गंभीर अपराधों को अंजाम देने की घटनाएं लगातार बढ़ती जा रही हैं। वहीं दिल्ली की घटना में गिरफ्तार किशोरों की स्वीकारोक्ति डराने वाली है कि वे नशे के आदी हैं और पैसे जुटाने के लिये लूटपाट जैसे अपराधों में लिप्त रहते हैं। यह घटना हमारे समाज में पनप रही विकृतियों की ओर इशारा कर रही है सीलमपुर में 13 वर्षीय करण की हत्या इसका स्पष्ट उदाहरण है। यह समाज के लिए चिंता की बात है। जघन्य अपराधों में संलिप्त नाबालिगों को लेकर कानून लचर होने के कारण यह दुस्साहस बढ़ रहा है। नाबालिग अपराधियों के हाथों जिनके अपने मारे गए, वह कानून में बदलाव के जरिये सख्ती करने की मांग कर रहे हैं।

जाफराबाद में 11 जुलाई 2024 को भाई व दोस्त के साथ कपड़े खरीद रहे 15 वर्षीय मोहम्मद फैज की दुकान से बाहर निकाल बीच बाजार में गोली मार कर हत्या कर दी थी। इस वारदात को नाबालिग शमिल था। उसे पुलिस ने पकड़ कर बाल सुधार गृह भेजा था। अब वह बाहर है। बालिग हो चुका है और हाल में उत्तर पूर्वी जिला पुलिस ने उसे एक अन्य अपराध के मामले में गिरफ्तार किया है। आरोपित गैंग्स्टर बन चुका है। मृतक के पिता मोहम्मद गुफरान का कहना है कि यह न्यायोचित नहीं है कि हत्या जैसा गंभीर अपराध करने वाले को इस बात पर रहम दे दिया जाए कि वह नाबालिग है। न्यू सीलमुर के 17 वर्षीय कुणाल की इसी वर्ष 17 अप्रैल को हत्या कर दी गई थी। इस वारदात में दो नाबालिग शामिल थे, जिन्हें पुलिस ने पकड़ा था। कुछ ही महीनों में वह

बाल सुधार गृह से बाहर आ गए। अब वह खुली हवा में सांस ले रहे हैं।यह स्थिति देख कर कुणाल के स्वजन का दम घुट रहा है। उसकी मां प्रवीन अब न्याय की उम्मीद छोड़ चुकी हैं। अब वक्त आ गया है कि किशोर अपराधों पर अंकुश लगाने के लिये सख्त कानूनों के प्रावधान हों।

इसकी वजह यह है कि किशोरों को अपराध करने के बाद सामान्य जेलों में रखने के बजाय बाल सुधार गृहों में भेज दिया जाता है। लेकिन बाल सुधार गृहों में रहने के दौरान भी ऐसे अपराधी किशोरों में बड़ा बदलाव नजर नहीं आता। अक्सर देखा जाता है कि बाल सुधार गृहों में रहने की सीमित अवधि के बाद कई किशोर फिर अपराधों की दुनिया में उतर जाते हैं। समाज विज्ञानियों का मानना है कि किशोर अपराधों को लेकर कानून के अस्पष्ट और लचर होने की वजह से भी दोषियों को दंडित नहीं किया जा सकता। अक्सर कहा जाता है कि नाबालिगों की सजा के मामले में अभियुक्त की उम्र को घटा दिया जाए। दरअसल, बदलते परिवेश में समय से पहले किशोरों मेंवयस्कों की नकारात्मक प्रवृत्तियां पनपने लगी हैं। जिसके चलते वे बड़ों के जैसे अपराध तो करते हैं।

लेकिन उन्हें उस अनुपात में सजा नहीं दी जा सकती। वैसे यह भी हकीकत है कि किशोरों के सामने लंबा भविष्य होता है। यदि परिस्थितिवश या मजबूरी में वे कोई अपराध करते हैं तो उन्हें सुधरने का मौका दिया जाना चाहिए। वैसे भी दंड का अंतिम उद्देश्य व्यक्ति में सुधार ही होता है। किशोर सजा काटने के बाद भी लगातार अपराध की दुनिया में सक्रिय रहते हैं तो उसके लिये दंड के सख्त प्रावधान होने चाहिए। वहीं, अपराध के मूल में आर्थिक विषमताएं भी हैं, जिसके चलते वे पढ़- लिख नहीं पाते हैं। लेकिन हाल के वर्षों में तमाम सामाजिक विद्रूपताएं भी किशोर मन में नकारात्मकप्रभाव डाल रही हैं। जैसेकि दिल्ली की घटना में लिप्त किशोरों ने स्वीकारा कि वे नशे के आदी हैं,यह घटना हमारे समाज में नशे के नासूर से उपजे संकट की ओर इशारा करती है। ऐसे में नशे परअंकुश के साथ ही उन सामाजिक विसंगतियों पर नजर रखने की जरूरत है जो किशोर मन के भटकाव को जन्म देती हैं। भारतीय समाज में जीवन मूल्यों का तेजी से होता पतन भी एक वजह है। किशोरों को नैतिक शिक्षा का पाठ सही ढंग से न स्कूलों में मिल पा रहा है और न ही घरों में। इस संकट का एक बड़ा पहलू इंटरनेट पर जहरीली व अश्लील सामग्री की प्रचुरता भी है। अक्सर किशोरों द्वारा भी इंटरनेट पर अश्लील सामग्री देखने के बाद यौन हिंसा को अंजाम दिया जाता है। ऐसे में बच्चों को संस्कार स्कूल और घर के बजाय मोबाइल से मिल रहे हैं। लेकिन इतना तय है कि सोशल मीडिया व इंटरनेट से जुड़े विभिन्न माध्यमों में परोसी जा रही विषैली सामग्री बाल मन पर बुरा असर डाल रही है। ऐसे में नशा, अश्लीलता और अपराध उन्मुख कार्यक्रम किशोरों को अपराध की गलियों में गुजरने के लिए उकसा रहे हैं। बहरहाल, अब समय आ गया है कि नीति-नियंताओं को विचार करना चाहिए कि हत्या-बलात्कार जैसे जघन्य अपराधों में लिप्त किशोरों के लिये कैसे कानून बनें। निश्चय ही कानून का मकसद किसी अपराधी में सुधार ही होना चाहिए। लेकिन इस छूट को सजा से छूट का हथियार बनने देने से भी रोकना चाहिए। कानून में समय परिस्थितियों की मांग केअनुसार परिवर्तन और सुधार करने की जरूरत है अब ऐसे गिरोह भी सक्रिय हैं जो नाबालिगो कोकच्चा लालच देकर हायर कर संगीन वारदातों को साजिशन अंजाम दिला रहे हैं। बड़े गैंगस्टर भीइनको वारदातों को अंजाम देने के लिए इस्तेमाल करते हैं। कुछ साल पहले चार नाबालिग लड़कों ने कड़कड़डूमा कोर्ट में जज के कमरे में घुसकर गैंगस्टर इरफान उर्फ छेनू पर हमला करवा दिया था। इन लोगों ने छेनू को पांच गोली मारी, लेकिन उसके बाद भी वह जिंदा बच गया। हमले में दिल्ली पुलिस का एक हवलदार इन नाबालिगों की गोली लगने से मारा गया था। बाद में पता चला था कि छेनू के विरोधी नासिर ने इन नाबालिग शूटरों का इंतजाम किया था। इसके बाद से लगातार इन नाबालिगों के इस्तेमाल का तेजी से ट्रेंड बढ़ गया। मौजूदा समय में बदमाश लगातार वारदातों को अंजाम दे रहे हैं। जरूरत इस बात की है कि नाबालिगो की परवरिश के लिए समाज में स्वस्थ माहौल की स्थापना की जाए उनके भीतर नैतिकता रोपी जाए ताकि बचपन भविष्य का अपराधी बनने से बचाया जा सके।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं पिछले 38 वर्ष से लेखन और पत्रकारिता से जुड़े हैं)

आप की बात

प्रशासनिक दावों की वास्तविकता उजागर

मध्य प्रदेश के गुना जिले में खाद के लिए लगी अंतहीन कतारों ने एक बार फिर प्रशासनिक दावों की वास्तविकता उजागर कर दी है। बमोरी विधानसभा क्षेत्र के बागेरी डबल लॉक केंद्र पर किसानों की भीड़ लगातार बढ़ रही है और हालात यह हैं कि अन्नदाता दो-दो दिन लाइन में खड़े रहने और कड़कड़ाती ठंड में खुले आसमान तले रात गुजारने को मजबूर हैं। कुशेपुर गांव की 45 वर्षीय आदिवासी महिला भुरिया बाई भी इन्हीं हजारों परेशान किसानों में से एक थीं, जो बेहतर खेती की उम्मीद में दो दिन से खाद का इंतजार कर रही थीं। लेकिन बुधवार की देर रात अचानक तबीयत बिगड़ी, उल्टियां शुरू हुईं और उन्हें पहले बमोरी अस्पताल और फिर गुना के निजी अस्पताल ले जाया गया, जहां डॉक्टरों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया। यह घटना केवल एक महिला की मौत नहीं, बल्कि उस व्यवस्थागत विफलता का प्रतीक है जिसने किसानों को सबसे कमजोर स्थिति में धकेल दिया है। प्रशासन भले ही खाद की पर्याप्त उपलब्धता का दावा कर रहा हो, लेकिन बागेरी केंद्र की तस्वीरें इसके विपरीत कहानी कहती हैं। अगर खाद की कोई कमी नहीं है, तो फिर किसान दो-दो रातें ठिठुरते हुए कतार में क्यों खड़े हैं? क्यों उन्हें बीज और खाद के लिए दर-दर भटकना पड़ रहा है? और आखिरकार क्यों एक महिला की जान सिर्फ इसलिए चली गई कि वह खेत के लिए जरूरी खाद समय पर प्राप्त नहीं कर सकी?

ऋषि सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम. मप्र

छात्रों में बढ़ती आत्महत्या की प्रवृत्ति चिंतनीय

एक समाचार व राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) ने 2023 में छात्रों द्वारा की गई आत्महत्या के आंकड़े 15 हजार से अधिक बताये. जिस पर सरकार की चिंता भी बढ़ गई है. छात्रों में सबसे अधिक दबाव पढ़ाई का होता जा रहा है. जहाँ बच्चे घर से दूर हॉस्टलों में रहकर कोचिंग में अध्ययन कर रहे हैं. पहले राजस्थान में कोचिंग कर रहे बच्चों में उच्च शिक्षा हेतु पढ़ाई के दबाव की ख़बरें आती रही हैं. अब मध्यप्रदेश के भोपाल व इंदौर में ऐसी मनहूस ख़बरों इजाफा होता जा रहा है. उच्च शिक्षा, उच्च पदों (आईएएस/आईपीएस/अन्य) पर जाने हेतु कोचिंग के छात्रों द्वारा की जा रही आत्महत्या के आंकड़े ही ज्यादातर सामने आ रहे हैं. इसके साथ ही देशभर में भी ये आंकड़े बध्दति जा रहे हैं. सबसे बड़ा कारण पढ़ाई का तनाव, दूर दराज से आकर हॉस्टलों में रहना, पेरेंट्स की अति ख्वाइश, खर्च का बोझ, छात्रों में प्रतिस्पर्धा का दबाव, बढ़ती बेरोजगारी और येनकेनप्रकारेण सरकारी नौकरी की चाहत शिक्षित विद्यार्थियों के लिए गले की घंटी बनती जा रही है और साथ ही अभिभावकों के लिए भी अपने बच्चों को उच्च शिक्षा और उच्च पद पर देखने की लालसा इसमें और अधिक घर करती जा रही है. जो दूर दराजों में रह रहे बच्चों के लिए आफत बनती जा रही है. जबकि ऐसे में बच्चों को "मॉरल सपोर्ट" देना अधिक जरुरी है.

शकुंतला महेश नेनावा, 57, गिरधर नगर, इंदौर (म.प्र.)

ऐसी सोच वाला व्यक्ति प्रशासनिक सेवा के लिए योग्य नहीं

आईएएस अधिकारी संतोष वर्मा का आरक्षण पर यह बयान कि' जब तक ब्राहमण जब तक अपनी बेटी दान न करे तब तक आरक्षण जारी रहना चाहिए ' एक हैय एवं कुंठित मानसिकता का परिचायक है। ऐसी सोच वाला व्यक्ति का प्रशासनिक सेवा के लिए योग्य नही हो सकता । एक प्रशासनिक अधिकारी के कार्यो में बहुधा कानून और नीतियों का प्रवर्तन का कार्य भी होता है। वह कानून को लागू करने के लिए जिम्मेदार होते हैं। उससे यह अपेक्षा की जाती है कि उसके निर्णय और फैसले निष्पक्ष और मनमानी से दूर रहेंगे । क्या इस प्रकार की मानसिकता वाला पक्षपात और पूर्वाग्रह से मुक्त फेसला दे सकेगा? ऐसी मानसिकता वाला व्यक्ति सामाजिक समरसता को आघात पहुंचाकर जातिगत वैमनस्य को बढ़ावा दे रहा है। आज के युग में हम अनेक अंतर्जातीय विवाह देखते ही है उनमें आरक्षण के होने न होने का कोई मतलब ही नहीं है। एससीएसटी एवं अवाक्स नेताओ तथा प्रशासनिक अधिकारीयो के संगठन को वर्मा के इस बयान की भर्त्सना करनी चाहिए तथा शासन को भी कड़ी कार्रवाई करना चाहिए। हाल ही में सेना के एक अधिकारी को कर्तव्य निर्वहन के समय धर्म को बीच में लाने पर बर्खास्त किया गया था। प्रशासनिक अधिकारीयो पर भी ऐसे मामलो में ऐसी ही कार्रवाई होनी चाहिए।

विमलेश पगारिया, बदनावर म.प्र.

टेस्ट क्रिकेट की सबसे बड़ी निराशाजनक पराजय

अपने ही घर में, अपने ही मैदानों पर प्रिंस शुभमन गिल की अगुवाई वाली भारतीय क्रिकेट टीम जब कोलकाता के ईडन गार्डेन्स में दक्षिण अफ्रीका के हाथों खेले गए पहले टेस्ट में तीसरे ही दिन बुरी तरह पराजित होकर पवेलियन लौटी थी, तभी से क्रिकेट के जानकारों ने यह साफ कर दिया था कि गुवाहाटी में खेले जाने वाले दूसरे टेस्ट में भी अफ्रीकी गेंदबाजों की रफ़्तार के आगे भारतीय टीम ताश के पत्तों की तरह बिखर जाएगी। लेकिन इतनी बुरी तरह बिखर जाएगी, ऐसी कल्पना शायद क्रिकेट के पंडितों ने भी नहीं की थी ! खेलों में हार और जीत चलती रहती है, लेकिन संघर्ष करके हारने वाली टीम अक्सर जीतने वाले से भी अधिक सम्मान पाती है। लेकिन भारतीय टीम के साथ विडंबना यह है कि चाहे हार हो या जीत—दोनों ही परिस्थितियों में रिकॉर्ड अपने नाम करने का गजब हुनर है ! गुवाहाटी टेस्ट हार जाने के बाद भी भारत के नाम टेस्ट क्रिकेट में 408 रनों से हार का सबसे बड़ा कीर्तिमान अपने नाम दर्ज हो गया है। विराट कोहली, रोहित शर्मा और अश्विन के संन्यास के बाद भी टीम इंडिया के पास बेहतरीन खिलाड़ी मौजूद थे, लेकिन नए अनुभवहीन कप्तान और कोच गंभीर के अकड़पन के चलते भारतीय टीम के खिलाड़ियों को मैदान में कभी खुलकर खेलने का मौका ही नहीं मिला।

अरविंद रावल 51 गोपाल कॉलोनी झाबुआ म.प्र.

पाठकगण अपने विचार responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1